॥ चौपाइ ॥

मातृ-भुक्त अन्नादिक खाथि। वर्धित गर्भ विकल पछताथि॥ ४४॥
पूर्व जन्म मन पड़लय ताप। देखल विविध माय ओ बाप॥ ४५॥
विविध भक्ष्य नाना-स्तन-पान। कयल कतहु नहि पावल ज्ञान॥ ४६॥
कति बेरि विधि-कृत धारण देह। प्रज्ञा हरल विषय-मध नेह॥ ४७॥
मिलि कुटुम्ब मे भेलहुँ प्रचण्ड। गर्भवास मे कर्म्मक दण्ड॥ ४८॥
कयल सकल हम अनुचित काज। विषयि कुटुम्बक सङ्ग समाज॥ ४९॥
नाना योनि विविध व्यवहार। कयल न भल मन कतहु विचार॥ ५०॥
अनुभव कत दुख योनि कुयन्त्र। करिय यहन हम सम्प्रति मन्त्र॥ ५१॥
साङ्ख्य-योग सौँ करब न आन। जौँ करता बाहर भगवान॥ ५२॥
गर्भवास सौँ बाहर भेल। स्मरण-ज्ञान माया हरि लेल॥ ५३॥
आत्मा सभ तन सौँ छथि आन। से जानथि जनिकाँ दृढ़ ज्ञान॥ ५४॥
होथि चिदात्मा जौँ परिज्ञात। मोह तिमिर हर भानु प्रभात॥ ५५॥
सुख दुख ज्ञानी सम मति मान। देह-स्थिति प्रारब्ध प्रमाण॥ ५६॥

में बढ़ते हुए वह पश्चात्ताप करता रहता है। ४४ जब उसे पूर्वजन्म की बात याद आती है तब बड़ा सन्ताप होता है। कितनी माताओं और कितने पिताओं को देखा, ४५ कितने तरह के भोजन पाए, कितने स्तनों में दुग्ध-पान किया, पर कहीं भी ज्ञान न प्राप्त हुआ। ४६ विधिवश कितनी बार शरीर धारण किया। किन्तु भोग की वस्तुओं में आसक्ति के कारण ज्ञान लुप्त रहा। ४७ परिवार के लोगों में मिलकर पागल-सा हो गया। अपने कर्मों की सजा के रूप में बार-बार गर्भवास मिलता रहा। ४८ मैंने सभी अनुचित कर्म किये। विषय में लिप्त परिवार के लोगों के साथ रहा। ४९ अनेक योनियों में तरह-तरह का आचरण किया। मन में वास्तविक कल्याण की बात कभी नहीं सोची। ५० जब योनि के घरे में भारी कष्ट का अनुभव होता है तब मैं ऐसा संकल्प करता कि ५१ यदि मुझे ईश्वर इस गर्भ से बाहर कर देंगे तो सांख्ययोग के अभ्यास के सिवा और कुछ नहीं करूँगा। पर, ज्योंही गर्भ से बाहर निकल जाता कि माया में पड़ सारी स्मरणशक्ति खो बैठता। ५२-५३ आत्मा शरीर से भिन्न है यह बात वही समझते हैं जिनको दृढ़ ज्ञान रहता है। ५४ यदि चैतन्य-स्वरूप आत्मा का ज्ञान भलीभाँति हो जाए तो मोह रूपी अन्धकार उसी प्रकार दूर हो जाता है जिस प्रकार सुबह में सूरज का उदय होने पर अँधेरा दूर हो जाता है। ५५ ज्ञानवान् लोगों को सुख और दुख दोनों में समान अनुभव होता है। शरीर का होना प्रारब्ध (पूर्वकृत कर्म) का प्रतिफल है। ५६ शरीर ही मैं हूँ, ऐसा मिथ्या ज्ञान दुख का कारण है।

देह थिकहुँ हम ई अध्यास। दुखदायक कर नर क विनाश ॥ ५७ ॥
कञ्चुक कञ्चुकि बुझ निज काय। कञ्चुक-रहित न ततय समाय ॥ ५८ ॥
रहू अहाँ प्रारब्ध विचार। मिथ्या मानू ई संसार ॥ ५९ ॥

॥ सवैया ॥

दण्डक-वन रावण-वध कारण, जनकनन्दिनी लक्ष्मण सङ्ग ॥ ६० ॥
अयोता करता माया-मानुष, लीला-मारीचक तन भङ्ग ॥ ६१ ॥
रावण तस्कर बनि सीताकाँ, हरता तनि अन्वेषण काज ॥ ६२ ॥
सुग्रीवक प्रेषित वानर सभ, अयोता जखना अँहक समाज ॥ ६३ ॥
तनिका सभकाँ अहाँ कहब सब, सीता छथि लङ्का जेहि देश ॥ ६४ ॥
नव नव कोमल पक्ष अहाँकाँ, अनायास होएत गय बेश ॥ ६५ ॥
भेल सत्य जे कहल चन्द्रमा, देखू सभ जन जनमल पाँखि ॥ ६६ ॥
हम जाइत छी दश दिन बितलय, दशमुख-दुर्गति देखब आँखि ॥६७॥

॥ रूपमाला ॥

नाम जपि जपि जनिक जन, भव-जलधि उतरथि पार ॥ ६८ ॥
तनिक दूत अहाँ सबहिकाँ सिन्धु कति बिस्तार ॥ ६९ ॥

यही अज्ञान मनुष्य का विनाश करता है। ५७ केंचुआवाला साँप केचुए को अपना शरीर समझ लेता है; जब केचुए को निकाल देता है, तब उस केचुए में फिर घुसता नहीं है। ५८ आप प्रारब्ध को समझिए और इस संसार को अवास्तविक मानिए। ५९ चन्द्रमा ऋषि ने कहा था— जब रावण का वध करने के लिए सीता और लक्ष्मण के साथ राम दंडकवन आयेंगे, माया-मानव की लीला करेंगे और मारीच का वध करेंगे, ६०-६१ फिर रावण चोरी से सीता का हरण करेगा, उनको ढूँढ़ते हुए सुग्रीव द्वारा भेजे गये कपिगण आपके पास आएँगे, ६२-६३ और आप उन सबों को बताइएगा कि लंका में सीता कहाँ हैं; तब आपको यों ही नई-नई कोमल पाँखें फिर हो जाएँगी। ६४-६५ उन ऋषि चन्द्रमा का कथन सत्य हुआ। आप सभी लोग देखिए, मेरी पाँखें फिर पैदा हो गयी हैं। ६६ मैं दस दिन बिताने जाता हूँ। दशमुख रावण की दुर्गति मैं अपनी आँखों से देखूँगा। ६७ जिनका नाम जप-जपकर लोग भवसागर पार करते हैं, उन्हीं के दूत आप सबों के लिए यह समुद्र कौन-सा बड़ा है। ६८-६९ साहस कीजिए,

यत्न करु जलराशि सन्तरु, देखि सीता आउ ॥ ७० ॥
कहल जे सन्देश प्रभु से, सकल सुचित शुनाउ ॥ ७१ ॥

॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा-रामायणे किष्किन्धाकाण्डे अष्टमोऽध्यायः ॥

॥ अथ नवमोऽध्यायः ॥

॥ चौपाइ ॥

सम्पातिक सभ जनमल पाँखि। सभ जन वानर देखल आँखि ॥ १ ॥
ओ खग मुदित गगन-पथ गेल। वानर सभ मन हर्षित भेल ॥ २ ॥
दुर्ग जलधि सन्तरण विचार। अछि अगम्य के जायत पार ॥ ३ ॥
अङ्गद कहल अहाँ सभ गोट। प्रबल शूर सभ सुयश न छोट ॥ ४ ॥
राज-काज मन दय के करत। ई जलनिधि कहु कहु के तरत ॥ ५ ॥
रघुपति कपिपति पालक हयत। निर्भय लङ्कापुर जे जयत ॥ ६ ॥
सुनल सर्व्व जन रहल अवाक। सभक परस्पर मुह सभ ताक ॥ ७ ॥
उचित न यहि अवसर चुपचाप। कहक अपन बल करक प्रताप ॥ ८ ॥
वानर सकल अपन बल कहल। अभ्यन्तर किछु गड़बड़ रहल ॥ ९ ॥

समुद्र को पार कर जाइए और सीता को देख आइए, और ७० प्रभु राम ने जो सन्देश सुनाने को कहा है वह भलीभाँति सुना आइए।" ७१

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में किष्किन्धाकाण्ड का आठवाँ अध्याय समाप्त ॥

नौवाँ अध्याय

हनुमान को लंका विदा करना

सम्पाति की सभी पाँखें उग आयीं, यह सभी कपियों ने अपनी आँखों से देखा। १ पक्षी सम्पाति आकाश-मार्ग से उड़कर चले गये। कपियों का मन हर्षित हुआ। २ अब दुर्गम समुद्र को पार करने का प्रश्न आया। यह तो अगम्य है, इसे कौन पार करेगा। ३ अंगद ने कहा—"आप सभी बड़े-बड़े शूर हैं। आप सबों का बड़ा नाम है। ४ राजा का यह काम मन से कौन करने को तैयार है? इस समुद्र को कौन पार कर सकता है? ५ जो निर्भय हो लंकापुरी जाएगा वह राम और सुग्रीव दोनों की रक्षा करनेवाला होगा।" ६ सबों ने सुना और सुनकर चुप रह गये। सभी सबों के मुँह जोहने लगे। ७ यह देख अंगद ने कहा—"ऐसे मौक़े पर चुप्पी साधना उचित नहीं होगा। सभी अपना-अपना बल बताएँ कि कौन कितनी करामात दिखा सकते हैं?" ८ सभी वानरों ने अपना-अपना बल बताया, पर बीच में कुछ

तखन कहल अङ्गद युवराज। लङ्का जाय करब प्रभु-काज॥ १०॥
शतयोजन जलनिधिकाँ मानि। जायब मनमे होइछ हानि॥ ११॥
किछु गड़बड़ सन घुरती बेरि। आयब शीघ्र कि लागत बेरि॥ १२॥
जाम्बवान बजला बड़ बृद्ध। नहि युवराज दूत परसिद्ध॥ १३॥
हम अति बृद्ध करब को जाय। हम मँगितहुँ नहि एक सहाय॥ १४॥
बलि-बञ्चन वामन-अवतार। भेल तखन हम छलहुँ कुमार॥ १५॥
बढ़इत बेल प्रदक्षिण सात। अगणित योजन प्रवह बसात॥ १६॥
कि करब काज जरासौं ग्रस्त। करितहुँ नहि ककरो मन व्यस्त॥ १७॥
अङ्गद शोच करू जनु चित्त। से छथि संगहि कार्य्य निमित्त॥ १८॥
कहलनि तखन शुनू हनुमान। यहन काज के करता आन॥ १९॥
हरता रघुवर धरणी-भार। तनिक सहाय अहँक अवतार॥ २०॥
जहि लय उतपति से दिन आज। की बिलम्ब सत्वर करु काज॥ २१॥
जन्ममात्र दिनकर फल जानि। गगन गेलहुँ शत योजन फानि॥ २२॥
खसलहुँ भूमि अतुल बल-बीर। व्यथा-लेश नहि भेल शरीर॥ २३॥
उठु उठु करु रघुनन्दन-काज। हमरा सभहिक राखू लाज॥ २४॥

गड़बड़ी रह गयी। ९ तब युवराज अंगद ने स्वयं कहा— "मैं लंका जाकर राजा सुग्रीव का काम करूँगा। १० सौ योजन के समुद्र को पार तो कर जाऊँगा, पर मन में कुछ शंका होती है। ११ लौटने में कुछ गड़बड़ लगता है। कौन कहे तुरत लौट सकूंगा कि कुछ देर लग जाए।" १२ तब परम वृद्ध जाम्बवान बोले— "युवराज स्वयं दूत बनकर जाएँ यह परिपाटी नहीं है। १३ मैं तो अब बहुत बूढ़ा हो गया, अब करूँ क्या। मैं कोई मददगार भी नहीं माँगता। १४ वामन अवतार के समय जब बलि को ठगा गया था, उस समय मैं किशोर था। १५ उस समय मैंने प्रवह वायु के बीच अनगिनत योजनों तक बढ़ते-बढ़ते सात चक्कर लगाए थे। १६ आज क्या करूँ, बुढ़ापे से मजबूर हूँ। मैं किसी के मन में चिन्ता न होने देता। १७ हे अंगद, आप मन में चिन्ता मत कीजिए। यह काम जो कर सकते हैं वे आपके साथ ही हैं।" १८ तब उन्होंने हनुमान से कहा— "हे हनुमान, सुनिए। आपको छोड़ कौन दूसरा है जो ऐसा काम कर सकता है। १९ राम धरती का भार हरेंगे। इसमें उनकी सहायता करने के लिए आपका अवतार हुआ है। २० जिसके लिए आपने जन्म लिया है वह दिन आज आ पहुँचा है। अब देर क्या, जल्द वह काम पूरा कीजिए। २१ जन्म होते ही आप सूरज को पका हुआ फल समझकर आकाश में सौ योजन कूद गये थे। २२ हे अतुलनीय बलवाले वीर, आप वहाँ से धरती पर गिरे, फिर भी आपके शरीर में तनिक भी पीड़ा न हुई। २३ आप उठिए और राम का काम कीजिए। हम सबों की इज्जत

शुनि हर्षित बर्द्धित हनुमान। नाद कयल घन सिंह समान ॥ २५ ॥
सकल सृष्टि फाड़क भ्रम कयल। पर्व्वत सन तन वामन धयल ॥ २६ ॥

॥ कड़खा छन्द ॥

जानकी-जानि-पद हृदय मे ध्यान करि ॥ २७ ॥
सुरभिपद-तुल्य जल-राशिकेँ फानबे ॥ २८ ॥
रोकि शकताह के बाट हम वायुसुत ॥ २९ ॥
प्रवह सौँ अधिक जव-दर्प मन मानबे ॥ ३० ॥
प्रभुक सन्देश कहि स्वामिनी देखि केँ ॥ ३१ ॥
शत्रु दशमौलिकेँ बाँधि हम आनबे ॥ ३२ ॥
जाइ लङ्कापुरी मारि वैरीन्द्र-दल ॥ ३३ ॥
सकल जन तखन बल हमर किछु जानबे ॥ ३४ ॥

॥ घनाक्षरी ॥

देखादेखी मध्य हम वारिनिधि फानि फेरि ॥ ३५ ॥
सदल सकुल दशवदन केँ मारिकेँ ॥ ३६ ॥
समर समक्ष प्रतिपक्ष लक्ष कोन अछि ॥ ३७ ॥
पवन प्रतक्ष बल लङ्कापुर जारिकेँ ॥ ३८ ॥
"चन्द्र" भन रामचन्द्र परसन हेतु आगाँ ॥ ३९ ॥
भूधर सहित लङ्का धरब उखारिकेँ ॥ ४० ॥

बचाइए।" २४ यह सुनकर हनुमान हर्षित हुए और बढ़कर विशाल हो गये। उन्होंने सिंह के समान गर्जन किया। २५ ऐसा लगा जैसे उन्होंने सारी सृष्टि को फाड़ दिया हो। छोटे-से अपने शरीर को पर्वत-सा बना लिया। और बोले, २६ "हृदय में जानकीपति राम का ध्यान करके मैं समुद्र को गाय के खुर के बराबर समझकर लाँघ जाऊँगा। २७-२८ मुझे रास्ते में कौन रोक सकेगा? मैं वायु का पुत्र हूँ। मैं अपने मन में प्रवह वायु से भी अधिक बल होने का घमंड रखूँगा। २९-३० मैं स्वामिनी सीता को खोजकर प्रभु राम का सन्देश उन्हें पहुँचाऊँगा और शत्रु रावण को बाँधकर ले आऊँगा। ३१-३२ जब मैं लंकापुरी जाऊँगा और शत्रु के दल को पछाड़ूँगा, तब सभी लोग मेरे बल का कुछ आभास पाएँगे। ३३-३४ अल्प ही आयास में मैं समुद्र को लाँघ जाऊँगा और सेनाओं व गोतियों-सहित रावण को मार डालूँगा। ३५-३६ लड़ाई में मेरे सामने लाख शत्रु-सेना क्या है? वायु-जैसा प्रत्यक्ष मेरा वेग है और मैं आग लगा लंकापुरी को जला डालूँगा। ३७-३८ 'चन्द्र' कवि कहते हैं, रामचन्द्र को प्रसन्न करने के लिए मैं पर्वत-सहित लंका को उखाड़कर उठा लूँगा और उनके सामने रख दूँगा। ३९-४० हे जाम्बवान, हे अंगद, कहिए

जाम्बवान युवराज कहु की करब काज ॥ ४१ ॥
आनि देब विनु श्रम जनक-कुमारिकेँ ॥ ४२ ॥

॥ चौपाइ ॥

जाम्बवान अङ्गद मन हर्ष । कि कहब वीरक मन उत्कर्ष ॥ ४३ ॥
अँहइ पुरब रघुपति-मन-आश । हमरा सभकाँ दृढ़ विश्वास ॥ ४४ ॥
जिबइत सीता छथि देखि लेब । से रघुनन्दन काँ कहि देब ॥ ४५ ॥
राम-सहित रण पौरुष करब । समुचित जेहन तेहन अनुसरब ॥ ४६ ॥
सतत करथु अहँकाँ कल्याण । व्योम-विहार पिता पवमान ॥ ४७ ॥
आशीर्व्वचन कहल पढ़ि मन्त्र । उड़ि चलला हनुमान स्वतन्त्र ॥ ४८ ॥

॥ सोरठा ॥

स्वर्ण-वर्ण मुख लाल, महाफणीन्द्राकार भुज ॥ ४९ ॥
महानगेन्द्र विशाल, प्राप्त महेन्द्राचल उपर ॥ ५० ॥

॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे किष्किन्धाकाण्डे नवमोऽध्यायः ॥

क्या काम है ? मैं बिना मिहनत सीता को ला दूँगा ।" ४१-४२ यह सुनकर जाम्बवान और अंगद का मन हर्षित हो उठा और बोले— "आपकी वीरता की बड़ाई क्या कहूँ । ४३ हमें पक्का विश्वास हो गया है कि आप ही राम के मन की आशा पूरी करेंगे । ४४ सीता जीती हैं, यह देख लीजिएगा और यह संवाद राम को सुना दीजिएगा । ४५ राम को साथ में लेकर रण में वीरता दिखाइएगा । फिर जैसा उचित होगा वैसा कीजिएगा । ४६ आकाश में विचरण करनेवाले आपके पिता वायु आपका सदा कल्याण करें ।" ४७ जाम्बवान और अंगद ने मन्त्र पढ़-पढ़कर हनुमान को आशीर्वाद दिया और हनुमान स्वच्छन्द रूप से उड़ चले । ४८ उनका मुँह सोना-सा लाल था । उनकी बाँहें विशाल शेषनाग-सी लम्बी थीं । ४९ उनका शरीर पर्वतराज हिमालय-सा विशाल था । ऐसे हनुमान उड़कर महेन्द्र पर्वत पर पहुँचे । ५०

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में किष्किन्धाकाण्ड का नौवाँ अध्याय समाप्त ॥

कवि-प्रार्थना

झञ्झोटी

श्रीमत्करुणावतारमिन्दुखण्डभालम् ।
वन्दे घनसारगौरमाश्रितैणबालम् ॥
परशुवराभीतिकरं व्यालराजमालम् ।
सर्व्वदा प्रसन्नमुखं कालकालकालम् ॥
व्याघ्रचर्मवाससं समस्तविश्वसारम् ।
निर्ज्जरनिवहैः स्तुतं वृशा विनष्टमारम् ॥
पञ्चाननमादिदेवमाधिहं त्रिनयनम् ।
प्रलये जगतां ध्रुवं दयालुतासदनम् ॥

॥ किष्किन्धाकाण्ड समाप्त ॥

सुन्दरकाण्ड

॥ अथ प्रथमोऽध्यायः ॥

॥ द्रुतविलम्बित छन्द ॥

धुतनगेऽम्बरगे परमोत्सवे,
चकितभानुगणे जितमन्मथे ॥ १ ॥
जनकजाधिविनाशिमनोगतौ,
प्रणतिरस्तु हनूमति मारुतौ ॥ २ ॥

॥ चौपाइ ॥

जयजय राम नवल-घनश्याम । सकललोक-लोचन अभिराम ॥ ३ ॥
मनमे तनिक ध्यान दृढ़ राखि । मारुतनन्दन उड़ला भाखि ॥ ४ ॥
शतयोजन वारिधि विस्तार । लाँघब हम मन हर्ष अपार ॥ ५ ॥
रघुनायक-कर जनु शर मुक्त । तथा हमहुँ जायब मुदयुक्त ॥ ६ ॥
देखथु कपिगण जाइत गगन । शोभित जेहन प्रवहमे भगण ॥ ७ ॥
बंधेहो हम देखब आज । दोसर यहन आन को काज ॥ ८ ॥

पहला अध्याय

हनुमान का लंका जाना; सुरसा, सिंहिका और लंकिनी से मुक़ाबला

पहाड़ को हिलानेवाले, आकाश में उड़नेवाले, परम उल्लास-भरे, सूर्य-चन्द्रादि को चकित करनेवाले, कामदेव को जीतनेवाले, जानकी की व्यथा हरनेवाले, मन-जैसे तेज चलनेवाले पवनसुत हनुमान को प्रणाम । १-२ नये बादल-जैसे श्यामवर्ण, सभी लोगों की आँखों में भानेवाले राम की जय हो, जय हो । ३ मन में ऐसे राम का ध्यान करके पवनसुत हनुमान यह कहते हुए उड़ चले— ४ "परम हर्ष के साथ मैं सौ योजन में फैले समुद्र को लाँघूँगा । ५ राम के हाथ से छूटे तीर की तरह मैं आनन्दपूर्वक निकल पड़ूँगा । ६ मुझे वानर लोग आकाश में जाते उसी तरह देखेंगे जिस तरह प्रवह वायु में ग्रह-नक्षत्र चलते दिखाई देते हैं । ७ आज मैं सीता को देखूँगा । इससे बढ़कर और दूसरा कौन काम होगा ? ८ राम को उनका समाचार सुनाऊँगा । जल्द ही लौट

रघुनन्दन काँ वार्ता कहब। सत्वर घुरब अनत नहि रहब॥ ९॥
नामस्मरण अन्त एक बार। जनिकाँ भव-जलनिधि से पार॥ १०॥
प्रभुक मुद्रिका हमरा सङ्ग। होयत न हमर मनोरथ भङ्ग॥ ११॥
जायब लङ्का दनुज-समाज। प्रभुप्रताप साधब सब काज॥ १२॥

॥ सोरठा ॥

उड़ि चलला हनुमान, ध्यान राम-पद मे सतत॥ १३॥
प्रबल प्रलय पवमान, रौद्र-मूर्त्ति लङ्काभिमुख॥ १४॥

॥ चौपाइ ॥

लङ्का जाइत छथि हनुमान। की बल की मति से के जान॥ १५॥
सुरसा काँ सुर सत्वर कहल। सर्प-जननि कए सुरहित टहल॥ १६॥
बहुत दिवस धरि मानब गून। जाउ शीघ्र घुरि आयब पून॥ १७॥
रोकब बाट कहब नहि मर्म्म। बूझब की करइत छथि कर्म्म॥ १८॥
कहल कयल से नभ पथ रोकि। चललहुँ कतय ततय देल टोकि॥ १९॥
हमरा आनन सत्वर आउ। विहित भक्ष्य अन्यत्र न जाउ॥ २०॥

॥ सवैया छन्द ॥

मारुत-सुत कहलनि शुनु माता, राम-काज कय आयब घूरि॥ २१॥
सीता-विषय कहब श्रीप्रभुकाँ अहँक देब प्रत्याशा पूरि॥ २२॥

आऊँगा। बाहर टिकूँगा नहीं। ९ अन्त में एक बार फिर उन प्रभु का नाम स्मरण करता हूँ जिनकी कृपा से समुद्र क्या, भव-सागर को भी लोग पार करते हैं। १० प्रभु की मुद्रिका मेरे साथ है। मेरे मन की कामना विफल नहीं होगी। ११ राक्षसों के पास लंका जाऊँगा और राम के प्रताप से सारा काम पूरा करूँगा।" १२ इतना कहकर विकटाकार हनुमान राम के चरण में निरन्तर ध्यान लगाये प्रलय-काल के प्रबल वायु की तरह लंका की ओर उड़ पड़े। १३-१४ देवताओं ने सोचा, हनुमान लंका जा रहे हैं। उनका क्या बल है और क्या बुद्धि है यह जानना चाहिए। १५ उन्होंने तुरत सुरसा से कहा— "हे सर्पों की माता, तुम देवताओं के खातिर एक काम करो। हम बहुत दिनों तक आभारी रहेंगे। जल्द जाओ और फिर लौट आओ। १६-१७ तुम हनुमान का रास्ता रोकना, पर वास्तविक बात मत कहना। यह देखना कि वे क्या उपाय करते हैं।" १८ सुरसा देवताओं की आज्ञा के अनुसार चल पड़ी और रास्ता रोककर बोली— "तुम चले कहाँ ? अब जल्द मेरे मुँह में आओ। तुम मेरा आहार होओगे। भागो नहीं।" १९-२० हनुमान ने कहा— "हे माता, सुनो। मैं राम का काम करके लौट आऊँगा, राम को सीता का हाल कहूँगा, तब तुम्हारी इच्छा पूरी कर

सुरसा देवि होइ अछि अरसा, कल जोड़ैछी छाडू बाट ॥ २३ ॥
अभिनत मारुति कहल न मानल, नमस्कार कय भेलहुँ आँट ॥ २४ ॥
सुरसा कहल शून रे बाबू नहि छोड़ब विनु खयलैँ ॥ २५ ॥
एखनहुँ धरि जीवन-प्रत्याशा, हमरा मुहमे अयलैँ ॥ २६ ॥
बहुत दिनासौँ हम भूखलि छी, विनु आहारैँ मरबे ॥ २७ ॥
हाथक मुसरी बियरि मे दय कड़े कड़े नहि करबे ॥ २८ ॥

॥ चौपाइ ॥

मारुति कहल देबि मुह बाउ। खाय शकी तौँ हमरा खाउ ॥ २९ ॥
योजन भरि बिस्तर कर काय। सुरसा मुह दश कोश बनाय ॥ ३० ॥
तकर द्विगुण हनुमानो कयल। बिश योजन मुख सुरसा धयल ॥ ३१ ॥
योजन तीस वदन हनुमान। योजन हुनक पचाश प्रमान ॥ ३२ ॥
अति लघु बनि मुह बाहर जाय। नमस्कार हँसि कहल शुनाय ॥ ३३ ॥
बहरयलहुँ देवि आनन पैसि। हम जाइत छी रहब न बैसि ॥ ३४ ॥

॥ दोहा ॥

सुरसा सन्तुष्टा कहल, सत्वर लङ्का जाय ॥ ३५ ॥
राम-कार्य्य साधन करू, हम छी सर्पक माय ॥ ३६ ॥

दूँगा। २१-२२ हे सुरसादेवी, मुझे देर हो रही है। हाथ जोड़ता हूँ, रास्ता छोड़ दो।" २३ प्रणाम करते थक गये, पर सुरसा ने विनीत हनुमान का कहा न सुना। २४ सुरसा ने कहा— "सुन रे बबुआ, तुम्हें खाये बिना न छोड़ूँगी। २५ अभी तक तुम जीने की आशा करते हो। अब तो मेरे मुँह में आ गये। २६ मैं बहुत दिनों से भूखी हूँ। आहार के बिना मैं मर जाऊँगी। २७ क्या मैं हाथ के चूहे को बिल में छोड़कर 'आ रे, आ रे' रटूँगी ? २८ हनुमान ने कहा— "अच्छा तो हे देवी, मुँह बाओ। यदि खा सकती हो तो मुझे खा लो।" २९ इतना कहकर उन्होंने अपने शरीर को बढ़ाकर एक योजन का बना लिया। सुरसा ने अपने मुँह को दस कोस के बराबर बढ़ा लिया। ३० फिर हनुमान ने भी अपने शरीर को उसका दूना कर लिया। सुरसा ने अपना मुँह बीस योजन कर लिया। ३१ हनुमान का शरीर तीस योजन का हो गया तो सुरसा का मुँह पचास योजन का। ३२ तब हनुमान बहुत ही छोटा रूप धारणकर उसके मुँह में घुस गये और बाहर हो हँसते हुए प्रणाम करके बोले— ३३ "हे देवी, मैं तुम्हारी आज्ञा के अनुसार मुँह में घुसा और बाहर भी आ गया। अब मैं चला। यहाँ रुकना नहीं है।" ३४ सुरसा प्रसन्न होकर बोली— "जल्द लंका जाकर राम का काम पूरा करो। मैं सर्पों की माता हूँ। ३५-३६ देवताओं ने मुझे भेजा है तुम्हारी परीक्षा के

देव पठावल बुझल बल, सीता देखू जाय ॥ ३७ ॥
कुशल फिरब सीता-कुशल, रघुवर देब शुनाय ॥ ३८ ॥
तखन चलल हनुमान पुन, गरुड़-गमन आकाश ॥ ३९ ॥
जलधि तहाँ मैनाक सौँ, कयलनि वचन प्रकाश ॥ ४० ॥

॥ चौपाइ ॥

कयल सगर-कुल बड़ उपकार। तनिक बढ़ायोल भेलहुँ अपार ॥ ४१ ॥
तनिकहि वंश राम अवतार। हुनक दूत जाइत छथि पार ॥ ४२ ॥
जलनिधि कहल जहन हित वाक। जलसौँ उच्च भेला मैनाक ॥ ४३ ॥
काञ्चन-मणि-मय शृङ्ग अनूप। ततय पुरुष एक दिव्य स्वरूप ॥ ४४ ॥
हे कपि हमर नाम मैनाक। जलधि भितर डर मन मघवा क ॥ ४५ ॥
माहत-नन्दन करु विशराम। खाउ अमृत सन फल यहि ठाम ॥ ४६ ॥
पथ विशराम न भोजन आज। अछि कर्त्तव्य राम-प्रिय काज ॥ ४७ ॥
शिखरक परश हाथ सौँ कयल। गगन-मार्ग पक्षी जकँ धयल ॥ ४८ ॥

॥ दोहा ॥

धयलक छाया-प्राहिणी, कयलक गमनक रोध ॥ ४९ ॥
हनुमानक मनमे तखन, बाढ़ल अतिशय क्रोध ॥ ५० ॥

लिए, मुझे तुम्हारी बल-बुद्धि मालूम हो गयी। अब जाकर सीता को देखो। ३७ तुम कुशलपूर्वक लौटोगे और सीता का कुशल-समाचार राम को सुनाओगे।" ३८ तब हनुमान पुनः गरुड़ की भाँति आकाश में उड़ते हुए चले। ३९ यह देख समुद्र ने मैनाक पर्वत से कहा— ४० "राजा सगर के वंशजों ने मेरा बड़ा उपकार किया है। उन्हीं के बढ़ाने से मैं इतना बड़ा हुआ हूँ। ४१ उन्हीं के वंश में राम का अवतार हुआ है। उनके दूत हनुमान पार जा रहे हैं, उनकी सहायता करनी चाहिए।" ४२ समुद्र ने जैसा हितकर वचन कहा, उसके अनुसार मैनाक पर्वत समुद्र के जल-स्तर से ऊपर उठ आया। ४३ उसकी चोटी स्वर्ण और रत्नों से अनुपम शोभा पा रही थी। उस चोटी पर दिव्य स्वरूपवाला एक पुरुष प्रकट हुआ और बोला— ४४ "हे महावीर, मेरा नाम मैनाक है। मैं इन्द्र के डर से समुद्र के भीतर छुपा रहता हूँ। ४५ हे पवनसुत, यहाँ विश्राम कीजिए; यहाँ के फल अमृत-से होते हैं, खाइए।" ४६ हनुमान ने कहा— "आज मुझे रास्ते में न विश्राम करना है और न भोजन। मुझे राम का वांछित कार्य करना है।" ४७ इतना कहकर हनुमान ने हाथ से उस चोटी का स्पर्श कर दिया और पक्षी की भाँति आकाश-मार्ग को पकड़ा। ४८ तब छाया को पकड़कर खानेवाली एक राक्षसी ने हनुमान का रास्ता रोक दिया। ४९ इस

घोरस्वरूपा सिंहिका, छाया धय धय खाय ॥ ५१ ॥
नभचरकाँ ओ राक्षसी, गगन-गमन जे जाय ॥ ५२ ॥
देखल तनिकाँ मरुतसुत, मारल झट दय लात ॥ ५३ ॥
पुनि उड़ि के चललाह से, शान्ति भेल उतपात ॥ ५४ ॥

॥ हरिपद ॥

॥ पादाकुल दोहा वा ॥

गिरि त्रिकूट पर लङ्कानगरी नाना तरु फल बेश ॥ ५५ ॥
नाना खग मृग गण सौँ शोभित पुष्पलतावृत देश ॥ ५६ ॥
दुर्ग्ग दुर्ग्ग मे रोकत टोकत चिन्तित मन-हनुमान ॥ ५७ ॥
करब प्रवेश राति कय तहि पुर दिवा युक्ति नहि आन ॥ ५८ ॥

॥ चौपाइ ॥

राम-चरण-सरसिज कय ध्यान । सूक्ष्मरूप भेला हनुमान ॥ ५९ ॥
पुरी-प्रवेश कयल निशि जखन । बुझलक लङ्का नगरी तखन ॥ ६० ॥
कहलक गमहि चलल छी चोर । हम करइत छी गञ्जन तोर ॥ ६१ ॥
बुझल न अछि दशकण्ठ-प्रताप । चललहुँ कतय अहा चुपचाप ॥ ६२ ॥
चुप रह कहलैँ पढ़लक गारि । चट दय लात चलौलक मारि ॥ ६३ ॥
वाम मुष्टि हरि हनल सुतारि । खसली अवनीमे ओ हारि ॥ ६४ ॥

पर हनुमान के मन में क्रोध की लहर दौड़ गयी । ५० विकट आकृति वाली सिंहिका नाम की यह राक्षसी आकाश-मार्ग से गुजरनेवाले जन्तुओं की छाया को पकड़कर छायाकारी जन्तुओं को खा जाती थी । ५१-५२ पवनसुत हनुमान ने उसे देखा और तुरत एक लात लगा दिया । ५३ इस तरह वह उत्पात शान्त हो गया और हनुमान अकाश-मार्ग से आगे बढ़े । ५४ हनुमान ने देखा, त्रिकूट पर्वत पर लंकापुरी है । वहाँ तरह-तरह के उत्तम पेड़ और फल हैं । ५५ तरह-तरह के पशु-पक्षी उसकी शोभा बढ़ा रहे हैं । सारा प्रदेश फूलों और लताओं से छाया हुआ है । ५६ हनुमान मन में सोचने लगे— "यहाँ तो हर क़िले में मेरी रोक-टोक होगी । ५७ इसलिए रात को प्रवेश करूँगा । दिन में घुसने की कोई युक्ति नहीं है ।" ५८ राम के चरणकमल का ध्यान करके और सूक्ष्म रूप धारण करके हनुमान ने रात होने पर लंका में प्रवेश किया । प्रवेश करते ही लंकिनी को मालूम हो गया । ५९-६० उसने कहा— "अरे चोर, तुम चुपके से चले हो । अभी मैं तुम्हारी दुर्दशा करती हूँ । ६१ क्या तुम्हें रावण का प्रताप मालूम नहीं है ? तुम चुपके से कहाँ चले हो ? ६२ जब हनुमान ने कहा— "चुप रहो ।" तो उसने उसका जवाब गाली में दिया और तुरत लात चला बैठी । ६३ सावधानी से हनुमान ने एक मुक्का मारा और

शोणित बान्ति करय कय बेरि। करति कि यहन उपद्रव फेरि॥ ६५॥
लङ्का देवी विकला कान। बरिया काँ नहि लागय बान॥ ६६॥
पूर्व्व विरञ्चि कहल छल जेह। अनुभव होइछ भेल की सेह॥ ६७॥

॥ षट्पद ॥

नारायण अवतार राम त्रेता मे हयता॥ ६८॥
पिता-वचन वन-बन्धु जानकी सङ्गहि जयता॥ ६९॥
माया-सीता ततय मूढ़ दशकन्धर हरता॥ ७०॥
बालि मारि सुग्रीव सङ्ग प्रभु मैत्री करता॥ ७१॥
अहँ काँ तनिकर दूत कपि, मारि मुका विकला करत॥ ७२॥
कहलनि विधि शुनु लङ्किनी, तखन बुझब रावण मरत॥ ७३॥

॥ चौपाइ ॥

वनिता-उपवन अरुण अशोक। महा भयङ्करि राक्षसि लोक॥ ७४॥
जनक-नन्दिनी छथि तहि ठाम। शोभित वृक्ष शिंशपा नाम॥ ७५॥
कि कहब शोभा देखब जाय। हमहूँ धन्या दर्शन पाय॥ ७६॥
विजय बनल अछि यश अवदात। हमरा हानि कि सहि आघात॥ ७७॥
देखब राम नवल-घनश्याम। अयोता शीघ्र रहब यहि ठाम॥ ७८॥
शुनि हरि हँसल चलल उत्साह। घरहिक भेदिया लङ्का डाह॥ ७९॥

वह हारकर धरती पर गिर पड़ी। ६४ बार-बार लहू क़ै करने लगी। फिर ऐसी हरकत कर न सकी। ६५ लंकादेवी बिलखकर रोने लगी—'अपने से बलवान के आगे तोर नाकामयाब होता है। ६६ पूर्व समय में ब्रह्मा ने जो कहा था, लगता है आज वही सत्य हो गया। ६७ 'त्रेतायुग में भगवान विष्णु राम का अवतार लेंगे। ६८ पिता की आज्ञा से स्त्री और भाई-सहित वन जायेंगे। ६९ वहाँ नासमझ रावण माया-स्वरूपा (नकली) सीता का हरण करेंगे। ७० राम वालि को मारकर सुग्रीव से मित्रता करेंगे। ७१ उनका दूत हनुमान मुक्का लगाकर आपको व्याकुल कर देगा; ७२ ब्रह्मा ने कहा था, हे लंकिनी, सुनो; तब समझना कि अब रावण की मौत आ गयी।' ७३ लाल अशोक का एक महिला-उद्यान है। वहाँ बड़ी डरावनी राक्षसियाँ रहती हैं। ७४ उसी जगह एक शीशम के पेड़ के नीचे जानकी हैं। ७५ उनकी शोभा क्या कहूँ, जाकर देखना। उनका दर्शन पाकर मैं भी धन्य हो गयी। ७६ तुम्हारी विजय होगी। निर्मल यश फैलेगा। मुझे तुम्हारे आघात से कुछ नहीं हुआ। ७७ मैं तो अब नये बादल-से साँवले राम का दर्शन पाऊँगी। वे शीघ्र आवेंगे। मैं यहाँ उनकी राह जोहती रहूँगी।" ७८ लंकिनी की यह बात सुनकर हनुमान उत्साहपूर्वक आगे बढ़े। कहावत है

जखन पवन-सुत रघुपति-चार। दुर्ग-महोदधि उतरल पार॥ ८०॥
दशमुख वाम अङ्ग भुज नयन। फरकय लाग अभागक अयन॥ ८१॥
भल मन्द सगुन सकल फल जान। कालक त्रास न दशमुख मान॥ ८२॥

॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे सुन्दरकाण्डे प्रथमोऽध्यायः॥

॥ अथ द्वितीयोऽध्यायः॥

॥ षट्पद॥

मारुत-नन्दन तखन सूक्ष्म-तन, निशिमे धय कहुँ॥ १॥
लङ्का कयल प्रवेश भ्रमित अतिगुप्ते भय कहुँ॥ २॥
सीता तकयित ततय दशानन-मन्दिर गेला॥ ३॥
देखि विभव-विन्यास बहुत मन विस्मित भेला॥ ४॥
देखल लङ्का सकल थल, नहि प्रदेश बाँकी रहल॥ ५॥
देखलनि नहि सीता कतहु, स्मरण भेल लङ्किनि-कहल॥ ६॥

॥ दोवय छन्द॥

अरुण अशोक देवद्रुम-सोदर, तरु-तति आनत फलसौँ॥ ७॥
उत्तम मणि-सोपान वापिका, पूरित निर्म्मल जलसौँ॥ ८॥

'घर का ही भेदिया लंका को जलाता है'। ७९ जब ही राम के दूत पवनसुत हनुमान दुर्गम समुद्र को पारकर उतरे, तभी से रावण का बायाँ अंग, भुजा और आँख सभी फड़कने लगे, जो दुर्भाग्य का सूचक है। ८०-८१ भले-बुरे शकुन का फल सब कोई जानते हैं, लेकिन रावण तो काल से भी डरता नहीं। ८२

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में
सुन्दरकाण्ड का पहला अध्याय समाप्त॥

दूसरा अध्याय

खोज में निकले हनुमान का रावण के महल में घूमना

उसके बाद पवनसुत हनुमान ने रात में सूक्ष्म शरीर धारण कर गुप्त रूप से लंका में प्रवेश किया। १-२ सीता की खोज में घूमते-घूमते वहाँ रावण के महल में पहुँचे। ३ वहाँ का ठाट-बाट देख परम विस्मित हो गये। ४ लंका के चप्पे-चप्पे को छान चुके, कोई स्थान देखना बाक़ी न रहा। ५ कहीं भी सीता दिखाई न पड़ीं। तब लंकिनी की कही बात याद आयी। ६ कल्पवृक्ष के समान लाल अशोक के पेड़ क़तारों में लगे, फलों से लदे हुए थे। ७ अच्छे-अच्छे रत्नों से बनी सीढ़ियों वाली वापियाँ निर्मल जल से भरी हुई थीं। ८

कञ्चन महल कहल नहि जाइछ, चुम्बित जलधर-माला ॥ ९ ॥
मणिस्तम्भ-शतसौं अतिशोभित, खग-मृग-परिवृत शाला ॥ १० ॥

॥ चौपाइ ॥

बिस्मित-मन सन मारुत-पूत । देखथित जाथि रघूत्तम-दूत ॥ ११ ॥
कनक विहंगम जतय अनेक । वृक्ष शिंशपा देखल एक ॥ १२ ॥
अति रमणीय निविड़ तरु-छाह । मारुत-नन्दन ततय गेलाह ॥ १३ ॥
तेहि तरु ऊपर बैसला जखन । सीता काँ देखल से तखन ॥ १४ ॥
भूतल देवी आबि कि गेलि । राक्षस-पुरी विकल-मन भेलि ॥ १५ ॥
वेणी एक मलिन अति चीर । दीना दुर्ब्बलि मृदुल शरीर ॥ १६ ॥
लङ्का-विषय यहनि के आन । सीता थिकि निश्चय अनुमान ॥ १७ ॥
राम राम मुख करथि उचार । भूमि-लुठित मन दुःख अपार ॥ १८ ॥
तहि तरु-मूल जानकी जानि । अपन भाग्यकाँ उत्तम मानि ॥ १९ ॥
अति कृतार्थ भेलहुँ देखि आज । हम साधल रघुनायक-काज ॥ २० ॥

॥ दोहा ॥

अन्तःपुर बाहरक शुनि, कल कल शब्द महान ॥ २१ ॥
वृक्ष-खण्ड-संलीन-तन, कर विचार हनुमान ॥ २२ ॥

सोने का महल कहा नहीं जा सकता कि कितना सुन्दर है। वह मानों बादल को चूमता था। ९ सौ-सौ रत्न-स्तम्भ उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। चारों ओर मृग और पक्षी विराजमान थे। १० विस्मय के साथ राम के दूत हनुमान देखते गये। ११ उन्होंने शीशम का एक पेड़ देखा, जहाँ अनेकानेक सुनहले पक्षी थे। १२ उस पेड़ की घनी छाया परम रमणीय थी। पवनसुत वहाँ गये। १३ जब वे उस पेड़ के ऊपर चढ़कर बैठे तब सीता को देखा। १४ क्या कोई देवी धरती पर आ गयी है और राक्षसों की नगरी जान व्याकुल हो गयी है? १५ एक मात्र चोटी है। चीर मलिन है। कोमल शरीर दुबला हो गया है। दीन-सी लगती है। १६ अरे! लंका में ऐसी और कौन हो सकती है? उन्होंने अनुमान किया कि हो न हो यही सीता हैं। १७ वह राम-राम रट रही थीं। मिट्टी में लेटी हुई थीं। मन में अपार व्यथा थी। १८ उस पेड़ के नीचे जानकी हैं, यह विश्वास करके तथा अपने को परम भाग्यवान समझकर उन्होंने सोचा— 'आज मैं सीता का दर्शन पाकर परम कृतार्थ हुआ। मैंने राम का काम पूरा कर दिया।' १९-२० तब हनुमान ने रनिवास के बाहर भारी शोरगुल होते सुना, २१ और पेड़ की डालों के बीच अपने को छुपाकर सोचने लगे कि क्या करें? २२

॥ चौपाइ ॥

बशमुख वनिता-वृन्दक सङ्ग । आयल कज्जल-गिरि-वर रङ्ग ॥ २३ ॥
किङ्किनि-नूपुर-शिञ्जित शूनि । दुष्ट निशाचर-आगम गूनि ॥ २४ ॥
विश भुज लोचन दश गोट मुण्ड । सह सह सङ्ग राक्षसी-झुण्ड ॥ २५ ॥
अति विस्मित मन कह हनुमान । देखल शुनइत छलहुँ जे कान ॥ २६ ॥
रहला द्रुम-दल दबकि नुकाय । अछि आगाँ कर्त्तव्य उपाय ॥ २७ ॥
कर विचार रावण मन अपन । पूर्व्व रात्रि जे देखल सपन ॥ २८ ॥
राम पठाओल वानर दूत । कामरूप बल बुद्धि बहूत ॥ २९ ॥
टक टक ताकय तरु पर बैशि । बुझलक घाट बाट पुर पैशि ॥ ३० ॥
कयल बहुत हम रामक दोष । एखनहु धरि हुनका नहि रोष ॥ ३१ ॥
कहिया मरण राम-कर हयत । माया-पाप-काय छुटि जयत ॥ ३२ ॥
एखनहु धरि नहि आबथि राम । कहिया होयत दिव्य संग्राम ॥ ३३ ॥
मनमे ज्ञान उपर अभिमान । चकमक भीतर आगि समान ॥ ३४ ॥
वचन-बाण तेहन अनुसरब । सीता-मन अति कलुषित करब ॥ ३५ ॥
स्वप्न सत्य तौँ कपि देखि लेत । रामचन्द्र काँ सभ कहि देत ॥ ३६ ॥

अशोक वाटिका में रावण द्वारा सीता को डर दिखाना

रावण महिलाओं के एक झुंड के साथ वहाँ आया। उसका रंग काजल के पहाड़ का-सा था। २३ घुँघरू और पैंजनी की खनक सुनकर उन्हें मालूम हुआ कि निशाचर रावण यहाँ आया है। २४ उसके बीस बाँहें, बीस आँखें और दस सिर थे। साथ में अनगिनत राक्षसियों का दल था। २५ परम विस्मय के साथ हनुमान आप ही आप बोले, 'जो कान से सुनता था, वह आज आँखों से देखा।' २६ वे पेड़ के झुरमुट में छिप गये, देखें आगे काम का क्या रास्ता निकलता है। २७ उधर रावण अपने मन में विचार कर रहा है— पिछली रात एक सपना देखा था। २८ 'राम ने एक बन्दर को दूत बनाकर भेजा है। वह दूत इच्छानुसार अपना स्वरूप बदलने में समर्थ है तथा परम बलवान व बुद्धिमान है। २९ वह पेड़ पर बैठे घूर रहा है। नगर में पैठकर उसने सारा ठौर-ठिकाना जान लिया है। ३० मैंने राम का बहुत अपराध किया। पर अब भी उनको मुझ पर क्रोध नहीं हुआ है। ३१ कब मेरा मरण राम के हाथ से होगा, जिससे कि माया, पाप और शरीर इन सबों से छुटकारा मिल जाय। ३२ अब मैं भीतर-भीतर तो ज्ञान रखूँगा, पर बाहर-बाहर अभिमान दिखाऊँगा, जिस तरह भीतर में चमक और बाहर राख वाली आग। ३३-३४ ऐसा वचन रूपी बाण छोड़ूँगा, जिससे सीता का मन कलुषित हो जाए। ३५ अगर मेरा सपना सच्चा है तो बन्दर ऐसा करते देखेगा और सारी बात राम

जौँ कपि होयता कहता जाय। लयोता सानुज राम बजाय ॥ ३७ ॥
ई मन गुनिकेँ सीता निकट। पहुँचल दशमुख दुर्म्मद विकट ॥ ३८ ॥
सीता-दशा कहल नहि जाय। आत्ममध्य जनु रहलि समाय ॥ ३९ ॥

॥ दोहा ॥

रावण सीता काँ कहल, सुमुखि सत्य वृत्तान्त ॥ ४० ॥
राम न अयोता काज किछु, मनमे करु सिद्धान्त ॥ ४१ ॥

॥ चौपाइ ॥

वैदेही परिहरु सन्ताप। उचित कयल नहि अहँकाँ बाप ॥ ४२ ॥
रामक हाथ देल को जानि। कानन-वास अकारण हानि ॥ ४३ ॥
हेम-हरिण देखयित भेल लोभ। लङ्का देखि त्यागु मन क्षोभ ॥ ४४ ॥
शिव शिव आब कि रामक आश। लङ्का छोट हाथ उनचास ॥ ४५ ॥
जौँ नहि निर्गुण रहितथि राम। तौँ बसितथि नृप-दशरथ-धाम ॥ ४६ ॥
राम बसथि वनचर-गण संग। हमहुँ शुनल छल कथा-प्रसंग ॥ ४७ ॥
बहुत तकायोल लोक पठाय। नहि भेटला रहलाह नुकाय ॥ ४८ ॥
जौँ हुनका अहँ मे किछु प्रीति। अबितथि लय जइतथि रण जीति ॥ ४९ ॥
पामर रामक त्यागू आश। विद्यमान लङ्केश्वर दास ॥ ५० ॥

को बता देगा। ३६ अगर बन्दर होगा तो वह राम को अपने भाई के साथ बुला लाएगा।' ३७ मन में ऐसा सोचकर परम अभिमानी रावण सीता के पास पहुँचा। ३८ सीता की हालत कही नहीं जा सकती। लगता था जैसे वह आपे में समा गयी हों। ३९ रावण ने सीता से कहा— "हे सुन्दरी, मैं सच्ची बात कहता हूँ। ४० रामचन्द्र कुछ भी काम न आएगा। इस बात को तुम पक्का समझ लो। ४१ हे विदेहसुता, तुम सन्ताप छोड़ो। पिता जनक ने तुम्हारे लिए उचित नहीं किया। ४२ क्या सोचकर उसने तुम्हें राम के हाथ सौंपा, जिससे तुम्हें नाहक वनवास भोगना पड़ा। ४३ तुम तो सोने के हिरण को देखते ही लुभा गयी, फिर सोने की लंका को देखकर भी क्षोभ क्यों करती हो ? ४४ हाय, अब राम का कौन भरोसा। कहावत है— लंका में जो सबसे छोटा होता है, वह भी उनचास हाथ लम्बा होता है। ४५ यदि राम में कुछ गुण रहता तो राजा दशरथ के घर में ही उसका वास होता। ४६ राम तो वनचरों के बीच रहता है। मैंने भी बातचीत के क्रम में उसका हाल सुना था। ४७ कई दूतों को भेजकर उसकी खोज की, पर वह मिला नहीं, छुप रहा। ४८ यदि तुमसे उसे कुछ प्यार होता तो वह ज़रूर आता और लड़ाई में जीतकर तुम्हें छुड़ा ले जाता। ४९ कायर राम का भरोसा छोड़ो। लंका का राजा रावण तुम्हारे दास के रूप में सामने खड़ा

हरि आनल अहँकाँ कत दूरि। एको बेरि की तकलनि घूरि॥ ५१॥
बड़ कपटी छथि ज्ञान घमण्ड। दैवो देलथिन समुचित दण्ड॥ ५२॥
सकल सुरासुर-नारि समाज। सभक स्वामिनी होयब आज॥ ५३॥
सीता मन जनु करु किछु छोट। भाग्य अहाँक भेल बड़ गोट॥ ५४॥
तृण-अन्तरित अधोमुखि रुष्ट। रावण-वचनक उत्तर पुष्ट॥ ५५॥
जे शिर शिवकाँ अर्प्पण कयल। प्रबल पाप चरणो तत धयल॥ ५६॥
धिक धिक रावण तोहर ज्ञान। काल-निकट अनहित हित मान॥ ५७॥
जनिक त्रास बनि भिक्षुक रूप। हरि हरि हरि लयला की चूप॥ ५८॥
कुक्कुर जनु मख-घृत लय जाय। मरबह खल पाछाँ पछताय॥ ५९॥
मानुष मानह श्रीरघुवीर। परिचय मन तन लगलय तीर॥ ६०॥
अयोता सानुज प्रभु रघुनाथ। विचलत गर्व्व तोर दश-माथ॥ ६१॥
बाणक तेज समुद्र सुखाय। सायक-सेतु उदधि बन्धबाय॥ ६२॥
अयोता निश्चय होयत मारि। निश्चय तोहर रणमे हारि॥ ६३॥
मरबह पुत्र-बिकट-बल-सहित। आयल निकट तेहन दिन अहित॥ ६४॥

है। ५० इतनी दूर से मैं तुम्हें हर करले आया, पर एक बार भी उसने तुम्हारी खोज की? ५१ वह बड़ा ही कपटी और घमंडी है। दैव ने भी उसे उचित सजा दी है। ५२ आज तुम सभी देवियों, असुर सुन्दरियों और नारियों के बीच सबों की स्वामिनी बनोगी। ५३ हे सीता, तुम अपने को दीन मत समझो। तुम्हारा भारी भाग्योदय हो गया।" ५४ इतना सुनकर सीता ने बीच में तिनका रखकर नज़र झुकाये रुष्ट हो रावण के वचन का करारा जवाब दिया। ५५ "तुमने जो सिर शिव को अर्पित किया उसी पर भारी पाप ने भी अपना पाँव जमा दिया (अर्थात् पाप का कलंक लग गया है)। ५६ हे रावण! तुम्हारे ज्ञान को धिक्कार है। जब काल पास आ जाता है तब अहित कर्म में ही हित दिखाई देने लगता है। ५७ हाय, तुम तो राम के डर से भिक्षुक का वेष बनाकर मुझे चोरी से हर लाये, ५८ जिस तरह कुत्ता यज्ञकर्म का घी ले जाता है। दुष्ट, तुम पीछे पछतावे से मरोगे। ५९ तुम राम को मानव समझते हो। तुम्हें उनकी पहचान तब होगी जब तुम्हारे शरीर में उनका तीर लगेगा। ६० जब लक्ष्मण-सहित राम आवेंगे तब हे दशकन्धर, तुम्हारा घमंड चूर हो जाएगा। ६१ बाणों के तेज से समुद्र को सुखाकर और समुद्र में बाणों का पुल बनवाकर वे अवश्य आएँगे, लड़ाई होगी और उसमें अवश्य ही तुम हारोगे। ६२-६३ तुम अपने पुत्रों और सेनाओं-समेत मरोगे। तुम्हारा वह बदनसीब वक़्त आ पहुँचा है।" ६४ सीता का कठोर वचन सुनकर रावण

॥ दोहा ॥

सीता-वचन कठोर शुनि, रावण लय तरुआरि ॥ ६५ ॥
यहन कथा हमरा कहति, सद्यः हम देब मारि ॥ ६६ ॥

॥ चौपाइ ॥

मन्दोदरी कहल शुनु नाथ । अबला-वध की अपनैँ हाथ ॥ ६७ ॥
विदित वीर अपनैं ई नारि । अपयश पाप देब जौँ मारि ॥ ६८ ॥
अबला ऊपर एतटा रोष । कड़ारिक तरु पर शितुआ चोष ॥ ६९ ॥
कृपणा मलिना दुब्बंल देह । हिनका जीबहु मे सन्देह ॥ ७० ॥
अन्न पानि कयलनि अछि त्याग । नहि करती पर-जन-अनुराग ॥ ७१ ॥
अहँकाँ कोन कमी प्राणेश । जीतल भुज-बल सकलो देश ॥ ७२ ॥
सुर गन्धर्व्व सकल जन नाग । कन्या लयलैं मनता भाग ॥ ७३ ॥
कन्या-जन मद-घूर्णित-नयन । अपनहि सुखसौँ अउती शयन ॥ ७४ ॥

॥ दोहा ॥

रावण राक्षसि सौँ कहल, उत्कट त्रास देखाय ॥ ७५ ॥
अनुकूला सीता करह, जे बल बुद्धि उपाय ॥ ७६ ॥
दूइ मासमे करति ई, जौँ हमरासौँ प्रेम ॥ ७७ ॥
सकल राज्य-रानी हयति, हिनका सम सुख क्षेम ॥ ७८ ॥

ने तलवार उठाई और सीता से कहा, ६५ "क्या तुम ऐसी बात मेरे सामने बोलोगी ? मैं तुरत जान से मार दूँगा ।" ६६ यह सुनकर मन्दोदरी ने कहा— "हे नाथ, सुनिए । अपने हाथ से क्या अबला का वध करेंगे । ६७ आप प्रख्यात वीर हैं और ये नारी हैं । यदि आप इनका वध करेंगे तो आपको स्त्री-वध का पाप भी होगा और बदनामी भी । ६८ अबला पर आपका इतना गुस्सा शोभा नहीं देता । कहावत है कि केले के पौधे पर सीप भी तेज़ धार वाला कहलाता है । ६९ ये तो दीन और मलिन अवस्था में पहुँचकर दुबली-पतली हो चुकी हैं । इनके जीने में भी अब सन्देह है । ७० इन्होंने खाना-पीना छोड़ दिया है । ये पराये पुरुष से कभी प्रेम नहीं कर सकती हैं । ७१ हे प्राणनाथ, आपको कौन-सी कमी है ? आप ने अपने बाहुबल से सारे देशों को जीत लिया है । ७२ देव, गन्धर्व, नाग और मानव, जिनकी भी कन्या आप ग्रहण करेंगे वे अपना सौभाग्य समझेंगे । ७३ मतवाली आँखोंवाली कन्याएँ स्वयं प्रसन्नतापूर्वक आपके घर आएँगी ।" ७४ तब रावण ने राक्षसियों से कहा— "घोर भय दिखा-दिखाकर अपने-अपने बल, बुद्धि और युक्ति से सीता को राज़ी करती जाओ । ७५-७६ यदि यह दो महीनों में मुझसे प्रेम करेगी तो सारे राज्य की रानी होगी और इसका कल्याण होगा तथा सारा

बहुत बुझौलय नहि बुझथि, बीति जाय दुइ मास ॥ ७९ ॥
हम आज्ञा दय देल अछि, हिनकर करब विनाश ॥ ८० ॥

॥ चौपाइ ॥

अन्तःपुर गेला दश-भाल । वनिता-परिवृत गर्व्व विशाल ॥ ८१ ॥
विकटादिक सीता तट जाय । भयभीता कर स्वाङ्ग बनाय ॥ ८२ ॥
व्यर्थ तोर तन यौवन आस । भेल न दशमुख सौं सहवास ॥ ८३ ॥
केओ कह हिनक अङ्ग सभ काट । केओ कह जोह सँ शोणित चाट ॥ ८४ ॥
अपने हठ अपने सुख खाय । होयत को पाछाँ पछताय ॥ ८५ ॥
केओ तरुआरि तेज लय हाथ । काटि लिअ हम हिनकर माथ ॥ ८६ ॥
केओ दौड़य बड़ गोट मुह बाय । की विलम्ब हम जाइछि खाय ॥ ८७ ॥
त्रिजटा कहल करह अन्याय । सीता नहि जानह असहाय ॥ ८८ ॥
हिनकर निकट भ्रमहुँ जनु जाह । अपने अपने तन बरु खाह ॥ ८९ ॥
यहि खन हम देखल अछि सपन । होयत सत्य बुझल मन अपन ॥ ९० ॥

॥ रूपमाला ॥

चढ़ल ऐरावतक ऊपर, राम लक्ष्मण सङ्ग ॥ ९१ ॥
दग्ध लङ्कापुरी भय गेल, समर रावण भङ्ग ॥ ९२ ॥

सुख मिलेगा । ७७-७८ यदि यह बहुत समझाने-बुझाने पर भी न समझे, और दो महीने की अवधि बीत जाए तो मैं आज्ञा दिये देता हूँ, इसका अन्त कर देना !" ७९-८० इतना कहकर नारियों से घिरा रावण भारी घमंड के साथ अन्तःपुर चला गया । ८१ विकटा आदि राक्षसियाँ तरह-तरह के स्वाँग रच-रचकर उन्हें डराने-धमकाने लगीं । ८२ वे कहतीं— "यदि तुमने रावण से संग नहीं किया तो तुम्हारे शरीर में यह यौवन बेकार चला जाएगा ।" ८३ कोई राक्षसी कहती— "इसका एक-एक कर सभी अंग काट दो ।" कोई कहती— "जीभ से इसके शरीर का सारा लहू चाट लो । ८४ यह तो अपने ही जिद्द से अपने ही सुख को खा रही है। पीछे पछताकर क्या होगा ।" ८५ कोई तेज़ तलवार हाथ में ले कहती— "क्या मैं अभी इसका सर काट लूँ ?" ८६ कोई बहुत मुँह बाकर दौड़ती और कहती— "देर क्यों करती हो ? कहो तो मैं तुरत खा जाऊँ ।" ८७ त्रिजटा नाम की एक राक्षसी ने कहा— "तुम लोग अन्याय करती हो । सीता को असहाय मत समझना । ८८ भूल से भी इनके पास मत जाना; भले ही अपनी देह को आप खा जाओ । ८९ अभी मैंने सपना देखा है । मुझे लगता है, वह सच्चा होगा । ९० देखा कि लक्ष्मण के साथ राम ऐरावत पर सवार हैं । ९१ लंका जल गयी है । युद्ध में रावण हार चुका है । ९२ लंका का राज्य पाकर विभीषण राम की सेवा

राम-सेवा कर विभीषण राज्य लङ्का पाय ॥ ९३ ॥
जानकी ई राम-अङ्क-स्थिता भेली जाय ॥ ९४ ॥

॥ चौपाइ ॥

दशमुख नग्न सकल परिवार । तेल लगओलय भरल विकार ॥ ९५ ॥
गोबर डाबर मध्य नहाथि । खर पर चढ़ल याम्य दिश जाथि ॥ ९६ ॥
रावण मरता सहित समाज । प्राप्त विभीषण काँ भेल राज ॥ ९७ ॥
राम जानकी मिलि घर जयत । दुखमय लङ्का सत्वर हयत ॥ ९८ ॥
करत अनर्थ अखण्डित नोर । धन्य धन्य सीता हिय तोर ॥ ९९ ॥
करु करु धैरज कहब कि आन । मुठिएक धूरि न चान मलान ॥१००॥

॥ कवित्त घनाक्षरी ॥

॥ गीत ॥

त्रिजटा कहल शुनु जानकी नवीन कथा ॥ १०१ ॥
वानर-विशेष वर वाटिका उजारलक ॥ १०२ ॥
रक्षक प्रबल रण-दक्ष लक्ष लक्ष खेत ॥ १०३ ॥
मुइल मुर्च्छित कतो रावण पुकारलक ॥ १०४ ॥
"चन्द्र" भन यहन न देखल शुनल छल ॥ १०५ ॥
अक्षयकुमार काँ पटकि झट मारलक ॥ १०६ ॥
कतहुँ न हारलक वीरता प्रचारलक ॥ १०७ ॥
रावण-पालित हाय लङ्कापुर जारलक ॥ १०८ ॥

कर रहे हैं । ९३ यह जानकी राम के पास चली गयी हैं । ९४ सारे परिवार-सहित रावण नंगा है । विकार (मैल) से भरा और तेल लगाये हुए है । ९५ गोबर से भरे गड्ढे में नहा रहा है । गधे पर चढ़ा दक्षिण की ओर जा रहा है । ९६ परिवार-सहित रावण की मृत्यु होगी । विभीषण को राज्य मिलेगा । ९७ राम जानकी को साथ करके घर जाएँगे । लंका तुरत दुख में डूब जाएगी । ९८ आपकी अविच्छिन्न अश्रुधारा अनर्थ कर डालेगी । हे सीता, आपका हृदय धन्य है । ९९ और क्या कहूँ, धीरज धरिए । मुट्ठी भर धूल से चाँद म्लान नहीं हो सकता है ।" १०० त्रिजटा ने कहा— "हे जानकी, सपने की और-और नयी बात सुनिए । १०१ एक बन्दर ने अशोक वाटिका को उजाड़ दिया । १०२ लड़ाई में माहिर लाख-लाख बलवान रक्षकगण खेत आये । १०३ बहुत से रक्षक मूर्च्छित हो गये । कुछ रावण को पुकारने चले । १०४ चन्द्र कवि कहते हैं कि ऐसा न कभी देखा, न सुना था । १०५ उस बन्दर ने अक्षयकुमार को पछाड़कर मार डाला । १०६ कहीं भी हारा नहीं अपनी वीरता का डंका पीट गया, और १०७ रावण द्वारा रक्षित लंकापुरी को जला डाला ।" १०८ सपने की बात सुनकर

॥ सवैया छन्दः ॥

स्वप्न-कथा राक्षसि-गण शुनिकेँ ॥ १०९ ॥
त्यागि उपद्रव गेलि डराय ॥ ११० ॥
मद-मातलि छलि जागलि थाकलि ॥ १११ ॥
निन्द-विवश भेलि जहँ तहँ जाय ! ॥ ११२ ॥
सीता तखन विकलि मन-भीता ॥ ११३ ॥
दुःख-मूर्छिता रहित-उपाय ॥ ११४ ॥
कनयित कलपि कहथि की करु विधि ॥ ११५ ॥
प्रातहि राक्षसि जाइलि खाय ॥ ११६ ॥

॥ गीत काफी ॥

सपन हम देखल अचिन्तित राति ॥ ११७ ॥
विद्रुम-रक्त-वदन तेजोमय, अद्भुत वानर जाति ॥ ११८ ॥
प्रभु-प्रेषित पाथोनिधि सन्तरि, लङ्का-परिचय पाबि ॥ ११९ ॥
हम विधिहता शुनल शुभ वार्त्ता, इष्ट अनिष्ट कि भावि ॥ १२० ॥
जे दिन लङ्का प्रलय होइछ नहि, से दिन पापिक भाग ॥ १२१ ॥
ई अन्याय घोर लङ्कामे, पानिसौँ आगि न लाग ॥ १२२ ॥
सुरपति-सुतक पराभव-दायक, कोशल कौशल भूप ॥ १२३ ॥
से शर से कर से रघुवर वर, कत बसल छथि चूप ॥ १२४ ॥

राक्षसियाँ डर गईं और सीता को सताना छोड़ दिया। १०९-११० राक्षसियाँ, जो मदमाती, जगी और थकी थीं, जहाँ-तहाँ जाकर नींद के मारे सो गयीं। १११-११२

सीता का विलाप

तब विकल, भयभीत, निरुपाय और वेदना से छटपटाती सीता रोती और बिलखती हुई कहने लगी— "हाय विधाता, क्या करूँ ? मुझे तो सुबह होते ही राक्षसियाँ खा जाएँगी। ११३-११६ मैंने आज रात अजीब सपना देखा। एक अद्भुत जाति का बन्दर था, जिसका मुँह मूँग-जैसा लाल और चमकीला था। ११७-११८ प्रभु राम का भेजा हुआ वह बन्दर समुद्र पारकर लंका का हाल जान गया है। ११९ दुर्भाग्य की मारी मैंने यह शुभ समाचार स्वप्न में सुना। कौन जाने इस सपने का फल भला होनेवाला है या बुरा। १२० जिस दिन लंका में प्रलय नहीं होता, उस दिन समझें कि पापी भाग्यवान है। १२१ लंका में यह घोर अन्याय हो रहा है। पानी से कहीं आग लगे ? १२२ इन्द्र के पुत्र जयन्त के दाँत खट्टा करने के कौशलवाले कोशल के वही राजा राम हैं, वही बाण है और वही उनका हाथ है; फिर वे चुपचाप

॥ गीत ॥

से दिन कोना होयत मनोरथ पूर ॥ १२५ ॥
रघुनन्वन-बल प्रलय पवन सम, अधम निशाचर तूर ॥ १२६ ॥
देवर-तीर जेहन प्रलयानल, रावणगण वन झूर ॥ १२७ ॥
के हम थिकहुँ ककर हम कामिनि, परिचय पओता क्रूर ॥ १२८ ॥
सकल तमीचर तामस तम सम, श्रीरघुनन्दन सूर ॥ १२९ ॥
हमर यहन गति दैव देखै छथि, नहि उपाय किछु फूर ॥ १३० ॥
तीरक तेज समुद्र सुखायत, जल थल ऊड़त धूर ॥ १३१ ॥
कोटि शनैश्चर सहित सङ्कटा, लङ्का घर घर घूर ॥ १३२ ॥

॥ गीत ॥

केहन विधि लिखल विपति-तति भाल ॥ १३३ ॥
कुल पवित्र कुल-कामिनि हमरहि, कठिन विपति जंजाल ॥ १३४ ॥
रघुनन्दन पति देवर लक्ष्मण, जनि डर काँपय काल ॥ १३५ ॥
चोर दशानन त्रास देखाबय, अनुचित कह वाचाल ॥ १३६ ॥
वनुज-वधू कह मारब काटब, चाटब शोणित लाल ॥ १३७ ॥
यहि अवसर जौँ ओ प्रभु आबथि, देखथि सभटा हाल ॥ १३८ ॥

बैठे कहाँ हैं ? १२३-१२४ ऐसे दिन का मेरा मनोरथ कैसे पूरा होगा ? १२५ प्रलयंकर पवन-सम राम का बल नीच राक्षस को रुई की तरह उड़ाएगा। १२६ प्रलयाग्नि-सम देवर लक्ष्मण का तीर रावण रूपी वन को जलाएगा। १२७ मैं कौन हूँ और किसकी पत्नी हूँ, यह क्रूर नहीं जान पाता। सूर्य के समान श्रीराम तामसी राक्षस रूपी सारे अन्धकार को हर लेंगे। १२८-१२९ विधाता मेरी ऐसी दुर्गति देख रहे हैं। कोई उपाय नहीं दिखाई देता है। १३० राम के बाण की ज्वाला से सारा समुद्र सूख जाएगा, जल और स्थल दोनों जगह समान रूप से धूल उड़ने लगेगी। १३१ एक करोड़ शनिग्रह के साथ संकटा नाम की योगिनी लंका में घर-घर घूमेगी। १३२ विधाता ने मेरे भाल में क्या-क्या विपत्तियाँ लिखी हैं ? १३३ मैं पवित्र कुल में पैदा हुई हूँ और पवित्र कुल में ब्याही गयी हूँ; फिर मेरे ही सर पर यह विपत्ति क्यों आ पड़ी है ? १३४ राम मेरे पति हैं और लक्ष्मण मेरे देवर हैं, जिनके डर से काल भी थर्राता है। १३५ फिर भी यह चोर रावण मुझे डरा-धमका रहा है और अनुचित कहता है। १३६ राक्षसियाँ कहती हैं, मार डालूँगी, काट डालूँगी, तुम्हारा लाल लहू चाट लूँगी। १३७ ऐसे मौक़े पर यदि मेरे प्रभु राम आवें तो सारा हाल अपनी आँखों से देखेंगे। १३८ वह सोने का हिरन नहीं, वह काल-दूत

काल-दूत जनि हेम-हरिण छल, छल न बुझल ततकाल ॥ १३९ ॥
कालहि सिंह-घरणि तट निर्भय, गरवित सरब शृगाल ॥ १४० ॥

॥ गीत ॥

हमर विधि प्राण अपन भेल भार ॥ १४१ ॥
की सुख भुंजि छथि ओ ई देहमे, कतहु कि नहि आधार ॥ १४२ ॥
जौँ आबथि रघुनन्दन सानुज, लीला-सागर पार ॥ १४३ ॥
गृद्धझुण्ड दशमुण्ड-मुण्ड पर कर खर नखर प्रहार ॥ १४४ ॥
ककरा कहब केओ नहि मानुष, नहि कारुणिक चिन्हार ॥ १४५ ॥
रक्षा करथि अरक्षित जनकाँ, केवल धर्म्म उदार ॥ १४६ ॥
कठिन विषय विष तिष नहि भेटय, खड्ग न लग तिष-धार ॥ १४७ ॥
शिव शिव जीव-घात वर मानल, धिक जीवन संसार ॥ १४८ ॥
रामचन्द्र-चन्द्रिका थिकहुँ हम, सपन न मन व्यभिचार ॥ १४९ ॥
विधि बुधि विरहिणि व्याकुलि एकसरि चित चिन्ता विस्तार ॥१५०॥

॥ सवैया मुद्रिका ॥

हा रघुनाथ अनाथ जकाँ, दशकण्ठ-पुरी हम आइलि छी ॥ १५१ ॥
सिंहक त्रास महावनमे हरिणीक समान डराइलि छी ॥ १५२ ॥
चन्द्र-चकोरि अहँक सदा, हम शोक-समुद्र समाइलि छी ॥ १५३ ॥
देवर-दोष कहू हम की, अपना अपराध सँ काइलि छी ॥ १५४ ॥

था, यह बात उस समय समझ में न आयी। १३९ कालवश सिंहिनी के पास सियार घमंड के साथ बेधड़क आकर शोर मचा रहा है। १४० हे विधाता! मेरा अपना प्राण ही भार हो गया। १४१ कौन सा सुख भोगने के लिए यह प्राण मेरे शरीर में टिका हुआ है? कहीं कोई सहारा नहीं है? १४२ यदि अनायास समुद्र को पारकर लक्ष्मण-सहित राम यहाँ आएँ तो रावण के मुंड पर गीधों का झुंड अपने तेज नाखूनों से प्रहार करेगा। १४३-१४४ किससे कहूँ, कोई मनुष्य नहीं मिलता! कोई दयालु परिचित व्यक्ति नहीं है। १४५ ऐसे अरक्षित की रक्षा केवल उदार धर्म ही कर सकता है। १४६ बड़ा कठिन सवाल है। तेज ज़हर नहीं मिलता। तेज धारवाली तलवार नहीं मिलती। १४७ हाय! मैंने तो आत्महत्या कर लेना ही अच्छा समझ लिया है। संसार में इस तरह की ज़िन्दगी को धिक्कार है। १४८ मैं राम रूपी चाँद की चाँदनी हूँ, सपने में भी मेरा मन राम से विचलित नहीं होता है। १४९ विधिवश मैं वियोगिनी अकेली व्याकुल हो अथाह चिन्ता-सागर में पड़ी हूँ। १५० हा रघुनाथ, मैं अनाथ जैसी यहाँ लंकापुरी में आयी हूँ। १५१ मैं उसी तरह त्रस्त हूँ जिस तरह भारी जंगल में सिंह के सामने हिरणी। १५२ मैं सदा आपकी ही चन्द्रचकोरी रही और आज शोक-सागर में डूबी हुई हूँ। १५३ मैं

॥ दोहा ॥

जनक जनक जननी अवनि, रघुनन्दन प्राणेश ॥ १५५ ॥
देवर लक्ष्मण हमर छथि, नैहर मिथिला देश ॥ १५६ ॥

॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे सुन्दरकाण्डे द्वितीयोऽध्यायः ॥

॥ अथ तृतीयोऽध्यायः ॥

॥ चौपाइ ॥

सीता शुनथि शुनय नहि आन । शब्द शब्द कह तहँ हनुमान ॥ १ ॥
राजा दशरथ काँ सुत चारि । जेठ राम काँ सीता नारि ॥ २ ॥
शिव-धनु तोड़ल मिथिला जाय । जनक देल कन्या से न्याय ॥ ३ ॥
परशुराम अयला कय कोप । तनिकर भय गेल गर्व्वक लोप ॥ ४ ॥
भूमि-भार-संहारक काज । विघ्न कयल बड़ देव-समाज ॥ ५ ॥
बारह वर्ष राम वनवास । केकयि परवश कयल प्रयास ॥ ६ ॥
हरल शारदा केकयि-ज्ञान । ककरो कहल कि रानी मान ॥ ७ ॥
वर न्यासित दशरथ सौँ लेल । दशरथ प्राण-रहित भय गेल ॥ ८ ॥

देव को क्या दोष दूँ, खुद ही अपना अपराध स्वीकार करती हूँ । १५४ राजा जनक जैसे मेरे पिता हैं, धरती जैसी मेरी माता हैं, राम जैसे मेरे पति हैं, १५५ लक्ष्मण जैसे मेरे देवर हैं और मिथिला जैसा मेरा ननिहाल है, फिर भी मेरी यह दुर्गति । १५६

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में सुन्दरकाण्ड का दूसरा अध्याय समाप्त ॥

तीसरा अध्याय

हनुमान-सीता-संवाद

सीता सुनती हैं और कोई नहीं सुनता, इस तरह हनुमान धीरे-धीरे कहते हैं— १ "राजा दशरथ के चार बेटे हैं । बड़े का नाम राम है, जिनकी स्त्री सीता हैं । २ राम ने मिथिला जाकर शिव जी का धनुष तोड़ा । जनक ने न्यायपूर्वक उन्हें अपनी कन्या दी । ३ परशुराम क्रुद्ध होकर आये, पर उनका घमंड चूर हो गया । ४ धरती के भार को दूर करने के उद्देश्य से देवताओं ने भारी विघ्न किया । ५ दूसरे के उकसाने से कैकेयी ने प्रयास किया कि राम को बारह वर्ष का वनवास हो । ६ शारदा ने कैकेयी का ज्ञान हर लिया । क्या नारी किसी की बात सुनती है ? ७ थाती किया हुआ वर उन्होंने राजा दशरथ से माँग लिया । दशरथ के प्राण चले गये । ८ सीता

लक्ष्मण सीता संगँ राम। पंचवटी मे कैलनि धाम॥ ९॥
भिक्षुक बनि रावण सञ्चरल। शून्याश्रम सौं सीता हरल॥ १०॥
दश-भालक संग लड़ल जटाउ। दृष्ट कथा हम कते शुनाउ॥ ११॥
कानन-कथा सकल से कहल। विरही विकल राम दुख सहल॥ १२॥
किष्किन्धा मे यहन चरित्र। बालि घालि सुग्रीव सुमित्र॥ १३॥
सुग्रीवक हम मन्त्रि प्रधान। नाम हमर कह जन हनुमान॥ १४॥
वानर दूत फिरय सभ देश। सीतान्वेषण मुख्य निदेश॥ १५॥
तहि मे हमहुँ पयोनिधि फानि। अयलहुँ लङ्का जानकि जानि॥ १६॥
वृद्ध गृद्ध कहलनि सम्पाति। घुरि फिरि देखल लङ्का राति॥ १७॥
दबकल दबकल यहि तरु कात। देखल शुनल गञ्जन उतपात॥ १८॥
हम कृतार्थ भेलहुँ अछि आज। हमहि कयल रघुनन्दन-काज॥ १९॥
जनक-नन्दिनी देखल आँखि। अयलहुँ सङ्गी पारहि राखि॥ २०॥

॥ षट्पद छन्द ॥

नहि अछि आज्ञा तेहन, जेहन हम कौतुक करितहुँ॥ २१॥
लङ्कापुरी उखाड़ि प्रभुक पद लग लय धरितहुँ॥ २२॥
दशमुख सौं कय बेरि अपन दुहु पयर धरबितहुँ॥ २३॥
लाँगड़ि मे लपटाय बाँधि सभ लोक फिरबितहुँ॥ २४॥

और लक्ष्मण को साथ ले राम ने पंचवटी में आश्रम बनाया। ९ वहाँ भिखारी बनकर रावण आया। उसने सूने आश्रम से सीता को हर लिया। १० रावण के साथ जटायु ने युद्ध किया। देखी हुई कहानी मैं कितनी सुनाऊँ।" ११ फिर हनुमान बन की सारी कहानी सुनाकर कहने लगे—"विरह से राम ने बहुत दुःख सहे। १२ किष्किन्धा में यह सब काण्ड हुआ। राम ने वालि को मारकर सुग्रीव को मित्र बनाया। १३ मैं सुग्रीव का प्रधान मन्त्री हूँ। लोग मुझे हनुमान कहते हैं। १४ बहुत से वानरों को खास तौर से सीता का अन्वेषण करने का आदेश हुआ है और वे लोग दूत बनकर देश-देश में घूम रहे हैं। १५ उन्हीं दूतों में मैं भी एक हूँ। जानकी लंका में हैं, यह खबर पाकर मैं समुद्र लाँघकर आया हूँ। १६ बूढ़े गृध्र सम्पाती ने रास्ता बताया। रात में घूम-घूमकर मैंने लंका देखी। १७ इसी पेड़ के बगल में दुबके हुए मैंने सारे उत्पात देखे और सारे गंजन सुने। १८ आज मैं कृतकृत्य हो गया। राम का काम मैंने ही सिद्ध किया। १९ जनक की पुत्री अर्थात् आपका दर्शन पाया। मैं साथियों को उसी पार छोड़कर आया हूँ। २० मुझे आज्ञा ही नहीं है वर्ना मैं कुछ करामात दिखाता। २१ लंकापुरी को उखाड़कर प्रभु रामचन्द्र के चरणों के आगे रख देता। २२ रावण से भिड़कर अपने दोनों पैर

जननि थोड़ दिन विपति अछि, सकुल सदल रावण मरत ॥ २५ ॥
गृद्ध काकगण मगन मन, लङ्कापुर डेरा करत ॥ २६ ॥

॥ चौपाइ ॥

धयलैं छली अशोकक डारि । शुनल सकल मन रहलि विचारि ॥ २७ ॥
कहयित के अछि कथा चिन्हार । देखितहुँ लोचन बह जल धार ॥ २८ ॥
दुःख अपार निन्द नहि आब । गगन वचन हित हमर शुनाब ॥ २९ ॥
मरइत राखि लेल जे प्राण । वचन शुनाओल अमृत समान ॥ ३० ॥
दया करथु से दर्शन देथु । सुकृति-समाज सहज यश लेथु ॥ ३१ ॥
शञ्च शञ्च से कयल प्रणाम । हृदय राखि रघुनन्दन राम ॥ ३२ ॥
सीता-वचन शुनल हनुमान । प्रकट भेल कलविङ्क-प्रमाण ॥ ३३ ॥
पीत वर्ण मुख अतिशय लाल । बद्धाञ्जलि मन हर्ष विशाल ॥ ३४ ॥
आगाँ आबि प्रणत कपि रहल । देखइत सीता मनमे कहल ॥ ३५ ॥
वानर-रूप धयल दशकण्ठ । हमरा मोहय कारण चण्ठ ॥ ३६ ॥
रहलि अधोमुखि विकलि अवाक । रावण-भ्रम सँ कतहु न ताक ॥ ३७ ॥
मानिय हमरा जननि न आन । हम रघुपतिक दास हनुमान ॥ ३८ ॥
पवनक तनय विनययुत जानि । सज्जन थिकथि हृदय अनुमानि ॥ ३९ ॥

धराता । २३ पूँछ की लपेट में बाँध अपने सभी लोगों को वापस ले जाता । २४ हे माता, अब विपत्ति के दिन थोड़े रह गये हैं । कुल, परिवार और सेना-सहित रावण की मौत होगी । २५ गीध और कौए खुशी हो लंका में बसेरा करेंगे ।" २६ सीता अशोक की डाल पकड़े खड़ी थीं । उन्होंने सारी बात सुनीं और सोचने लगीं— २७ "यह परिचित कहानी कौन सुना रहा है ? आँखों से उसे देखती, पर हाय ! उनमें तो खारा जल बह रहा है । २८ भारी पीड़ा है जिससे नींद नहीं आती । यह तो आकाश से मेरे हित की बात सुना रहा है । २९ इसने तो अमृत-समान वचन सुनाकर मरते-मरते मेरे प्राण बचा लिये । ३० ऐसा वचन सुनानेवाले दया करके दर्शन दें और पुण्यवानों के बीच समुचित यश पावें ।" ३१ तब हृदय में राम को रखकर धीरे-धीरे सीता ने उन्हें प्रणाम किया । ३२ हनुमान सीता की बात सुनकर गौरैया जैसा छोटा रूप बनाकर सीता के सामने प्रकट हुए । ३३ उनका रंग पीला था, मुँह गाढ़े लाल रंग का था । हाथ जोड़े हुए थे । मन में भारी हर्ष था । ३४ हनुमान सामने आकर झुककर खड़े हो गये । उन्हें देखते हुए सीता मन में सोचने लगीं— ३५ "मुझे ठगने के लिए निष्ठुर रावण ने वानर का रूप धारण किया है ।" ३६ ऐसा सोचकर सीता घबराई-सी मुँह झुकाए चुपचाप खड़ी रहीं । रावण के भ्रम से कहीं झाँक नहीं रही थीं । ३७ तब हनुमान ने कहा— "हे माता, मुझे ग़ैर मत मानिए । मैं राम का दास हनुमान

॥ दोहा ॥

शाखामृग निश्चय अहाँ, हमरा मन विश्वास ॥ ४० ॥
नर-वानर-संघटन-विधि, कारण करू प्रकाश ॥ ४१ ॥

॥ चौपाइ ॥

दूर-स्थित कहलनि हनुमान । जननि कहब हम वचन प्रमाण ॥ ४२ ॥
लक्ष्मण-सहित राम घनश्याम । धनुर्बाण धर छवि अभिराम ॥ ४३ ॥
ऋष्यमूक लग अयला जखन । दृष्टि पड़ल सुग्रीवक तखन ॥ ४४ ॥
हमरा ततय पठौलनि विकल । इष्ट अनिष्ट बुझू विधि सकल ॥ ४५ ॥
इष्ट मानि मन दूनू भाय । लय गेलहुँ हम काँध चढ़ाय ॥ ४६ ॥
अचल सख्य सुग्रीवक सङ्ग । थोड़बहि दिनमे सङ्कट भङ्ग ॥ ४७ ॥
रामक कर-शर बालिक मरण । भव-जलनिधि बाली सन्तरण ॥ ४८ ॥
से सुग्रीव पठाओल दूत । दशदिश वानर वीर बहूत ॥ ४९ ॥
चलयित कहलनि श्रीरघुनाथ । कार्य्य-सिद्धि कपि अहँइक हाथ ॥ ५० ॥
सानुज हमर कुशल सम्भाषि । देव मुद्रिका आगाँ राखि ॥ ५१ ॥
रामक चर प्रभु-मुद्रा सङ्ग । रावण-गण मन कीट पतङ्ग ॥ ५२ ॥
यहि मे तनिक लिखल अछि नाम । देल चिन्हारय कारण राम ॥ ५३ ॥

हूँ।" ३८ फिर सीता ने पवनसुत हनुमान को विनीत देखकर यह अनुमान किया कि ये सज्जन हैं। फिर बोलीं— ३९ "आप वानर हैं, यह विश्वास तो मेरे मन में हो गया, ४० पर यह बताइए कि नर और वानर के बीच यह मेल किस तरह हुआ ?" ४१ दूर रहते हुए ही हनुमान ने उत्तर दिया— "हे माता, मैं पक्की बात बताऊँगा। ४२ धनुष-बाण लिये हुए बादल जैसे श्याम-सुन्दर राम लक्ष्मण-सहित जब ऋष्यमूक पर्वत के पास आये तब सुग्रीव ने उन्हें देखा। ४३-४४ तब घबराए हुए सुग्रीव ने मुझे वहाँ भेजा कि मैं भलीभाँति जान आऊँ कि ये दोस्त हैं या दुश्मन। ४५ मैं दोनों भाइयों को इष्ट (हित) मानकर अपने कन्धे पर लादकर ले गया। ४६ उन्हें सुग्रीव के साथ गहरी मित्रता हो गयी और थोड़े ही दिनों में सुग्रीव के सारे संकट दूर हुए। ४७ राम के हाथ के बाण से वालि का मरण हुआ और वह भव-सागर पार कर गया। ४८ उन्हीं सुग्रीव ने अनगिनत वानरों को दूत बनाकर दसों दिशाओं में भेजा। ४९ विदा होते समय राम ने मुझसे कहा था— "मेरा काम आप ही के हाथ से बनेगा। ५० सीता को लक्ष्मण-सहित मेरा कुशल सुनाइएगा और यह मुद्रिका आगे रख दीजिएगा। ५१ मैं राम का दूत हूँ। उनकी मुद्रा (अँगूठी) मेरे साथ है। मैं रावण के दल को कीड़ा-पतिंगा समझता हूँ। ५२ इस मुद्रा में राम का नाम लिखा हुआ है। यह राम ने पहचान के रूप में दिया है। ५३ चाहें तो कुबेर को निर्धन बना दें और निर्धन को कुबेर बना

॥ षट्पद ॥

निर्धन करथि कुबेर, कुबेर करथि प्रभु निर्धन ॥ ५४ ॥
जे चाहथि से करथि, देव कौशल्या-नन्दन ॥ ५५ ॥
हम आयल छी सिन्धु फानि, देखल लङ्का-भट ॥ ५६ ॥
हमरहु ई सामर्थ्य, दशानन मारी चटपट ॥ ५७ ॥
लेल जाय प्रभु-मुद्रिका, मानी जनु किछु आन मन ॥ ५८ ॥
प्रणत ठाढ़ दय मुद्रिका, हाथ जोड़ि रहला तखन ॥ ५९ ॥

॥ चौपाइ ॥

चिन्हल मुद्रिका माथा धयल । कत विलाप कनइत तत कयल ॥ ६० ॥
कियक कयल रघुवर-कर त्याग । हमरे सन की भेल अभाग ॥ ६१ ॥
राम भवन वन हम अहँ बाट । सभ जनि स्नान कयल एक घाट ॥ ६२ ॥
के कर वनिता-जन विश्वास । कहु कहु मुद्रा वचन प्रकाश ॥ ६३ ॥
प्राण-दान कपि कयलहुँ आय । मरितहुँ एहिखन सङ्कट पाय ॥ ६४ ॥
प्रभुकाँ अहँक सदृश नहि आन । हमरहु भेल विदित अनुमान ॥ ६५ ॥
हमरा निकट पठाओल नाथ । देल मुद्रिका अहँइक हाथ ॥ ६६ ॥
गञ्जन दुःख देखल प्रत्यक्ष । कहबनि सानुज प्रभुक समक्ष ॥ ६७ ॥
दया करथु आबथु रघुनाथ । यम-घर पहुँच शीघ्र दशमाथ ॥ ६८ ॥
दुइ मास जखना बिति जयत । नहि जौं अयोता राक्षस खयत ॥ ६९ ॥

दें । ५४ कौशल्या के पुत्र राम जो चाहें सो कर सकते हैं । ५५ मैं समुद्र लाँघकर आया हूँ । लंका के सनिकों को देख लिया है । ५६ मुझमें भी इतनी ताक़त है कि रावण को चटपट मार डालूँ । ५७ राम की मुद्रिका लीजिए । मन में किसी तरह की शंका मत कीजिए ।" ५८ इतना कहकर हनुमान हाथ जोड़े और सिर झुकाये खड़े रहे । ५९ सीता ने मुद्रिका को पहचाना । उसे सिर पर रखा । फिर बहुत रोने-बिलखने लगीं । ६० "हे मुद्रिका, तुमने राम के हाथ को क्यों छोड़ा ? क्या तुम्हें भी मुझ जैसा अभाग्य हो गया ? ६१ राम के घर में, वन में और रास्ते में हम और तुम सबों ने एक ही घाट में स्नान किया । ६२ नारी पर कौन विश्वास कर सकता है ? हे मुद्रिका, बोलो और मुझे बतलाओ । ६३ हे कपि, आपने मेरी जान बचायी । संकट से घबराकर मैं अभी मर जाती । ६४ अब मुझे भी अनुमान से यह समझ में आ गया कि राम के लिए आप-जैसा कोई दूसरा नहीं है । ६५ राम ने आपको मेरे पास भेजा और आप ही के हाथ यह मुद्रिका दी । ६६ आपने मेरा गंजन और दुःख अपनी आँखों से देख लिया । लक्ष्मण-सहित राम को यह सब मालूम करा दीजिएगा । ६७ अब राम दया करके आवें और रावण जल्द यमपुर पहुँचे । ६८ दो महीने बीत जाने पर यदि नहीं आएँगे तो राक्षस मुझे

कपिपति सहित सैन्य समुदाय। लय आबथु सङ्कट छुटि जाय॥ ७०॥
यावत नहि रावण-संहार। तावत हमरा कारागार॥ ७१॥
तेहन उपाय करब हनुमान। सत्वर रावण त्यागय प्राण॥ ७२॥
मारुत-सुत कह शुनु जगदम्ब। हमरा जयबा धरिक विलम्ब॥ ७३॥
ककरा रावण कयल न आट। हुनका यमघर गेलहिँ बाट॥ ७४॥
सायुध अयोता लक्ष्मण राम। अहँ काँ लय जयता निज धाम॥ ७५॥
पुछल जानकी कहु कहु कीश। कुशल करथु अहँ काँ जगदीश॥ ७६॥

॥ चरणकुल दोहा॥

लाँघि समुद्र सहित कपिसेना, सानुज करुणागेह॥ ७७॥
अयोता कोन उपाय कहू कपि, हमरा मन सन्देह॥ ७८॥

॥ चौपाइ॥

हमरा काँध चढ़ल दुहु बन्धु। अयोता लाँघि अगम्य कि सिन्धु॥ ७९॥
सैन्य सहित कपि बालिक भाय। सभकेँ लओता गगन उड़ाय॥ ८०॥
से कर रावण सगण विनाश। हुनका नहि रण कालक त्रास॥ ८१॥
आज्ञा देल जाय हम जाउ। रावणारि केँ सत्वर लाउ॥ ८२॥
देल मुद्रिका परिचय काज। प्रत्यय-पात्र हमहुँ तँ आज॥ ८३॥
परिचायक किछु भेटय तेहन। कहब शुनल देखल अछि जेहन॥ ८४॥

खा जाएँगे। ६९ सुग्रीव के साथ सेना लेकर आवें, ताकि मुझे संकट से त्राण मिले। ७० जब तक रावण मारा नहीं जाएगा तब तक मैं क़ैद में रहूँगी। ७१ हे हनुमान, आप ऐसा उपाय करें जिससे जल्द रावण प्राण त्याग करे।" ७२ हनुमान ने कहा— "हे माता, सुनिए। मेरे जाने भर की देर है। ७३ रावण ने किसको तबाह नहीं किया। अब उसको यमपुर जाना ही है। ७४ हथियारों के साथ राम और लक्ष्मण आएँगे और आपको लौटाकर ले जाएँगे।" ७५ फिर जानकी ने पूछा— "हे कपि, कहिए। ईश्वर आपका कल्याण करे। ७६ परम दयालु राम वानरी सेना और भाई लक्ष्मण के साथ किस तरह समुद्र पार करके आ सकेंगे, इसके बारे में मेरे मन में संशय होता है।" ७७-७८ हनुमान ने कहा— "दोनों भाई मेरे कन्धों पर सवार हो समुद्र लाँघकर आ जाएँगे। मेरे लिए समुद्र अगम्य नहीं है। ७९ वालि के भाई सुग्रीव सेना-सहित सबों को आकाश-मार्ग से उड़ाकर लावेंगे। ८० वे सदल-बल रावण का नाश करेंगे। युद्ध में उनको काल का भी डर नहीं होता। ८१ आज्ञा दीजिए ताकि मैं जल्द जाऊँ और रावण के शत्रु राम को शीघ्र ले आऊँ। ८२ पहचान के लिए राम ने मुझे मुद्रिका दी जिससे आज मैं आपका विश्वासपात्र हुआ। ८३ ऐसी ही कोई पहचान की वस्तु मुझे दीजिए। मैं

चूड़ामणि देल सहित विचार। दीना दीनदयालुक द्वार ॥ ८५ ॥
कागत मसि नहि अछि यहि ठाम। कोटि कोटि कहि देब प्रणाम ॥ ८६ ॥
जिबइत छथि जानकि तहि देश। दशमुख विशभुज बस असुरेश ॥ ८७ ॥
चित्रकूट गिरि जखन निवास। गुप्त-कथा कहि देब प्रकाश ॥ ८८ ॥
शयित छला प्रभु हमरा अङ्क। सुख सुषुप्ति प्रिय काँ निश्शङ्क ॥ ८९ ॥
इन्द्रक बालक कालक फेर। काक बनल आयल ओहि बेर ॥ ९० ॥
चरणाङ्गुष्ठ मे चञ्चु प्रहार। अबितहिँ कयलक रहित-विचार ॥ ९१ ॥
के दुख देलक अहँकाँ दुष्ट। जगला लगला पूछय रुष्ट ॥ ९२ ॥
अपनहुँ देखल तखनहुँ काक। उड़ि उड़ि आबय निर्भय ताक ॥ ९३ ॥
चहलक पुन हम मारब लोल। उठल निवारण कारण घोल ॥ ९४ ॥
तृणकाँ लय दिव्यास्त्र बनाय। तनिकाँ ऊपर देल चलाय ॥ ९५ ॥
देखलनि ज्वलित अबै अछि बाण। कि कहब उड़ला लै के प्राण ॥ ९६ ॥
इन्द्रादिक नहि रक्षा कयल। फिरि घुरि पुन प्रभु-शरणे धयल ॥ ९७ ॥
त्राहि त्राहि राखू एहि बेरि। करब उपद्रव हम नहि फेरि ॥ ९८ ॥

राम को वह सब बताऊँगा जैसा मैंने यहाँ देखा और सुना है।" ८४ यह सुनकर दीनदयालु राम की दीन पत्नी ने मन में विचार करके हनुमान को अपना टीका उतार कर दे दिया और कहा। ८५ "यहाँ काग़ज़ और स्याही नहीं है, इसलिए ज़ुबानी ही मेरा कोटि-कोटि प्रणाम कहिएगा। ८६ और कहिएगा कि जानकी उस देश में जीती है जहाँ दस मुँह और बीस भुजाओं वाला राक्षसराज रावण रहता है। ८७ जब हम लोग चित्रकूट पर्वत पर रहते थे, उस समय की एक घटना उन्हें याद करा दीजिएगा। ८८ राम मेरी गोद में सोए हुए थे। वे निःशंक हो सुखपूर्वक निद्रा में लीन थे। ८९ काल के फेर में पड़कर इन्द्र का लड़का जयन्त उस समय कौए का रूप धारणकर वहाँ आया। ९० उसने बिना सोचे-विचारे मेरे पाँव के अँगूठे में चोंच मारा। ९१ राम की नींद टूट गई और वे क्रुद्ध हो पूछने लगे— "किस दुष्ट ने तुमको यह कष्ट दिया?" ९२ मैंने स्वयं भी देखा, वह कौआ तब भी निडर हो देखते हुए बार-बार उड़-उड़कर आता था। ९३ उसने फिर चोंच मारना चाहा। रोकने पर वह हुड़दंग मचाने लगा। ९४ तब राम ने एक तिनके को उठाया और उसे दिव्य अस्त्र बनाकर उस कौए पर छोड़ दिया। ९५ कौए ने देखा कि जलता हुआ बाण आ रहा है, क्या कहूँ, देखते ही जान लेकर भागा। ९६ इन्द्र आदि देवता भी उस बाण से उस कौए को रक्षा नहीं कर सके। फिर वह लौटकर राम की शरण में आ गिरा। ९७ बोला— "त्राहिमाम्। इस बार मुझे बचा दीजिए। फिर मैं कभी ऐसा उपद्रव नहीं करूँगा। ९८

चरण न छोड़ गेल लपटाय। अस्त्र अमोघ वृथा नहि जाय॥ ९९॥
इन्द्रक बालक कौआ जाह। एक आँखि कय देबहु कनाह॥ १००॥
काक-स्वरूप ज्ञात संसार। आकृति जेहन तेहन व्यवहार॥ १०१॥
से पौरुष से प्रभु रघुनाथ। अजगुत जिबितहिँ अछि दशमाथ॥ १०२॥
ई शुनि कहल तखन हनुमान। अयोता शीघ्र राम भगवान॥ १०३॥
लङ्का नगरी सकल उजारि। जयता घर घुरि रावण मारि॥ १०४॥

॥ दोहा ॥

कहल जानकी अहिँक सन, कपिदल शूक्ष्म-शरीर॥ १०५॥
युद्ध असम्भव असुर सौँ, नहि होइछ मन थीर॥ १०६॥

॥ कुण्डलिया ॥

शुनइत सीता-वचन कपि, पूर्व्व-रूप बनि गेल॥ १०७॥
कनक शैल-शंकाश तन, मन अति हर्षित भेल॥ १०८॥
मन अति हर्षित भेल, कहल सभ गुण अहँ आगर॥ १०९॥
मेरु सदृश अहँ मथित, करब रावण-बल-सागर॥ ११०॥
देखति राक्षसि लोक, एखन धरि नहि अछि जनइत॥ १११॥
कुशल प्रभुक तट जाउ, कहब जे छल छो शुनइत॥ ११२॥

वह राम के चरणों से लिपट गया और छोड़ता नहीं। पर राम का अस्त्र तो बेकार जानेवाला नहीं। ९९ राम ने कहा—"हे इन्द्र के पुत्र काक, तुम जाओ। तुम एक आँख से काने हो जाओगे। १०० तुम कौए के रूप में संसार में प्रख्यात हो जाओगे। तुम्हारी जैसी भद्दी सूरत है, वैसा ही भद्दा आवरण होगा। १०१ पौरुष वही है, राम वही हैं, पर आश्चर्य की बात है कि रावण अभी तक जीता ही है।" १०२ यह सुनकर हनुमान ने कहा—"भगवान राम शीघ्र ही आवेंगे। १०३ सारी लंकापुरी को उजाड़कर और रावण को मारकर घर लौटेंगे।" १०४ जानकी ने कहा—"वानरों की सेना में तो सभी बन्दर आप ही की तरह अति छोटे-छोटे क़द के होंगे। १०५ राक्षसों से उनकी लड़ाई असम्भव लगती है। इसी से मेरे मन में विश्वास नहीं होता।" १०६ सीता की यह बात सुनते ही हनुमान ने फिर अपना पिछला रूप धारण कर लिया। १०७ उनका शरीर सोने के पर्वत के समान हो गया। यह देखकर सीता हर्षित हो उठीं। १०८ उनका मन हर्षित हुआ, और उन्होंने कहा—"आप सभी गुणों के खजाने हैं। १०९ रावण की सेना रूपी समुद्र को मेरु की तरह मथ डालेंगे। ११० राक्षसियाँ, जो अभी तक आपका आना नहीं जानती हैं, देख लेंगी। १११ आप कुशलपूर्वक प्रभु राम के पास जाइए और जो कुछ सुना है, उन्हें सुनाइएगा।" ११२

॥ कवित्त रूपक घनाक्षरी ॥

बड़ हम भूषल चलल नहि जाइ अछि ॥ ११३ ॥
आज्ञा देल जाय जाय फल किछु खाय लेब ॥ ११४ ॥
'चन्द्र' भन रामचन्द्र-चरण-भरोस मन ॥ ११५ ॥
अपनैँक पदधूरि माथ मे लगाय लेब ॥ ११६ ॥
चलल प्रबल पवमान हनुमान वीर ॥ ११७ ॥
मनमे कहल फल खाय कैं अघाय लेब ॥ ११८ ॥
प्रभुक विमुख दश-मुखक सन्मुख जाय ॥ ११९ ॥
शूरता देखाय नाम अपन बजाय लेब ॥ १२० ॥
तड़पि तड़पि तत तरु तड़ तड़ तोड़ि ॥ १२१ ॥
रोक के अशोक-वर-वाटिका उजाड़ि देल ॥ १२२ ॥
रहल न चैत्य तरु महल ढहल कत ॥ १२३ ॥
सीताक निवास शिंशपाक तरु छाड़ि देल ॥ १२४ ॥
पकड़ पकड़ कपि जाय न पड़ाय कहूँ ॥ १२५ ॥
कहल तनिकाँ मारि पृथिवी मे पाड़ि देल ॥ १२६ ॥
लङ्कापुर जाय जहाँ सङ्गी न सहाय ॥ १२७ ॥
तहाँ मारुत-नन्दन रौद्र वीरता उघाड़ि देल ॥ १२८ ॥

हनुमान का बाग में जाकर फल खाना, पेड़ तोड़ना और मेघनाद द्वारा बाँधा जाना

हनुमान ने कहा— "हे माता मैं बड़ा भूखा हूँ। भूख से चला नहीं जाता है। ११३ आज्ञा मिले तो बाग में जाकर कुछ फल खा लूँ। ११४ चन्द्र कवि कहते हैं, मन में राम के चरण का भरोसा है। ११५ आपके चरण की धूल सर में लगा लूँगा।" ११६ इतना कहकर प्रबल वायु के समान वीर हनुमान चल पड़े और मन में सोचा कि "जी भर फल खाऊँगा। ११७-११८ राम के शत्रु रावण के सम्मुख जाकर शूरता दिखाकर अपना नाम कर लूँगा।" ११९-१२० इतना सोच हनुमान छलाँग मार-मारकर तड़ातड़ पेड़ तोड़ने लगे। कौन रोक सकता था। उन्होंने सुन्दर अशोक वाटिका को उजाड़ दिया। १२१-१२२ वहाँ एक भी चैत्य तरु न बचा। अनगिनत महल ढह गये। केवल वह शीशम का पेड़ छोड़ दिया गया जहाँ सीता टिकी हुई थीं। १२३-१२४ जो रक्षक 'पकड़ो! बन्दर को पकड़ो! कहीं भाग न जाए।' इस तरह कहते हुए आये, उन्हें मार-मारकर धरती पर लिटा दिया। १२५-१२६ किसी साथी या मददगार के बिना लंकापुरी जाकर पवनसुत हनुमान ने अपनी भयानक वीरता दिखा दी। १२७-१२८ विकटा

॥ चौपाइ ॥

विकटा-गण मन गेलि डराय। कल कौशल सीता लग जाय॥ १२९॥
कहु कहु जानकि कपि निर्भीक। बुझला जाइछ थिकथि अहींक॥ १३०॥
बजइत छलहुँ कलपि किछु शञ्च। चुप चुप कयल कि अहाँ प्रपञ्च॥ १३१॥
हमरा त्रास अहाँ निस्त्रास। मन मे जनु दृढ़ भय गेल आश॥ १३२॥
कनइत छलहुँ भेलहुँ अछि चूप। देखि पड़ आनन हर्षक रूप॥ १३३॥
जानकि कहू करी जनु लाथ। कहिया अओता पति रघुनाथ॥ १३४॥
सभ जनि शुनु विपतलि की बाज। थिक प्रपञ्च किछु राक्षस-राज॥ १३५॥
अपनहिँ सभहिँ कहू की थीक। राक्षस माया-ज्ञान अधीक॥ १३६॥
राक्षसि-दशा कहल की जाय। गमहि गमहि सभ गेलि पड़ाय॥ १३७॥

॥ दोहा ॥

सीता कारागार मे, यामिक दनुजो जानि॥ १३८॥
दशमुख पुछलनि कह कुशल, भयभीता अनुमानि॥ १३९॥

॥ दोवय छन्द ॥

त्रास देखाय करू वश सीता, कहल भेल की अयलहुँ॥ १४०॥
सीताकां एकसरि की त्यागल, एको जनि उचित न कयलहुँ॥ १४१॥

आदि राक्षसियाँ डर गयीं और धीरे से सीता के पास जाकर पूछने लगीं— १२९ "जानकी, बताइए तो यह बन्दर जो बड़ा निडर मालूम होता है, आप ही का है क्या? १३० आप तो बिलख-बिलख कर धीरे-धीरे बोलती थीं। चुपके से कोई चाल तो नहीं रची हैं? १३१ हम लोग तो डर गयी हैं, पर आपका डर जाता रहा। लगता है आपके मन में कोई पक्की आशा जग गयी है। १३२ आप रोती रहती थीं, अब चुप हो गयी हैं। आपके चेहरे पर हर्ष का आभास दिखायी देता है। १३३ हे जानकी, बताइए; हम लोगों से छुपाइए नहीं। आपके पति राम कब आनेवाले हैं?" १३४ सीता ने उत्तर दिया— "सब कोई सुनिए। विपत्ति में फँसी हुई मैं क्या बोलूँ? यह राक्षसराज रावण का कुछ प्रपंच मालूम होता है। १३५ आप लोग ही बता सकती हैं कि क्या बात है? राक्षस लोगों को मायाजाल का ज्ञान अधिक रहता है।" १३६ राक्षसियों की जो हालत हुई वह क्या बताएँ? एक-एक कर सभी भाग गयीं। १३७ सीता क़ैद में हैं और राक्षसियाँ पहरा करनेवाली हैं। १३८ यह जानकर रावण ने उन्हें डरी-सी देखकर पूछा— १३९ "मैंने तो कहा था कि डरा-धमकाकर सीता को राजी करो। फिर क्या हुआ कि यहाँ आयी हो? १४० सीता को अकेली छोड़ दिया, कोई भी वहाँ न रही, यह अनुचित किया।" १४१ रावण की बात सुनकर उन्होंने कहा— "हम सेवा करते-करते

दशमुख-वचन शुनल से कहलनि, सेवा कयल अघयलहुँ ॥ १४२ ॥
मर्क्कट एहन विकट नहि देखल, लय लय प्राण पड़यलहुँ ॥ १४३ ॥
रक्षक मध्य एको जन नहि छथि, तनिके वार्त्ता लयलहुँ ॥ १४४ ॥
सकल अशोक वाटिका उजड़ल, सीता निकट नुकयलहुँ ॥ १४५ ॥
राजकीय पन्थेँ के सञ्चर, उबटे पथ धय अयलहुँ ॥ १४६ ॥
सीता त्रास देखाबय गेलहुँ, अपनहिँ त्रासित भेलहु ॥ १४७ ॥

॥ पादाकुल दोहा ॥

सीता मन आनन्दित देखल, पुछलेँ कयलनि लाथ ॥ १४८ ॥
हुनकर रङ्ग तेहन सन देखल, लङ्का-जय जनु हाथ ॥ १४९ ॥
निर्भय कपि की सहजहिँ जायत, भिड़ता से मरताह ॥ १५० ॥
कालरूप कपि सङ्गर भेलेँ, नहि घर केओ घुरताह ॥ १५१ ॥

॥ घनाक्षरी ॥

जानकी निकट हम जायब कि घूरि पुन ॥ १५२ ॥
कनक-भूधर सन वानर विशाल से ॥ १५३ ॥
काँच ओ पाकल फल एको न बचल हाय ॥ १५४ ॥
खाय सभ गेल कत गोट मुह गाल से ॥ १५५ ॥
आयल कहाँ सौँ कहाँ छल हम देखल न ॥ १५६ ॥
बाल दिनकर सन बड़ मुह लाल से ॥ १५७ ॥

आजिज हो गयीं। १४२ ऐसा डरावना बन्दर हमने कभी नहीं देखा। हम जान बचाकर भाग आयी हैं। १४३ रक्षकों में एक भी वहाँ नहीं रहा। उन्हीं का हाल बताने हम यहाँ आयी हैं। १४४ सारी अशोक वाटिका उजड़ गयी। हम सीता के पास जाकर छुप गयीं। १४५ राजमार्ग से चलने का कौन साहस करेगा ? इसलिए हम बेरास्ते आयी हैं। १४६ हम सीता को त्रस्त करने चलीं पर स्वयं त्रस्त हो गयी हैं। १४७ सीता का मन बड़ा प्रसन्न देखा। पूछने पर उन्होंने बहाना कर दिया। १४८ उनका रंग ऐसा दिखायी दिया जैसे लंका-विजय उनके हाथ में हो। १४९ यह निडर बन्दर यों ही नहीं हटेगा। जो उससे भिड़ेगा वह मौत के घाट उतरेगा। १५० यह बन्दर तो मानों काल होकर आया है। लड़ाई होने पर कोई ज़िन्दा नहीं लौटेगा। १५१ अब हम फिर लौटकर जानकी के पास नहीं जाएँगी। १५२ वह बन्दर तो सोने के पहाड़-जैसा विशालकाय है। १५३ कच्चा या पका एक भी फल न बचा। १५४ वह सभी फल खा गया। कितना बड़ा उसका मुँह और गाल था ! १५५ वह कहाँ से आया और कहाँ छुपा था, हमने कुछ नहीं देखा। १५६ उसका मुँह उदयकाल के सूरज-जैसा लाल था। १५७ हे

देखू दशभाल की अशोक-वन हाल भेल ॥ १५८ ॥
मरि गेल रक्षक बेहट्ट कपि काल से ॥ १५९ ॥

॥ दोधय छन्दः ॥

शुनितहिँ शीघ्र पठाओल सेना, बहुत निकट भट गेला ॥ १६० ॥
लोहदण्ड-धर जहँ उदण्ड कपि, तनिकर सन्मुख भेला ॥ १६१ ॥
सिंहनाद कय सभकाँ मारल, नहि रण मे कपि हारल ॥ १६२ ॥
अर्द्ध-मरण सम भेल कतो जन, रावण निकट पुकारल ॥ १६३ ॥
महाकाल वानर-तन धयलनि, लङ्का-नाशक कारण ॥ १६४ ॥
क्षणमे विपिन अशोक उजाड़ल, फल-चय कयलनि पारण ॥ १६५ ॥
साहस लङ्का निर्भय आयल, के करताह निवारण ॥ १६६ ॥
लङ्कापति अपनहुँ चलि देखू, की थिक करु निर्धारण ॥ १६७ ॥

॥ रूपमाला ॥

गेल छल सङ्ग्राम किङ्कर, निहत शुनि दशभाल ॥ १६८ ॥
कोप सौँ सत्वर पठाओल, पाँच सेना-पाल ॥ १६९ ॥
स्तम्भ लौहक हाथ लयकेँ, तनिक तेहन हाल ॥ १७० ॥
कयल मारुत-तनय विजयी, समरमे तत्काल ॥ १७१ ॥

रावण, देखिए, अशोक वाटिका का क्या हाल हो गया है ? १५८ रखवाले मर गये और वह बन्दर काल-जैसा अडिग है।" १५९ सुनते ही रावण ने तुरत सेना भेजी। बहुत से बड़े-बड़े योद्धा गये। १६० वे योद्धा लोग वहाँ पहुँचे जहाँ लोहे का डंडा लिये उद्दंड हनुमान थे। वे उनके सामने आये। १६१ सिंह की भाँति दहाड़कर हनुमान ने सबको मार डाला। वे हारनेवाले नहीं थे। १६२ कई अर्द्धमृत-से हो भागकर रावण के पास जाकर चिल्लाने लगे— १६३ "महाकाल ने मानों लंका को नाश करने के लिए बन्दर का रूप धारण कर लिया है। १६४ उसने क्षण भर में अशोक वाटिका को उजाड़ दिया, फलों को चट कर गया। १६५ साहस के साथ बिना किसी डर के वह लंका आ गया है, उसे कौन रोक सकता है ? १६६ हे लंकापति रावण, आप स्वयं भी चलकर देखिए और गौर कीजिए कि यह क्या है ?" १६७ लड़ाई में जो सैनिक भेजे गये थे वे सभी मारे गये, यह सुनकर रावण क्रुद्ध हो उठा और तुरत पाँच सेनापतियों को भेजा। १६८-१६९ ये सेनापति लोग लौह-दण्ड हाथ मे लेकर मैदान में उतरे। हनुमान ने लोहे के डंडे से उनका भी वही हाल किया और वे लड़ाई में तुरत जोत गये। १७०-१७१ तब मन्त्रियों के सात बेटे लड़ाई

तखन मन्त्रिक सात बालक, युद्ध-उद्यत भेल ।। १७२ ।।
क्रोध सौँ रावण पठाओल, गेल ईर्ष्या लेल ।। १७३ ।।
सकल जनकेँ मारि मारुत-तनय पुन तहि ठाम ।। १७४ ।।
स्तम्भ लौहक अस्त्र एकटा, जितल भल संग्राम ।। १७५ ।।

।। चौपाइ ।।

अगुआ चलला अक्षयकुमार । कयल बहुत सेना सहिआर ।। १७६ ।।
ततय बाट तकितहिँ हनुमान । के पुन अओता जयतनि प्राण ।। १७७ ।।
अबइत देखल अक्षयकुमार । मनमन मानल हर्ष अपार ।। १७८ ।।
मुदगर कर लय उड़ल अकाश । सत्वर हिनकर करब विनाश ।। १७९ ।।
मुदगर लय कर लगले घूरि । रावण-सुतक माथ देल चूरि ।। १८० ।।
रणमे माँचल हाहाकार । मुइला मुइला अक्षयकुमार ।। १८१ ।।
कन्नारोहट उठ बड़ घोल । लड़त कहाँ के भमरल गोल ।। १८२ ।।
सेना लड़ि लेलक मरिपोष । के सह मारुत-नन्दन रोष ।। १८३ ।।
वार्ता विदित भेल दरबार । नहि छथि जिबइत अक्षयकुमार ।। १८४ ।।
शुनि रावणमन पैसल शोक । बाहर छल भल बुझय न लोक ।। १८५ ।।
छल छथि अतिबल प्रबल प्रताप । रावण सन जनिकाँ छथि बाप ।। १८६ ।।
मेघनाद सन जनिकाँ भाय । वानर-हाथ मरण अन्याय ।। १८७ ।।

के मैदान में आये । क्रुद्ध हो रावण ने उन्हें भेजा और वे ईर्ष्या के साथ मदान में उतरे । १७२-१७३ हनुमान ने एक मात्र अस्त्र लोहे के डंडे से वहाँ सबो को मार दिया और लड़ाई जीत गये । १७४-१७५ तब अक्षयकुमार भारी सेना सजाकर चले । १७६ उधर हनुमान राह जोह ही रहे थे कि अब कौन आता और प्राण गँवाता है ? १७७ अक्षयकुमार को आते देख हनुमान मन ही मन खूब खुश हुए । १७८ वे हाथ में मुग्दर ले आकाश में उड़ गये ताकि तुरत इनका अन्त कर दें । १७९ मुग्दर हाथ में लिए तुरत आकाश से लौटे और रावण के पुत्र अक्षयकुमार के माथे को चकनाचूर कर दिया । १८० रणभूमि में हाहाकार मच गया कि अक्षयकुमार मारा गया ! १८१ सर्वत्र करुण क्रन्दन की आवाज़ छा गयी । कौन कहाँ लड़ता है ? सेना के दल में भगदड़ मच गयी । १८२ सेना अपनी ताकत भर लड़कर हार गयी । हनुमान का गुस्सा कौन बरदाश्त कर सकता था ? १८३ इस बात की ख़बर रावण के दरबार में पहुँची कि अक्षयकुमार ज़िन्दा नहीं रहे । १८४ सुनते ही रावण के मन में शोक समा गया पर बाहर से वह गम्भीर बना रहा, ताकि लोग उसके शोक को न जानें । १८५ अक्षयकुमार परम बलवान और प्रबल पराक्रमी था । जिसे रावण-जैसा पिता हो और मेघनाद-जैसा भाई हो उसकी मृत्यु बन्दर के हाथ हो यह बड़ा गड़बड़ हुआ । १८६-१८७ लंकेश्वर रावण के मन में

लङ्कापति-मन कोप अपार। मेघनाद सौं कयल विचार॥ १८८॥
कय बेरि बजला भेल अन्धेरि। हम अपनहिँ जायब एहि बेरि॥ १८९॥
अक्षयकुमारक अरि जहिठाम। ततय जाय जीतब सङ्ग्राम॥ १९०॥
मारब अथवा बाँधब जाय। अहँइक लग हम देब पहुँचाय॥ १९१॥
मेघनाद कहलनि शुनु तात। वानर कयलक अछि उतपात॥ १९२॥
शोक-वचन जनु बाजल जाय। हम जिबइतछी अक्षयक भाय॥ १९३॥
आनब अपनेक निकट बझ.य। हमर पराक्रम देखल जाय॥ १९४॥

॥ चरणाकुल दोहा ॥

ई कहि रथ चढ़ि राक्षस भट लय, मेघनाद चललाह॥ १९५॥
मारुत-नन्दन शत्रु-निकन्दन, कपिवर जतय छलाह॥ १९६॥

॥ चौपाइ ॥

ओ रावण रावण-सन आन। अबइछ होइछ मन अनुमान॥ १९७॥
गरजल गरुड़ जकाँ नभ जाय। स्तम्भ महा-ोट हाथ उठाय॥ १९८॥
घुमइत गगन छला हनुमान। रावण-पुत्र चलौलक बाण॥ १९९॥
आठ हृदयमे माथा पाँच। युगल चरण मे छयो नाराच॥ २००॥
पुच्छ मध्य मारल एक बाण। मारि कयल धुनि सिंह-समान॥ २०१॥

भारी क्रोध जगा। उसने मेघनाद से विचार-विमर्श किया। १८८ रावण कई बार बोले— "अँधेरा हो गया! इस बार मैं खुद जाऊँगा। १८९ जहाँ अक्षयकुमार का शत्रु है वहाँ जाकर युद्ध में विजय प्राप्त करूँगा। १९० या तो मार डालूँगा या बाँधकर तुम्हारे ही पास पहुँचा दूँगा।" १९१ यह सुनकर मेघनाद ने कहा— "हे पिता जी सुनिए। बन्दर ने उपद्रव किया है। १९२ शोकवश ऐसा मत बोलिए। अक्षयकुमार का भाई मेघनाद मैं जीता ही हूँ। १९३ मैं उस बन्दर को बाँधकर आपके पास लाऊँगा। मेरा पराक्रम देखिए।" १९४ इतना कहकर मेघनाद रथ पर सवार हो राक्षस योद्धाओं को साथ ले वहाँ चल पड़ा जहाँ शत्रु का संहार करनेवाले पवनसुत हनुमान थे। १९५-१९६ उधर हनुमान मेघनाद को आते देख सोचने लगे— इसे आते देख लगता है कि या तो यह खुद रावण या रावण के समान ही कोई और है। १९७ फिर हाथ में एक बहुत बड़ा खम्भा उठाये गरुड़ की भाँति आकाश में उड़ गये और गर्जन किया। १९८ हनुमान आकाश से नीचे की ओर लौट ही रहे थे कि रावण के पुत्र मेघनाद ने बाण चलाये। १९९ आठ बाण उनके हृदय में लगे, पाँच माथे में और छः-छः दोनों पैरों में। २०० एक बाण उनकी पूँछ में लगा। इस प्रकार बाण मारकर मेघनाद ने सिंहगर्जन किया। २०१

कोप-विवश मारुत-सुत घूरि। रथ घोड़ा सारथि देल चूरि॥ २०२॥
दोसर रथ चढ़ि आयल फेरि। कहल तोहर दुर्गति यहि बेरि॥ २०३॥
नहि जीतब मन बूझल जखन। ब्रह्मास्त्रेँ कपि बाँधल तखन॥ २०४॥
ब्रह्मास्त्रक कपि राखल मान। अपनहि बझला मन किछु आन॥ २०५॥
बाँधल बाँधल भय गेल सोर। यहन विश्व नहि घातो चोर॥ २०६॥
बाँधल अछि लय चलु दरबार। करब तेहन जे दशक विचार॥ २०७॥
जीवन्मुक्त थिकथि हनुमान। कि करत तनिका बन्धन आन॥ २०८॥
राम-चरण-पङ्कज मन धयल। मारुत-सुत बड़ लीला कयल॥ २०९॥

॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे सुन्दरकाण्डे तृतीयोऽध्यायः॥

॥ अथ चतुर्थोऽध्यायः॥

॥ चौपाइ॥

बाँधल काँ पुरजन मिलि मार। कौतुक पहुँचल दशमुख-द्वार॥ १॥
त्रास-हीन हर्षित हनुमान। केवल कौशलेश-पद ध्यान॥ २॥

हनुमान गुस्से के साथ आकाश से लौटे और मेघनाद के रथ, घोड़ों और सारथी को चूर-चूर कर दिया। २०२ फिर मेघनाद दूसरे रथ पर चढ़कर आया और बोला— "इस बार तुम्हारी दुर्दशा होगी।" २०३ जब मेघनाद को यह मालूम हो गया कि लड़ाई में जीत नहीं सकूँगा, तब उसने ब्रह्मास्त्र चलाकर हनुमान को बाँध दिया। २०४ हनुमान ने ब्रह्मास्त्र का मान रखा और मन में कुछ और बात सोचकर खुद उसमें बँध गये। २०५ शोर मच गया— बाँधा! बाँधा! मेघनाद बोले— "ऐसा विनाशकारी चोर तो दुनिया भर में नहीं है। २०६ इसे बाँध लिया है। ले चलिए रावण के दरबार में। वहाँ दस लोगों का जैसा विचार होगा वैसा किया जाएगा।" २०७ हनुमान तो जीवनमुक्त हैं, उन्हें और कोई क्या बाँध सकेगा? २०८ तब हनुमान ने मन में राम के चरण-कमल का ध्यान किया और अजब लीला की। २०९

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में
सुन्दरकाण्ड का तीसरा अध्याय समाप्त॥

चौथा अध्याय

रावण के दरबार में हनुमान का उससे संवाद

बाँधे हुए हनुमान को नगर के लोग मिलकर पीटते हैं और यह तमाशा रावण के दरबार में पहुँचा। १ पर हनुमान को कोई डर नहीं है, वे केवल राम के चरण का ध्यान करते हुए प्रसन्न हैं। २ सबों की पिटाई और गाली

मारि गारि सबहिक सहि लेथि। पामर काँ नहि उत्तर देथि॥ ३॥
मेघनाद कहलनि शुनु तात। कयलक ई वानर उतपात॥ ४॥
ब्रह्मास्त्रेँ हम जीतल जखन। वानर वशमे आयल तखन॥ ५॥
कहल जाय की समुचित मन्त्र। वानर काँ नहि करब स्वतन्त्र॥ ६॥
लौकिक वानर सन नहि कर्म्म। अपनहिँ जानब हिनकर मर्म्म॥ ७॥
ताकि प्रहस्त सचिव सौँ कहल। विषय विचार करक जे रहल॥ ८॥
पुछु वानर केँ मन्त्रि प्रहस्त। बौआयल कपि कालक ग्रस्त॥ ९॥
की आयल अछि की अछि काज। वानर सौँ बजइत हो लाज॥ १०॥
कथि लय कयलक उपवन नाश। राक्षस वध करइत नहि त्रास॥ ११॥
कहलनि मन्त्रि प्रहस्त प्रकाश। कपि मनमे नहि मानब त्रास॥ १२॥
प्रेषित ककर कहब से साँच। प्राण अहाँक अवश्ये बाँच॥ १३॥
कहलनि हरि बड़ गोट मोर भाग। दूरक ढोल सोहाओन लाग॥ १४॥

॥ दोषय छन्दः ॥

भूषल छलहुँ सङ्ग नहि खर्चा, तोड़ि तोड़ि फल खयलहुँ॥ १५॥
रक्षक लण्ठ प्राण लेबा पर, बहुत नेहोरा कयलहुँ॥ १६॥
कान कपार एक नहि बूझल, पातेँ पात नुकयलहुँ॥ १७॥

बरदाश्त किए जाते हैं। उन नासमझों को कुछ उत्तर नहीं देते। ३ मेघनाद ने कहा— 'हे पिता, सुनिए। इसी बन्दर ने उत्पात मचाया है। ४ जब मैंने ब्रह्मास्त्र चलाकर इसे जीता तब यह क़ाबू में आया है। ५ अब कहिए कि क्या करना उचित होगा? इस बन्दर को स्वतन्त्र नहीं छोड़ूँगा। ६ इसकी चाल सामान्य बन्दर की-सी नहीं है। इसका रहस्य आप ही जानिएगा।" ७ फिर मेघनाद ने प्रहस्त नामक मन्त्री की ओर देखकर कहा कि क्या विचार करना है? ८ "हे मन्त्री प्रहस्त, काल से ग्रसित हो भटकते हुए आये इस बन्दर से पूछिए— ९ वह क्यों आया है और उसे क्या काम है? मुझे तो बन्दर से बतियाते भी शर्म आती है। १० पूछिए कि इसने अशोक वाटिका क्यों उजाड़ी? राक्षसों को मारते इसे डर न लगा?" ११ मन्त्री प्रहस्त ने पूछा— "हे कपि, मन में भय मत कीजिए। १२ सच-सच बताइए कि आपको किसने भेजा है? आपके प्राणों पर कोई खतरा नहीं है।" १३ हनुमान ने कहा— "मैं बड़ा भाग्यवान हूँ। दूर से आयी ढोल की आवाज़ मीठी लगती है। १४ मैं भूखा था, साथ में राह खर्च नहीं था, इसलिए तोड़-तोड़कर फल खाया। १५ आपके रक्षक लोग बड़े बदमाश हैं, बहुत आरज़ू-मिन्नत करने पर भी वे मेरी जान लेने पर उतारू हो गये। १६ वे जहाँ-तहाँ मुझ पर प्रहार करने लगे और मैं पत्तों-पत्तों में छुपता रहा। १७

अपन स्वरूप धयन हम सभकाँ, कालक धाम पठयलहुँ ॥ १८ ॥
पहिलय मारि बहुत हम सहलहुँ, पाछाँ अनुचित कयलहुँ ॥ १९ ॥
दश-मस्तक लङ्केपति राजा, की अपने खिसिअयलहुँ ॥ २० ॥
एक गोट वानर पर एते, सेना व्यर्थ पठयलहुँ ॥ २१ ॥
धर्म्म-शास्त्र-वेत्ता अपनें सन, न्याय करू अगुतयलहुँ ॥ २२ ॥

॥ रावणोक्ति ॥

॥ वसन्त-तिलका छन्दः ॥

के तोँ थिकाँहि कत सौँ यत आबि गेलें ॥ २३ ॥
की नाम ताहर निशाचर-भक्ष्य भेलें ॥ २४ ॥
आज्ञा-विहीन फल तोड़ि बहुत खलें ॥ २५ ॥
निर्हेतु रक्षक तहाँ किय मारि देलें ॥ २६ ॥

॥ हनुमानक उक्ति ॥

रे दुष्ट लागल क्षुधा फल तोड़ि खेलौ ॥ २७ ॥
कैलें उपद्रव ततें तरु तोड़ि देलौ ॥ २८ ॥
हेतौ बहुत नहि सम्प्रति विघ्न भेलौ ॥ २९ ॥
अस्त्र-प्रहार कयलें हम प्राण लेलौ ॥ ३० ॥

॥ मालिनी-छन्दः ॥

रघुपतिक पठौलें लाँघि कें सिन्धु ऐलौ ॥ ३१ ॥
तनिक कुशल-वार्त्ता जानकी कें सुनेलौ ॥ ३२ ॥

फिर मैंने अपना स्वरूप धारण किया और सबों को मौत के घाट उतारा। १८ पहले तो मैंने ही बहुत मार खायी पर बाद में मैंने तोड़-फोड़ का बुरा काम किया। १९ हे लंकेश्वर दशकन्धर राजा, आप क्यों गुस्साए? २० एक मात्र असहाय बन्दर पर इतनी सेना क्यों भेजी? २१ आप तो धर्मशास्त्र जानते हैं, न्याय कीजिए। उकता क्यों गये?" २२ रावण ने पूछा— "तुम कौन हो? यहाँ कहाँ से आये हो? २३ तुम्हारा नाम क्या है? अब तुम राक्षसों का भक्ष्य हो गये हो। २४ बिना हुक्म के तुमने बहुत से फल तोड़कर खाये, सो तो किया पर बिना कारण वहाँ रक्षकों को क्यों मारा? २५-२६ हनुमान ने कहा— "अरे दुष्ट, भूख लगी थी इसीलिए तोड़कर फल खाये। २७ तुम लोगों ने वहाँ उपद्रव किया, इसीलिए मैंने पेड़ों को तोड़ा। २८ अभी क्या हुआ है? आगे और भी बहुत बरबादी होगी। २९ मुझे पर हथियार छोड़ोगे तो मैं जान ले लूँगा। ३० राम का भेजा हुआ मैं समुद्र लाँघकर यहाँ आया हूँ। ३१ उनका कुशल समाचार जानकी को सुनाया। ३२ बहुत भूख लगी इसलिए फल खाये। ३३ मेरा

क्षुधित बहुत भेलँ तेँ फलाहार कैलौ ॥ ३३ ॥
मरुत-सुत हनूमन्नाम की बाँधि लैलौ ॥ ३४ ॥
किछु दिन रहि लङ्का सिन्धु केँ फानि जैबे ॥ ३५ ॥
जनक-नृपति-पुत्री दुःख-वार्त्ता शुनैबे ॥ ३६ ॥
प्रबल सकल सेना सङ्ग लै फेरि ऐबे ॥ ३७ ॥
तखन बुझब जे छी से अहाकाँ बुझैबे ॥ ३८ ॥

॥ भुजङ्गप्रयात छन्दः ॥

चिन्हारे अहाँ छी बिरञ्चि-प्रपौत्रे ॥ ३९ ॥
कुकर्म्मी अहाँ छी करैछी की श्रौत्रे ॥ ४० ॥
गिरीशार्च्चना छोड़ि ई की करै छी ॥ ४१ ॥
परस्त्री अहाँ छद्म सौँ की हरैछी ॥ ४२ ॥

॥ चौपाइ ॥

लङ्कापति हमछी निर्भीत । फेरि गबैछी गओले गीत ॥ ४३ ॥
ब्रह्म विष्णु रामक अवतार । के गुण कहत हुनक विस्तार ॥ ४४ ॥
वेद न पाबथि कहयित पार । जनिकर सिरजल थिक संसार ॥ ४५ ॥
तनिकर माया सीता-रूप । हरि आनल हनसौँ चुप चूप ॥ ४६ ॥
गञ्जन बन्धन कर्म्मक भोग । अयलहुँ नदिया-नाव-संयोग ॥ ४७ ॥

नाम हनुमान है। मैं वायु का पुत्र हूँ। तुम लोगों ने मुझे नाहक बाँध रखा है। ३४ कुछ दिन लंका में रहकर समुद्र को फाँदकर मैं चला जाऊँगा। ३५ राजा जनक की पुत्री सीता का दुख-दर्द राम को सुनाऊँगा। ३६ सारी ताकतवर सेना के साथ फिर यहाँ आऊँगा। ३७ तब तुमको समझ में आ जायेगा कि मैं क्या हूँ ? ३८ तुम तो जाने-पहचाने ही हो। तुम ब्रह्मा के परपोता हो। ३९ तुम तो कुकर्म में रत हो। वेद-विहित कर्म क्यों करते हो ? ४० शिव की पूजा छोड़ यह क्या करते हो ? ४१ परायी स्त्री छल से क्यों हरते हो ?" ४२ रावण ने कहा— "मैं लंकापति रावण हूँ। मैं फिर वही बात दुहराता हूँ कि मुझे किसी का डर नहीं है।" ४३ ब्रह्मा और विष्णु ने राम के रूप में अवतार लिया है। उनके गुणों का पूरा-पूरा वर्णन कौन कर सकता है ? ४४ जिनके गुणों का वर्णन करते हुए वेद भी पार नहीं पाता है और जो इस दुनिया का सर्जन करनेवाले हैं, उनकी माया-स्वरूपा स्त्री को चुपचाप हर लाये हो। ४५-४६ मुझे जो गालियाँ सुननी पडी हैं और जो बन्धन में पड़ गया हूँ, वह तो केवल नदी-नाव-संयोग अर्थात् आकस्मिक घटना है और मेरे पूर्व जन्म के कर्म का फल है। ४७ उनके दूत मुझको तुमने चोर समझकर पकड़

तनिकर दूत चोर हम धयल। करब उपाय एखन की कयल॥ ४८॥
अनुभव बालो-बल विस्तार। तनिक राम कयलनि संहार॥ ४९॥
दीनक झेर देखल दरबार। अयलहुँ दबि छपि सागर पार॥ ५०॥
राम-सख्य सुग्रीवक सङ्ग। किछु दिन बितलय देखब रङ्ग॥ ५१॥
कपिपति सचिव थिकहुँ हनुमान। अञ्जनि जननि जनक पवमान॥ ५२॥
वानर चर फिरइछ सभ ठाम। हम लङ्का अयलहुँ शुनि नाम॥ ५३॥
नीति धर्म्म हम देल शुनाय। सत्य कहय से मारल जाय॥ ५४॥
हृदय अहाँक अधिक अछि मैल। झिटुकी सौँ फूट जाइछ घैल॥ ५५॥
प्रभुक कुशल सीता सँ भाषि। लोभ भेल एक फल के चाखि॥ ५६॥
लोभहिँ पतन कहय ससार। हमरा अपनहि पड़ल कपार॥ ५७॥
बड़ गोट वंश ओ विस्तर राज। अयशक नहि किछु मनमे लाज॥ ५८॥
करब न अहँसौँ किछु हम लाथ। अहँक नीक रघुनन्दन-हाथ॥ ५९॥
पण्डित वेश कुपथ की धयल। हाथी सौँ हथि-बेसन कयल॥ ६०॥
हमरा मारल बाँधल बेश। बुद्धि-वृद्धि हो लगलेँ ठेस॥ ६१॥
हसि बजला तखना दशकण्ठ। ई वानर अछि बड़का लण्ठ॥ ६२॥

लिया। इसका उपाय करूँगा, अभी क्या किया है? ४८ तुमको मालूम है कि बालि कितना बलवान था। उसका भी राम ने संहार किया। ४९ तुम्हारे दरबार में दीनों का जमघट देखा। लुक-छिपकर समुद्र के पार आया हूँ। ५० राम ने जो सुग्रीव के साथ मित्रता की है उसका रंग कुछ दिन बीतने पर मालूम होगा। ५१ मैं सुग्रीव का मन्त्री हनुमान हूँ। मेरी माता का नाम 'अंजनि' है और मेरे पिता वायु हैं। ५२ दूत के रूप में वानर लोग जहाँ-तहाँ घूम रहे हैं। मैं नाम सुनकर लंका आया हूँ। ५३ नीति क्या है और धर्म क्या है? यह मैंने समझा दिया। कहावत है कि सच्ची बात बतानेवाला मारा जाता है। ५४ आपका हृदय अधिक मलिन है। कहा जाता है कि एक ठीकुरी से घड़ा फूट जाता है। ५५ राम का संदेश जब सीता को सुना दिया तो फल चखने का लोभ हो गया। ५६ संसार में यह ज़ाहिर है कि लोभ से ही पतन होता है। यह कहावत तो मेरे अपने ही सिर पड़ी। ५७ आपका कुल बहुत बड़ा है। आपका राज्य विस्तृत है। फिर भी आपके मन में बदनामी की शर्म नहीं है। ५८ आपसे मैं कुछ भी दुराव नहीं करूँगा। आपका कल्याण राम के हाथ में है। ५९ विद्वान का रूप पाकर आपने कुमार्ग पर पाँव क्यों रखा? आपने हाथी से हथिबेसन किया। ६० मुझे पीटा और बाँधा, इसका फल बाद में चखिएगा। कहावत है, ठेस लगने से बुद्धि बढ़ती है।" ६१ तब रावण हँसकर बोला— "यह बन्दर बड़ा बदमाश है। ६२

मृतसम बाँधल मन अभिमान। हमरहु निकट छटै अछि ज्ञान॥ ६३॥
मानुष राम गहन मे वास। हमरा तकर देखाबै त्रास॥ ६४॥
तनिका मारब दनुज पठाय। वानर बिलटत रहित-सहाय॥ ६५॥
सीता-कारण अछि उतपात। करब तनिक हम प्राण्क घात॥ ६६॥
सनकल अछि कपि बड़ बाचाल। हिनका माथ नच अछि काल॥ ६७॥
मारुत-नन्दन उत्तर कहल। रावण-कुवचन एक न सहल॥ ६८॥

॥ द्वितीय त्रिभंगी छन्दः॥

दशमुख-वचन शुनल कपि कहलनि॥ ६९॥
चुप रह रे अभिमानी, करतौ हानी, कटु बानी॥ ७०॥
प्रभुकर-शरक निकर बिषधर सन॥ ७१॥
लगलैं के बच प्रानी, शठ अज्ञानी, वक-ध्यानी॥ ७२॥
अपनहिँ मन नृप बनल सनल छह॥ ७३॥
कहतौ के गुरु तोरा, शुनु स्त्री-चोरा, कुल-बोरा॥ ७४॥
हित अनहित अनहित हित कयलह॥ ७५॥
प्रभुक न कयल निहोरा, मति-घोरा, शुभ थोरा॥ ७६॥

॥ घनाक्षरी॥

सत्य हनुमान तौं प्रमाण ई वचन जान॥ ७७॥
मवर्कट विकट भालु-भट वश परबैं॥ ७८॥

मुर्दे के समान बँधा हुआ है, फिर भी इसके मन में अभिमान भरा है। मेरे सामने भी ज्ञान बघारता है। ६३ राम, जो मनुष्य है और वन में रहता है, उसी का डर यह मुझको दिखाता है। ६४ राक्षसों को भेजकर मैं उस राम को मार डालूँगा। तब यह बन्दर बे-सहारा हो बिलखता रहेगा। ६५ यह खुराफात सीता के कारण ही हुई है, इसलिए उसी को अब जान से मार देना है। ६६ यह बन्दर बड़ा बकी और पागल-सा है। इसके सर पर काल मँड़रा रहा है।" ६७ हनुमान ने सबका उत्तर दिया। रावण के एक भी दुर्वचन को बरदाश्त नहीं किया। ६८ उसका वचन सुनते ही हनुमान ने कहा— "अरे अभिमानी, तुम चुप रहो। बड़ी बात बोलने से तुम्हें मजा चखना पड़ेगा। ६९-७० राम के हाथ से छूटे विषैले सर्पों के समान तीरों के लगने से कौन बच सकता है रे पाखंडी, दुष्ट, नादान? ७१-७२ अरे स्त्री चुराने और कुल को बुड़ानेवाले रावण, तुम तो अपने ही मन से राजा बन बैठे हो। तुम्हें कौन बड़ा कहेगा? ७३-७४ अरे मतिमन्द अभागे, तुमने हित का अहित और अहित को हित समझा। राम की प्रार्थना नहीं की। ७५-७६ यदि मैं वास्तव में हनुमान हूँ तो यह बात

प्रभु-दल प्रबल जखन उतरत इत ॥ ७९ ॥
दशमुख तखन उपाय कोन करबँ ॥ ८० ॥
मुष्टिका-आघात लात-घात-सन्निपात वश ॥ ८१ ॥
शोचबश रण मे त्राहि त्राहिकँ कहरबँ ॥ ८२ ॥
'चन्द्र' भन रामचन्द्र सर्व्वनाश-हाथ-तीर ॥ ८३ ॥
लगतहु जखन तखन मूढ़ मरबँ ॥ ८४ ॥

॥ चौपाइ ॥

मारुत-वचन शुनल लङ्केश । कोप-विवश जन देल निदेश ॥ ८५ ॥
हम कटु वचन शुनै छी कान । वानर बजइछ आनक आन ॥ ८६ ॥
हिनका मारय लय कय खण्ड । हिनकर सभ छूटय पाखण्ड ॥ ८७ ॥
कपिकाँ मारय दौड़ल जखन । अयला सभा विभीषण तखन ॥ ८८ ॥
कहलनि नीतिशास्त्र-अनुसार । चारक वध नहि अछि व्यवहार ॥ ८९ ॥
दूत बेचारा मारल जयत । रामचन्द्र सौं युद्ध न हयत ॥ ९० ॥
अङ्कित हयता कहता जाय । राखक नहि थिक दूत बझाय ॥ ९१ ॥
नीति विभीषण कहलहुँ नीक । मानल वचन सदर्थ अहींक ॥ ९२ ॥

निश्चित समझो कि तुम दारुण वानर-भालू सैनिकों के पंजे में पड़ जाओगे । ७७-७८ राम की प्रबल सेना यहाँ उतरेगी तब अरे रावण, तुम क्या उपाय करोगे ? ७९-८० उन सैनिकों का मुक्के पर मुक्का और लात पर लात खा-खाकर शोक से 'बचाओ-बचाओ' चिल्लाने लगोगे । ८१-८२ चन्द्र कवि कहते हैं कि जब सारी दुनिया को नाश करने में समर्थ राम के हाथ से तीर लगेगा तब अरे नादान, तुम्हारी मौत हो जाएगी । ८३-८४

हनुमान की पूंछ में आग लगाया जाना और लंका का जलना

रावण हनुमान की बात सुनकर आगबबूला हो गया और अपने सेवकों को आदेश दिया— ८५ 'मैं तीखी-तीखी बातें अपने कानों से सुन रहा हूँ। यह बन्दर अंट-संट बकता जा रहा है। ८६ इसे काटकर टुकड़े-टुकड़े कर दो ताकि इसका पाखंड दूर हो।" ८७ सेवक लोग कपि को मारने के लिए दौड़े किन्तु ऐसे मौके पर दरबार में विभीषण पहुँच गये । ८८ उन्होंने कहा— "प्रभु, नीतिशास्त्र कहता है कि दूत अवध्य होता है। ८९ बेचारा दूत मारा जाएगा तो रामचन्द्र से युद्ध कैसे होगा ? ९० इसे यदि कोई दाग़ लगाकर छोड़ दिया जाए तो यह जाकर रामचन्द्र से कहेगा । दूत को बाँधकर रखना ठीक नहीं है।" ९१ रावण ने कहा— "हे विभीषण, आपने अच्छी नीति कही । माना कि आपका ही

शण मन बहुत वस्त्र घृत तेल। ढेर भेल नृप आज्ञा देल॥ ९३॥
कपि वालधि मे सभ लपटाब। कौतुक करइत नृपति हसाब॥ ९४॥
किछु तहि ऊपर आगि लगाब। के बुझ भावी काल स्वभाव॥ ९५॥
मारथि गारि देथि कय बेरि। योगी सौं कयलनि धुरखेरि॥ ९६॥
नाना तरहक बाजन बाज। प्रबल चोर काँ पकड़ल आज॥ ९७॥
पश्चिम द्वार पवन-सुत जाय। बन्धन लेलनि सहज छाड़ाय॥ ९८॥
सूक्ष्मरूप सौं गेल बहराय। सभ राक्षस-मन देल शुखाय॥ ९९॥
सभ जन हृदय कदलि सन काँप। जनु कपि भेल चोटाओल साप॥ १००॥
कपिकाँ मन मे आछ बड़ रोष। करत उपद्रव पुन भरि पोष॥ १०१॥
रावण-सभा उठल घमलौड़। ऐठन जरल न जरि गेल जौड़॥ १०२॥
के थिक केहन न कयल विचार। मूखक लाठी माँझ कपार॥ १०३॥
के कह कपि कपि-रूपी काल। नहि बुझ लङ्केपति दशभाल॥ १०४॥

॥ घनाक्षरी ॥

अग्निमान त्रिकूट-अचल अनुमान भेल॥ १०५॥
धूम-धार नभ घन प्रलय समान रे॥ १०६॥

कहना जायज है।" ९२ अनेकों मन पटसन, कपड़ा, घी और तेल जमा किया गया और राजा रावण ने आज्ञा दी— ९३ "यह सब इस बन्दर की पूँछ में लपेट दो और आग लगा दो ताकि यह बन्दर नाच-तमाशा करके राजा को हँसाये।" कौन जानता था कि इसका क्या नतीजा होगा? ९४-९५ लोग उसे पीटने और गाली देने लगे। मानों वे योगी से ही होली खेलने लगे। ९६ तरह-तरह के बाजे बजने लगे और खुशी मनाने लगे कि आज भारी चोर को पकड़ा। ९७ तब हनुमान पश्चिमी दरवाजे पर गये और अनायास बन्धन को हटा दिया। ९८ फिर अति लघु रूप धारणकर निकल गये सभी राक्षसों का मन घबरा गया। ९९ सबों का कलेजा केले के पत्ते की भाँति काँपने लगा। मानों वह बन्दर चोट खाया हुआ साँप हो गया हो। १०० हनुमान के मन में बड़ा रोष था। वे फिर भारी उपद्रव मचाएँगे। १०१ रावण की सभा में हो-हल्ला मचने लगा। रस्सी तो जल गयी पर ऐंठन न जली। १०२ यह कौन है, कैसा है, कुछ भी विचार न किया गया? यह मूर्खतापूर्ण काम हुआ। कहावत है— 'मूरख की लाठी ठीक माथे पर बजती है।' १०३ कौन कहे कि यह बन्दर है या बन्दर की शक्ल में काल आया है? लंकेश्वर रावण की समझ में नहीं आया। १०४ लगता था कि त्रिकूट पर्वत आग का बना हो। धुआँ जो आकाश में गया तो मानों प्रलय का बादल छा गया। १०५-१०६ पानी भी आग-आग हो

आगि आगि पानि भेल धह् धह् छानि भेल ॥ १०७ ॥
कपि-मन आनि भेल सङ्ग पवमान रे ॥ १०८ ॥
वानर न जानि भेल हसयित हानि भेल ॥ १०९ ॥
हास्य राजधानि भेल राबण मलान रे ॥ ११० ॥
आनही सौँ आन भेल सर्व्व साबधान भेल ॥ १११ ॥
रावण-प्रताप हर हरि हनुमान रे ॥ ११२ ॥

॥ चौपाइ ॥

बहल बहल तत प्रलय बिहाड़ि । जनु पर्व्बत काँ देत उखाड़ि ॥ ११३ ॥
कपिक पूछ मे धधकल आगि । विकल पड़ायल सभ घर त्यागि ॥ ११४ ॥
गोपुर ऊपर कपि चढ़ फानि । सभ मन छटल मारिक बानि ॥ ११५ ॥
गरजि गरजि कपि ठोकल ताल । राड़क असँघै जिवक जञ्जाल ॥ ११६ ॥

॥ रूपक घनाक्षरी ॥

गगन अनिल ओ अनल जल महि विश्व ॥ ११७ ॥
सिरिजल जनिक तनिक दूत जरबह्ु ॥ ११८ ॥
कोटि कोटि रावण समान गण लड़बह ॥ ११९ ॥
मृग-गण-मारक मृगेन्द्र जकाँ पड़बह्ु ॥ १२० ॥

गया। छप्पर धह्-धह् जलने लगे। १०७ हनुमान के मन में बड़ी आन हुई। हवा ने उनका साथ दिया। १०८ यह वानर क्या है? यह बात समझ में न आई। हँसी-हँसी में ही सर्वनाश हो गया। १०९ राजधानी में लोग उपहास करने लगे। रावण का मन उदास हो गया। ११० क्या से क्या हो गया? सभी सावधान हो गये। १११ ऐसा मालूम हुआ कि यह वानर हनुमान रावण की महिमा को समाप्त करनेवाला है। ११२ वहाँ प्रलयकाल-सी ऐसी आँधी आयी मानों पहाड़ों को उखाड़ फेंकेगी। ११३ हनुमान की पूँछ में ज्यों ही आग की लपट उठी कि घबराकर घर-द्वार छोड़ सभी भाग गये। ११४ हनुमान छलाँग मारकर नगर के द्वारभवन पर चढ़ गये। सबों के मन में मार-पीट की भावना जाती रही। ११५ वे गरज-गरज कर ताल ठोंकने लगे। कहावत है— 'सेवक का विद्रोह खतरनाक होता है।' ११६ आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी ये सभी पदार्थ जिनका सरजा हुआ है, उन्हीं के दूत को तुम लोग जलाना चाहते हो। ११७-११८ यदि रावण के तुल्य करोड़ों जवान मिलकर लड़ोगे तो भी मैं मृगों को मारने के लिए जैसे सिंह छूटता है वैसे ही भिड़ जाऊँगा। ११९-१२० तुम लोगों ने युद्ध

देखल प्रचण्ड रण हमर उदण्ड बल ॥ १२१ ॥
भेल आब कोप अभिमान लोप करबहु ॥ १२२ ॥
कालहुक काल विकराल सौं नै भीति अछि ॥ १२३ ॥
तोहरा लोकनि बुतै हम कतै मरबहु ॥ १२४ ॥

॥ चौपाइ ॥

जरय न कपि जरइत अछि गाम । कह जन भेल विधाता वाम ॥ १२५ ॥
लोह-स्तम्भ कपिक अछि हाथ । जे लग भिड़थिन फोड़थिन माँथ ॥ १२६ ॥
सगर नगर अनल क सञ्चार । बिना बिभीषण घर ओ द्वार ॥ १२७ ॥
धर धर कहथि निकट नहि जाथि । हाथी कुक्कुर रीति डराथि ॥ १२८ ॥
पीटथि छाती वनिता कानि । कपि-उतपात भेल सभ हानि ॥ १२९ ॥
जरल कनक-मणिमय बर गेह । सम्पति रह की पाप-सिनेह ॥ १३० ॥
दूत-पराक्रम कहल न जाय । भाग्यवान काँ भूत कमाय ॥ १३१ ॥
कपि कह लङ्का करब विनाश । घैल काँच कें मुगरक आश ॥ १३२ ॥
धिक रावण आनन न मलान । चोरक मुह जनु चमकय चान ॥ १३३ ॥
दशकन्धर की रहबह चैन । भल-घर-मध देलह अछि बैन ॥ १३४ ॥
हनुमानक लग के ओ न जाय । मारिक डर सौं भूत पड़ाय ॥ १३५ ॥

में मेरा प्रचंड पराक्रम देख लिया। अब मैं गुस्से में आ गया हूँ। तुम लोगों का घमंड चूर कर दूंगा। १२१-१२२ विकराल काल के काल से भी मुझे कोई डर नहीं है। तुम लोगों की क्या ताकत कि मुझे मार सको? १२३-१२४ बन्दर नहीं जलता बल्कि बस्तियाँ ही जल रही हैं। लोग कहते विधाता प्रतिकूल हो गये। १२५ लोहे का डंडा कपि के हाथ में है। जो उससे भिड़ेगा उसका वह सर फोड़ देगा। १२६ सारे नगर में आग फैल गयी। केवल विभीषण का घर-द्वार बचा रहा। १२७ सब लोग 'पकड़ो-पकड़ो' की आवाज़ लगाते पर डर से पास नहीं जाते; जैसे हाथी से कुत्ते, उसी तरह डरकर भागते। १२८ महिलाएँ रो-रोकर छाती पीटतीं— हाय, बन्दर के उत्पात से सब चला गया। १२९ सोने और रत्नों के बने अच्छे-अच्छे भवन जल गये। पाप में लगाव रहने पर क्या सम्पत्ति बच सकती है? १३० दूत ऐसी वीरता दिखाए यह अजीब बात है। कहावत है, 'भूत भी भाग्यवान का काम कर देता है दूत की कौन कहे।' १३१ हनुमान कहते— "मैं लंका को ध्वस्त कर दूंगा। कहावत है, 'कच्चे घड़े को मुँगरा ही चाहिए।' १३२ धिक्कार है रावण को, इतना होने पर भी जिसका मुँह मलिन नहीं हुआ। कहावत है— 'चोर का मुँह चाँद-सा चमकता है।' १३३ हे रावण, अब तुम कैसे चैन पाओगे? तुम तो भले घर में सौगात भेज चुके हो अर्थात् अपने से अधिक बलवान को चुनौती दे चुके हो।" १३४ हनुमान के पास

॥ घनाक्षरी ॥

अनुचित भल न विचार दृढ़ कय लेल ॥ १३६ ॥
छोड़ि देल बानर विकट अधबध कै ॥ १३७ ॥
दिन भेल वक्र आब ककरो न शक अछि ॥ १३८ ॥
एक छानि आगि सौं हजार घर धधकै ॥ १३९ ॥
प्रलय-कृशानु सन तखनुक भानु सन ॥ १४० ॥
बीर हनुमान सनमुख जित-युधकै ॥ १४१ ॥
ताल घहराय के बारण करै जाय जत ॥ १४२ ॥
फयल अन्याय फल रावण अबुध कै ॥ १४३ ॥

॥ शिखरिणी छन्दः ॥

अरे बाबा दावानल-सदृश लङ्का जरइयै ॥ १४४ ॥
अधर्म्मी लङ्केशे तनिक सब पापे करइयै ॥ १४५ ॥
पड़ा रे रे बाबू किछु न मन काबू परइयै ॥ १४६ ॥
बिना पानी लङ्का-नृपति-पट-रानी मरइयै ॥ १४७ ॥

॥ नाराच ॥

पड़ा पड़ा बड़ा बड़ा गृहाट्ट जारि देलकौ ॥ १४८ ॥
विदेह-कन्यका-विपत्ति जानि काटि लेलकौ ॥ १४९ ॥
बहूत छाट बानरे सभैक हाल फेलकौ ॥ १५० ॥
प्रचण्ड दण्ड-देानहार दूत चोर धेलकौ ॥ १५१ ॥

कोई नहीं जाता ? कहावत है, 'मार के डर से भूत भी भागता है।' १३५ यह अनुचित हुआ। भलाभाँति सोच-विचारकर काम नहीं किया गया। विकट बन्दर को चोट देकर ज़िन्दा छोड़ दिया गया। १३६-१३७ अब बुरे दिन आये। किसी का वश न चलेगा। १३८ एक छप्पर में आग लगने पर हज़ार घर जल जाते हैं। १३९ प्रलयकाल की आग और प्रलयकाल के सूरज के समान वीर हनुमान के सामने लड़ाई में कौन जीतनेवाला है ? १४०-१४१ घहराती हुई बाढ़ को कौन रोक सकता है ? नादान रावण ने जितना पाप किया उसे उतना फल भुगतना ही होगा। १४२-१४३ अरे बाप ! यह लंका दावानल की भाँति जलती है। १४४ लंकेश्वर रावण बड़ा पापी है। उसी के पाप से यह सब कुछ हो रहा है। १४५ अरे भाइयो, भागो-भागो ! अब स्थिति काबू में न रही। १४६ लंकाधिपति रावण की पटरानी भी अब पानी के बिना मर रही है। १४७ भाइयो, भागो-भागो ! इसने बड़े-बड़े महलों को जला डाला। १४८ जनक की बेटी सीता को सताने का बदला लिया। १४९ बित्ते भर के

॥ समानिका ॥

मेघनाद को कहू, बुद्धि-हीन छी अहूँ ॥ १५२ ॥
बाप पाप कैल की, मृत्यु-मार्ग धैल की ॥ १५३ ॥

॥ दोधय छन्द ॥

हरि-पद-विमुख कतहु सुख पाबथि, धिक धिक दशमुख-ज्ञाने ॥ १५४ ॥
दुर्गति कय कपि लङ्को जारय, धयलहिँ छथि अभिमाने ॥ १५५ ॥
एहि सौँ आब कि गञ्जन देखता, मरणाधिक अपमाने ॥ १५६ ॥
के कपि पकड़ लड़य के कालसौँ, नहि कपि-वीर समाने ॥ १५७ ॥

॥ चौपाइ ॥

लङ्का-नगर सगर कपि डाहि । स्वामि-कार्य्य शूरत्व निवाहि ॥ १५८ ॥
कुदि खसला सागर मे जाय । पुच्छल बाँधल आगि मिझाय ॥ १५९ ॥
स्वस्थ-चित्त भेला हनुमान । यहन पराक्रम कर के आन ॥ १६० ॥
सीता-आशिष-बल नहि जरल । लङ्कापतिक गर्व्व सभ हरल ॥ १६१ ॥
अग्नि वायु दुनु थिकथि इयार । जरल न सखि-सम्बन्ध विचार ॥ १६२ ॥
जनिक नाम जपि छुट तिन पाप । भवकृत-दोष-लेश नहि व्याप ॥ १६३ ॥

इस बन्दर ने सबों की यह दुर्दशा कर दी । १५० इस चोर दूत ने कड़ी सजा देनेवाले को ही मजा चखाया । १५१ हे मेघनाद, आपसे क्या कहें ? आप भी नासमझ ठहरे । १५२ आपके पिता ने पाप किया उसी से आप मौत के घाट उतरे । १५३ जो भगवद्भक्ति से विमुख रहेगा वह कहीं सुख पाएगा ? हे रावण, तुम्हारे ज्ञान को धिक्कार है । १५४ वानर दुर्दशा करके लंका को जला रहा है, इतने पर भी रावण का अभिमान टूटा नहीं है । १५५ इससे बढ़कर तौहीनी और क्या होगी ? अपमान तो मरण से भी बढ़कर है । १५६ इस बन्दर को कौन पकड़ेगा ? काल से कौन लड़ने जाये ? इस बन्दर के बराबर हममें कोई वीर नहीं है । १५७

हनुमान का सीता से विदा लेना, मधुवन उजाड़ना और राम के पास लौटना

हनुमान सारी लंकापुरी को जलाकर, स्वामी राम का काम पूरा कर, समुद्र में कूद पड़े और आग बुझाकर पूँछ समेटी । १५८-१५९ इसके बाद उन्हें चैन मिला । ऐसा पराक्रम और कौन कर सकता है ? १६० सीता के आशीर्वाद के प्रभाव से उनकी पूँछ न जली । उन्होंने लंकापति रावण का घमण्ड चूर कर दिया । १६१ अग्नि और वायु दोनों दोस्त हैं । इसलिए अग्नि ने हनुमान को अपने दोस्त का लड़का समझकर जलाया नहीं । १६२ जिनके नाम के जप से कायिक, वाचिक और मानसिक तीनों प्रकार के पाप

तनि रघुबरक दूतबर जानि। प्राकृत अनल कयल नहि हानि ॥ १६४ ॥
हनुमानक डर केओ नहि बाज। जनु कपि पायोल रामक राज ॥ १६५ ॥
जनकनन्दिनी छलि जहि ठाम। घुरि पुन तनिकर कयल प्रणाम ॥ १६६ ॥
सानुज प्रभुबर अयता तखन। जननि ततय पहुँचब हम जखन ॥ १६७ ॥
तीनि प्रदक्षिण ई कहि देल। आगाँ ठाढ़ जोड़ि कर भेल ॥ १६८ ॥
जे किछु बनल कयल हम काज। दशकन्धर निर्लज्ज कि बाज ॥ १६९ ॥
कहल जानकी शुनु कपि धीर। सकल-नियन्ता श्रीरघुबीर ॥ १७० ॥
तनिकर इच्छा होयत जेहन। कार्य्य-सिद्धि होयत शुभ तेहन ॥ १७१ ॥

॥ पादाकुल बोहा ॥

(श्री सीताक प्रति हनुमानक वचन तिरहुति)

ओरे से दिन बीतल। नयनक नोर तोर वसन तितल ॥ १७२ ॥
आबि एक गोट कपि रावण जितल। करमक लिखल कतहु नहि चल ॥ १७३ ॥
करु करु जानकी जी हृदय शीतल। लङ्कापुर जर छ प्रलय अनल ॥ १७४ ॥
सुखपाख सभ जन रावण होसल। "चन्द्र" भन ठाढ़ जनु प्रतिमा लिखल ॥ १७५ ॥

॥ षट्पद छन्दः ॥

हम किङ्कर हनुमान, देवि चिन्ता चित परिहरु ॥ १७६ ॥

दूर होते हैं और सांसारिक दोष नाम मात्र नहीं लगता है, उन राम के श्रेष्ठ दूत समझकर पार्थिव अग्नि ने उनका कोई नुक़सान नहीं किया। १६३-१६४ अब हनुमान के डर से कोई कुछ नहीं बोलता। मानों हनुमान ने ही राम का राज्य पा लिया हो। १६५ हनुमान लौटकर फिर वहाँ गये जहाँ जानकी थीं और फिर उन्हें प्रणाम किया। १६६ उन्होंने कहा— "हे माता, जब ही मैं राम के पास पहुंचूंगा, लक्ष्मण-सहित राम आ जाएँगे।" १६७ इतना कहकर उन्होंने तीन बार प्रदक्षिणा किया, हाथ जोड़कर आगे खड़े हुए और बोले— १६८ "मुझसे जो कुछ बन पाया, मैंने किया। अब बेहया रावण क्या बोलेगा?" १६९ जानकी ने कहा— "हे धीर कपि, सुनिए। सब कुछ श्रीराम के हाथ में है। १७० उनकी जैसी इच्छा होगी, उसी के अनुसार काम बनेगा।" १७१ हनुमान ने कहा— "अहो, वे दुख के दिन अब बीत गये, जब आँखों के आँसू से आपके कपड़े भीगे रहते थे। १७२ एक कपि आया और उसने रावण को जीत लिया। भाग्य में जो लिखा रहता है वह टल नहीं सकता है। १७३ हे जानकी, अब अपने हृदय को शीतल कीजिए। प्रलयाग्नि में लंकापुरी जल रही है। १७४ सभी नगरवासियों का और रावण का भी हृदय दहल गया है। 'चन्द्र' कवि कहते हैं, वे सभी लिखी हुई प्रतिमा-जैसे हक्के-बक्के हैं। १७५ हे देवी, मैं हनुमान आपका सेवक हूँ। आप चिन्ता छोड़िए। १७६ मेरे कन्धे पर चढ़कर इस समुद्र को पार

हमरा काँधा चढ़लि, घोर सागर काँ सन्तरु ॥ १७७ ॥
क्षण मे श्री रघुनाथ निकट कौशल पहुँचायब ॥ १७८ ॥
आज्ञा प्रभुसौं पाबि, फेरि लङ्का धुरि आयब ॥ १७९ ॥
प्रलय करब लङ्कापुरी, हमरा के रोकत सुभट ॥ १८० ॥
जौं ई रुचि हो स्वामिनी, देल जाय आज्ञा प्रगट ॥ १८१ ॥
शरसौं शोखि समुद्र सेतु, शर-निकरक करता ॥ १८२ ॥
सानुज से प्रभु आबि, रावणक प्राणे हरता ॥ १८३ ॥
सुग्रीवक सभ सैन्य, आबि लङ्का कें लूटे ॥ १८४ ॥
सुयश लोक मे होयत, अचल लङ्कागढ़ टूटे ॥ १८५ ॥
हम मारुत-सुत प्राण काँ, कोनहुँ यत्न राखब एतय ॥ १८६ ॥
कुशलक्षेम सौं जाउ अहँ, श्री रघुनन्दन छथि जतय ॥ १८७ ॥

॥ दोहय ॥

कयल प्रणाम अनेक बार कपि, पर्व्वत पर चढ़ि गेला ॥ १८८ ॥
योजन तीश प्रमाण उच्च गिरि, समभूमिक सम भेला ॥ १८९ ॥
पर्व्वत वायु वेग सौं महितल, दबि गेल तत्काले ॥ १९० ॥
सागर तरथि घोर धुनि करइत, धर्म्मक सोर पाताले ॥ १९१ ॥

कीजिए। १७७ मैं क्षण भर में कुशलपूर्वक राम के पास पहुँचा दूंगा। १७८ राम की आज्ञा पाकर लंका लौट आऊँगा। १७९ लंकापुरी में मैं प्रलय मचा दूंगा। कौन योद्धा मुझे रोक सकेगा? १८० यदि मेरा यह प्रस्ताव आप को पसन्द हो तो स्पष्ट आदेश दीजिए।" १८१ यह सुनकर सीता ने कहा—"राम बाण से समुद्र को सोख लेंगे और बाणों का पुल बना लेंगे। १८२ फिर उस पुल से लक्ष्मण-सहित आकर रावण का प्राण हरेंगे। १८३ सुग्रीव की सेना आकर लंका को लूटे। १८४ दुनिया में राम का यश फैले और लंका का मजबूत गढ़ ध्वस्त हो। १८५ हे पवनसुत हनुमान, मैं तब तक जैसे-तैसे अपना प्राण बचाये रखूंगी। १८६ आप कुशलपूर्वक वहाँ जाइए जहाँ श्रीराम हैं।" १८७ हनुमान ने बार-बार प्रणाम किया, फिर पर्वत पर चढ़ गये। १८८ पर्वत तीस योजन ऊँचा था, पर वह भूमि के समान तल में आ गया। १८९ ज्यों ही हनुमान उस पर चढ़े त्यों ही वह दबकर भूमितल के बराबर हो गया। १९० घोर ध्वनि करते हुए वे समुद्र तैरने लगे। उनकी आवाज़ पाताल तक पहुँच गयी। १९१ आवाज़ सुनकर अंगद आदि अनुमान करने लगे कि प्रसन्न हो हनुमान लौट रहे हैं। १९२ क्योंकि अमृत के समान कान में प्रिय लगनेवाला ऐसा शब्द और

॥ चौपाइ ॥

अङ्गदादि कयलनि अनुमान । अबइत छथि हर्षित हनुमान ॥ १९२ ॥
शब्द एहन करता के आन । श्रवण-सुखद वर अमृत समान ॥ १९३ ॥
एतहु सकल कपि बालि-किशोर । हर्षक शब्द कयल नाहि थोर ॥ १९४ ॥
गिरि पर पहुँचि गेला हनुमान । मृतक देह जनु पलटल प्राण ॥ १९५ ॥
कार्य्यसिद्धि होइछ अनुमान । हर्षक सुख मुख-शोभा आन ॥ १९६ ॥
शस्त्रक क्षत कत देखिय अङ्ग । भेल समर जनि लगइछ रङ्ग ॥ १९७ ॥
महावीर कह शुनु प्रिय सर्व्व । प्रभु-प्रताप किछु हमर न गर्व्व ॥ १९८ ॥
देखि जनकजा विपिन उजारि । रक्षक जनकेँ रण मे मारि ॥ १९९ ॥
कि करब ततय पड़ल अड़ मारि । राम-प्रताप कतहु नहि हारि ॥ २०० ॥
दशकन्धर सौँ बाद विवाद । बचलहुँ श्री रघुनाथ-प्रसाद । २०१ ॥
अयलहुँ बहुत सुभट केँ मारि । रावण-पालित लङ्का जारि ॥ २०२ ॥
राम-कपीशक तट हम जयब । एखनहि ततहि स्वस्थ हम हयब ॥ २०३ ॥
वानर-वृन्द मिलल भरि अङ्क । जेहन परशमणि पाबथि रङ्क ॥ २०४ ॥
पूछ चूमि गुणगण सभ बाँच । हरषि हरषि हरिगण भल नाँच ॥ २०५ ॥

॥ सारवती छन्दः ॥

राम कहू पुन राम कहू, मारुत-नन्दन धन्य अहूँ ॥ २०६ ॥
आब चलू छथि नाथ जहाँ, की सुख लाभ अनन्त तहाँ ॥ २०७ ॥

कौन कर सकता है ? १९३ यहाँ भी वालि के पुत्र अंगद और अन्य कपियों ने ज़ोर-ज़ोर से हर्ष-ध्वनि की । १९४ हनुमान पवत पर पहुँच गये । मरे हुए शरीर में मानों प्राण लौट आये । १९५ लगता है कार्य सिद्ध हो गया है क्योंकि अन्तर में हर्ष रहने पर चेहरे का रंग कुछ और हो जाता है । १९६ उनके शरीर पर अस्त्रों के कई घाव दिखायी देते हैं, इससे लगता है कि लड़ाई हुई थी । १९७ पहुँचकर महावीर ने कहा— "सभी प्रिय संवाद सुनिए । सब कुछ राम के प्रताप से हुआ । इसमें मेरा कुछ श्रेय नहीं है । १९८ जानकी को देखकर, अशोक वाटिका उजाड़कर और युद्ध में रक्षकों को मारकर मैं आ गया । १९९ क्या कहूँ, वहाँ बहुत लड़ाई हुई, पर राम के प्रताप से मेरी कहीं हार न हुई । २०० रावण से वाद-विवाद हो गया, उसमें भी राम के प्रताप से मैं बच गया । २०१ बहुत भारी-भारी योद्धाओं को मारकर और रावण द्वारा रक्षित लंकापुरी को जलाकर मैं आ गया । २०२ अभी मैं राम और सुग्रीव के पास जाऊँगा, तभी चैन की साँस लूँगा ।" २०३ कपि लोग गले से गले लगाकर मिले, जैसे रंक को पारस मिल गया हो । २०४ हनुमान की पूँछ को चूमकर सभी उनका गुण-वर्णन करने लगे । वह वानरों का दल हर्ष के मारे नाचने लगा । २०५ वानरों ने कहा— "राम-राम

॥ सोरठा ॥

चलल वीर-समुदाय, महावीर अगुआय चल ॥ २०८ ॥
प्रस्रवणाचल जाय, कपिपति-मधुवन प्राप्त सभ ॥ २०९ ॥

॥ दोवय छन्द ॥

वानर सकल कहल अङ्गद काँ, अहँ छी भूपक बालक ॥ २१० ॥
आज्ञा देल जाय मधुवन-फल, खायब अपनेँ पालक ॥ २११ ॥
जनितहि छी सभ जन छी भुखले, फलमधु यहन न पायब ॥ २१२ ॥
खाय पीबि सन्तुष्ट चित्तसौँ, प्रभुक निकट मे जायब ॥ २१३ ॥

॥ चौपाइ ॥

अङ्गद कहल सुखित फल खाउ । किछु नहि ककरो डरेँ डराउ ॥ २१४ ॥
कपि फल खाथि करथि मधुपान । रक्षक हटल पटल नहि मान ॥ २१५ ॥
दधिमुख-अनुशासन काँ पाय । देल रक्षक समकेँ लाठिआय ॥ २१६ ॥
अतिबल वानर भूखल घूरि । सभ रक्षक काँ देलनि चूरि ॥ २१७ ॥
दधिमुख-मुख भय गेल मलान । कुपित न बजला से मतिमान ॥ २१८ ॥
सभ रक्षक केँ संग लगाय । कपिपति काँ कहि देल देखाय ॥ २१९ ॥
तारा-तनय हठी हनुमान । जेहन आगि केँ पवन दिबान ॥ २२० ॥
मधुवन फल भल खयलय जाथि । किछु नहि अपनेक त्रास डराथि ॥ २२१ ॥

कहिए। हे पवनसुत, आप धन्य हैं. अब वहाँ चलिए जहाँ प्रभु राम हैं। वहाँ अपार आनन्द मिलेगा। २०६-२०७ सभी वीर गण चल पड़े। हनुमान आगे-आगे चले। २०८ सभी प्रस्रवण पर्वत पर चढ़कर सुग्रीव के निवास मधुवन पहुँचे। २०९ सभी कपियों ने अंगद से कहा— "आप राजकुमार हैं, आप इस मधुवन के संरक्षक हैं। आज्ञा हो तो हम इसके फल खाएं। २१०-२११ आप तो जानते ही हैं, हम लोग भूख हैं। ऐसे मीठे फल और कहाँ पाएँगे? २१२ खा-पीकर प्रसन्न मन से प्रभु राम के पास जाएँगे। २१३ अंगद ने कहा— "मजे से फल खाइए। किसी का कोई डर नहीं। २१४ कपि लोग फल खाने और मधु पीने लगे। रक्षक लोगों की मनाही कुछ न सुनी। २१५ तब दधिमुख की आज्ञा पाकर रक्षक सभी बन्दरों पर लाठी चलाने लगे। २१६ बड़े बलवान कपि लोग, जो भूखे थे, लौटे और सभी रक्षकों को पीट दिया। २१७ यह हाल देखकर दधिमुख का मुँह अपना-सा हो गया। वह गुस्से से भर गया पर समझदार था, इसलिए कुछ नहीं बोला। २१८ वह सभी रक्षकों को साथ लेकर गया और सुग्रीव को दिखाकर कह दिया— २१९ "तारा के पुत्र अगद और जिद्दी हनुमान, जैसे अग्नि के साथी वायु होते दोनों मिलकर मधुवन के फल खाते जा रहे हैं। आपका उन्हें कोई डर नहीं है। २२०-२२१ अब मैं बाग की रखवाली नहीं करूँगा।

हम नहि करब विपिन रखवारि । किछु बजितौं तौं खइतहुं मारि ॥ २२२ ॥
मधुवन फल राखल छल ढेर । लूटि भेल ककरहु नहि टेर ॥ २२३ ॥
युवराजक हनुमान प्रधान । विपिन विनाशक कि कहब ज्ञान ॥ २२४ ॥
हम छी कपि-भूपालक माम । नहि घुरि जायब गञ्जन ठाम ॥ २२५ ॥
सत्य कहै छी शुनु कपिनाथ । मर्य्यादा रह अपनहिँ हाथ ॥ २२६ ॥
मधुबन फल मधु कयलक नाश । भूतक घर सन्ततिक निवास ॥ २२७ ॥
शुनल वचन कहलनि जे माम । कपिपति-मन नहि कोपक ठाम ॥ २२८ ॥
हर्षक नोर भरल दुहु आँखि । अयला अयला उठला भाखि ॥ २२९ ॥
सीता देखि आयल हनुमान । हमरा मन से निश्चय ज्ञान ॥ २३० ॥
से शुनि पुछलनि अपनहि राम । मारि भेल अछि को कोन ठाम ॥ २३१ ॥
की कहयित छथि कपिपति माम । लेल कि जनकनन्दिनी नाम ॥ २३२ ॥
कहलनि गेल जे दक्षिण देश । आयल सभ जन रहित कलेश ॥ २३३ ॥
कार्य्यसिद्धि कयलनि हनुमान । मधुवन फल के चाखत आन ॥ २३४ ॥
दधिमुखकाँ कहलनि अहँ जाउ । सभ जनकाँ सत्वर लय आउ ॥ २३५ ॥
बहुत शीघ्र से वन मे जाय । अङ्गदादि काँ कहल बुझाय ॥ २३६ ॥
रामचन्द्र लक्ष्मण कपिराज । बड़ सन्तुष्ट भेल छथि आज ॥ २३७ ॥
शीघ्र बजौलनि करू प्रयाण । भाग्य ककर तुल अहँक समान ॥ २३८ ॥

अगर कुछ बोलता तो मार खाता । २२२ मधुवन में ढेरों फल सुरक्षित थे। लूट हो गयी। किसी को टेरा नहीं । २२३ युवराज अंगद के जो प्रधान साथी हनुमान हैं वे बाग उजाड़ने में बड़े माहिर हैं । २२४ मैं कपिराज का मामा हूँ। मैं उस अपमानजनक जगह पर फिर लौटकर नहीं जाऊँगा । २२५ हे कपिराज, मैं सत्य बताता हूँ, प्रतिष्ठा तो अपने बचाए ही बचती है । २२६ मधुवन में जो फल और मधु थे, सबों को नाश कर दिया। कहावत है, सन्तानों (बाल-बच्चों) का निवास भूत का घर हो जाता है।" २२७ मामा ने जो कहा वह सुग्रीव ने सुन लिया। उनके मन में तनिक भी क्रोध न हुआ । २२८ दोनों आँखों से हर्ष के आँसू बहने लगे। बोल उठे— "आ गये ! आ गये ! २२९ मेरे मन में यह पक्का विश्वास हो गया कि हनुमान सीता को देखकर आ गये।" २३० यह सुनकर राम ने स्वयं पूछा— "क्या, कौन जगह लड़ाई हुई है ? २३१ राजा सुग्रीव के मामा क्या कहते हैं ? क्या आपने जानकी का नाम लिया है ?" २३२ सुग्रीव ने कहा— "जो कपि दक्षिण देश गये थे वे सभी सकुशल लौटे । २३३ हनुमान कार्य सिद्ध करके आये हैं। उनके सिवा मधुवन का फल और कौन चखेगा।" २३४ फिर उन्होने दधिमुख से कहा— "आप जाइए और सबों को तुरत ले आइए।" २३५ दधिमुख बड़ी तेजी से बाग गये और अंगद आदि को समझाकर कहा— २३६ "राम, लक्ष्मण और सुग्रीव आज बहुत प्रसन्न हैं । २३७ आप लोगों को जल्द बुलाया

शुनितहिँ चलल सकल जन तुष्ट। प्रभुक समक्ष मुदित-मन पुष्ट ॥ २३९ ॥
अङ्गद आदि सहित हनुमान। प्रणति कहल हरिभक्त-प्रधान ॥ २४० ॥
मारुत-नन्दन जोड़ल हाथ। कृपा-जलधि जय जय रघुनाथ ॥ २४१ ॥
वैदेही हम देखल आँखि। कुशल प्रभुक विधिवत सभ भाखि ॥२४२॥

॥ दोधय छन्दः ॥

मलिनवसन एक-वेणी अतिदुख, निराहार दुबराइलि ॥ २४३ ॥
राम राम रट सकरुण धुनि कय, शुद्ध समाधि समाइलि ॥ २४४ ॥
अहह अशोकवाटिकाक्यन्तर, वृक्ष-शिंशुपा छाया ॥ २४५ ॥
लङ्कापुरी राक्षसी-वेड़लि, छथि प्रभु अपनँक माया ॥ २४६ ॥

॥ चौपाइ ॥

कि करब यत्न फुरल नहि आन। कयल तखन रघुपति-गुण-गान ॥ २४७ ॥
जैँ विधि प्रभु लेलनि अवतार। हरण हेतु पृथिविक खल-भार ॥ २४८ ॥
धनुषभङ्ग परिणय जे रीति। सकल शुनाओल मङ्गल गीति ॥ २४९ ॥
अयला प्रभु जे विधि वनवास। सकल कथा से कयल प्रकाश ॥ २५० ॥
आश्रमशून्य जानि लङ्केश। देवी हरि अनलक एहि देश ॥ २५१ ॥
कथा शुनथि वैदेही कान। मन-मन करथि बहुत अनुमान ॥ २५२ ॥
मैत्री जैँ विधि कयल कपीश। अपनाओल प्रभु अपना दीश ॥ २५३ ॥

है। विदा होइए। आप लोगों का-सा किसका भाग्य है।" २३८ सुनते ही सभी प्रसन्न हो प्रभु राम के पास पहुँचे। २३९ अंगद आदि के साथ प्रमुख भक्त हनुमान ने प्रणाम किया। २४० फिर पवनसुत हनुमान हाथ जोड़कर बोले— "हे कृपासागर रघुनाथ, आपकी जय हो जय हो। २४१ मैंने अपनी आँखों से सीता को देखा और उन्हें प्रभु का कुशल यथाविधि सुनाया। २४२ हे प्रभु, आपकी माया-सीता लंकापुरी में अशोक वाटिका के भीतर शीशम के एक पेड़ की छाया में राक्षसियों से घिरी हुई हैं। वे मैले कपड़े पहने, एक मात्र चोटी लटकाये, तीव्र विरह-वेदना से खाना-पीना छोड़ दुबली हो गयी हैं। करुण आवाज़ से राम-राम रटती आपके ध्यान में डूबी रहती हैं, जैसे शुद्ध समाधि में लीन हों। २४३-२४६ क्या करता, जब कोई और उपाय नहीं सूझा तब मैं राम का गुणगान करने लगा— २४७ "किस प्रकार प्रभु ने धरती पर से पापियों का भार हरने के लिए अवतार लिया? २४८ किस प्रकार धनुष-भंग और विवाह किया? इत्यादि कल्याणकारी गाथा सुनायी। २४९ फिर वह सारी कथा सुनायी कि प्रभु को कैसे वनवास मिला? २५० और कैसे आश्रम को सूना देख लंकापति रावण सीता को यहाँ हर लाया। २५१ सीता यह कहानी सुनती, मन ही मन तरह-तरह का अनुमान करती। २५२ फिर आगे सुनाया कि कपिराज सुग्रीव से राम ने मैत्री की और उन्हें अपने पक्ष

अनुज-नारि-रत बालि विचारि। तनिकाँ रघुपति सत्वर मारि॥ २५४॥
से सुग्रीव विदित कपिराज। सम्प्रति प्रभु छथि तनिक समाज॥ २५५॥
तनिक सचिव हम श्रीपति-दास। सीता देखक बहुत प्रयास॥ २५६॥
से कोन देश कोन से ठाम। दूत पठाओल जतय न राम॥ २५७॥
आज फलित भेल हमर प्रयास। मानस-दुःख-राशि भेल नाश॥ २५८॥
तकलनि कहलनि अमृत-समान। वचन शुनाओल के ई कान॥ २५९॥
लोचन-गोचर से भय जाथु। कहथु कथा नहि एखन नुकाथु॥ २६०॥
दूरहि सौँ हम कयल प्रणाम। अञ्जलि-बद्ध ठाढ़ तहिठाम॥ २६१॥
सूक्ष्म-रूप वानर-आकार। हम प्रभु-चरित कहल विस्तार॥ २६२॥
परिचय पुछलनि पुछलनि नाम। नर-वानर-सङ्गति कोन ठाम॥ २६३॥
स्वामिनि कथा पुछल जय बेरि। हमहुँ शुनाओल से सभ फेरि॥ २६४॥
प्रत्ययमूल मुद्रिका देल। तखन प्रतीति तनिक मन भेल॥ २६५॥

॥ घनाक्षरी छन्दः॥

गञ्जन ताड़न राक्षसोक सहै पड़इछ, एहन विपति पड़उन जनु अनका॥ २६६॥
हमर विपति देखितहिँ छोय अपनहुँ, सपनहुँ चैन नहि दिन राति मनकाँ॥ २६७॥

में कर लिया। २५३ अपने छोटे भाई की पत्नी में वालि को अनुरक्त देखकर राम ने उनका वध किया। २५४ सुग्रीव कपियों के राजा हुए। राम अभी उन्हीं के साथ हैं। २५५ मैं उनका मन्त्री और राम का सेवक हूँ। सीता को खोजने का बहुत प्रयास हुआ। २५६ ऐसा कौन देश और कौन स्थान है जहाँ राम ने खोज के लिए दूत नहीं भेजा? २५७ आज मेरा प्रयास सफल हुआ। मन में जो अपार दुःख था वह दूर हुआ।" २५८ तब सीता ने मेरी ओर निहारा और बोलीं— "किसने मेरे कान में यह अमृत-सा वचन सुनाया है? २५९ जो भी हों, वे मेरी नज़र के सामने आएँ और हाल सुनाएँ; वे अब छुपें नहीं।" २६० यह सुनकर मैंने दूर से ही प्रणाम किया और उनके सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। २६१ छोटे बन्दर के रूप में मैंने राम का वृत्तान्त विस्तारपूर्वक सुनाया। २६२ सीता ने मेरा परिचय और नाम पूछा तथा जिज्ञासा की कि मानव और बन्दर के बीच कहाँ संगति हुई? २६३ सीता ने जितनी बार जो-जो हाल पूछा, मैंने पुनः-पुनः उन्हें सुना दिया। २६४ पहचान का प्रमाण मुद्रिका दी। तब सीता के मन में प्रतीति हुई। २६५ तब सीता ने मुझसे कहा— "मुझे राक्षसियों की डाँट-फटकार और मार-पीट सहनी पड़ती है। ऐसी विपत्ति किसी और को न पड़े। २६६ मेरी विपत्ति तो आप स्वयं भी देखते ही हैं, दिन-रात स्वप्न में भी चित्त शान्त नहीं होता है। २६७ राजा रामचन्द्र से निवेदन कर दीजिएगा कि वे मेरा कोई अपराध

जनु मन राखथु हमर अपराध किछु, नि वेदन कय देब धरणी-धरण कां ॥ २६८ ॥
सकरुण सजल-नयन देवी कहलनि, कहबनि अहाँ कांप विपत्ति-हरण कां ॥२६९॥

॥ चौपाइ ॥

सीता-वचन करुण-परिपूर । शुनि शुनि कि करब से नहि फूर ॥ २७० ॥
हे प्रभु कहलहुँ बहुत बुझाय । तनि घन-नयन न नोर सुखाय ॥ २७१ ॥
कर औंठी कङ्कण प्रभु-हाथ । तुअ वियोग भृश कृश रघुनाथ ॥ २७२ ॥
जायब अभिज्ञान कां पाय । देल जाय श्रीजानकि माय ॥ २७३ ॥
चूड़ामणि देलनि कहि कानि । कत हम कयल बिरञ्चिक हानि ॥ २७४ ॥
वासवसुत वायस वनवास । खल छल पहुँचल मन निस्त्रास ॥ २७५ ॥
फल भल पौलनि स्वामि-समीप । भय भ्रमि अयला सातो दीप ॥ २७६ ॥
अति सामर्थ्य प्रभुक सभ काल । के थिक दुर्जय खल दशभाल ॥ २७७ ॥
प्रभु-पत्नी पाबिय दुख घोर । जलधर जितल अखण्डित नोर ॥ २७८ ॥
देवर कां हम वचन कठोर । कहल तकर फल भेल न थोर ॥ २७९ ॥
अनुचित क्षमा करत के आन । कहब दयामय देवर-कान ॥ २८० ॥
संकट सौं लय जाथि छोड़ाय । प्रभुक अनुज से करथु उपाय ॥ २८१ ॥

मन में न रखें।" २६८ आँसू भरी आँखों से करुण स्वर में देवी ने कहा— "यह संवाद बिपत्ति को हरण करनेवाले राम से सुनाइएगा।" २६९ सीता की करुणा भरी बात सुन-सुनकर मैं समझ न पाया कि क्या करूँ ? २७० हे राम, मैंने उन्हें बहुत समझाया-बुझाया, पर उनकी आँखों में आँसू सूखने का नाम नहीं लेते। २७१ तब मैंने कहा— "राम के हाथ की अँगूठी अब उनका कंगन हो गयी है क्योंकि आपके विरह में राम बहुत-बहुत दुबले हो गए हैं। २७२ आपसे कुछ पहचान लेकर जाऊँगा। हे माता जानकी, कोई पहचान दीजिए।" २७३ यह सुनकर सीता ने रोते हुए चूड़ामणि (टीका) उतार कर दिया और कहा— "मैंने ब्रह्मा (बिधाता) का क्या बिगाड़ा है ? २७४ वनवास के समय इन्द्र का बेटा दुष्ट जयन्त निर्भीक हो कौए के रूप में आया था। २७५ राम से उसे अच्छी सीख मिली। डर के मारे सातों द्वीप भटक आया। २७६ सभी कालों में राम का सामर्थ्य अपरम्पार है। उनके आगे कुविचारी दुष्ट रावण क्या है। २७७ उन्हीं राम की पत्नी हो मैं घोर दुख पा रही हूँ। मेरे अविरल अश्रु-प्रवाह ने बादल को जीत लिया। २७८ मैंने देवर लक्ष्मण को कटु वचन कहा था, उसी का यह बुरा फल भोग रही हूँ। २७९ राम के छोटे भाई लक्ष्मण अब ऐसा उपाय करें ताकि राम मुझे इस संकट से उबार कर ले जाएं।" २८०-२८१ वहाँ मुझे न चलते बनता था, न रहते। आज्ञा के बिना

चलि नहि रहि नहि हो तहिठाम। आज्ञा विनु कत करु सङ्ग्राम ॥ २८२ ॥
विकल स्वामिनी-दशा निहारि। चलायत कयलहुँ विपिन उजारि ॥ २८३ ॥
भेल लड़ाइ तहाँ घमसान। बहुत बीर समरहिँ निःप्रान ॥ २८४ ॥
दशवदनक सुत अक्षय कुमार। हमरहि सौँ तनिकर संहार ॥ २८५ ॥
मेघनाद आयल खिसिआय। रण-निर्ज्जित कयलक अन्याय ॥ २८६ ॥
ब्रह्मास्त्रक से कयल प्रयोग। बाँधल गेलहुँ कयल दुख-भोग ॥ २८७ ॥
लङ्का मे सञ्चित घृत तेल। हमरा बालधि अर्प्पित भेल ॥ २८८ ॥
सन ओ वसन लपेटल पूछ। मन जरि जायत बानर तूछ ॥ २८९ ॥
प्रभु-प्रताप नहि मानल हारि। सगर नगर घर देल हम जारि ॥ २९० ॥

॥ सोरठा ॥

कर्म्म करत के आन, सुरदुर्ल्लभ हनुमान सन ॥ २९१ ॥
हित के अहँक समान, सजल-नयन रघुनाथ कह ॥ २९२ ॥
अतिसाहसधर बीर, अविरल भक्तिक भवन अहँ ॥ २९३ ॥
पिता अहाँक समीर, जगत्प्राण-सुत उचित थिक ॥ २९४ ॥

लड़ाई भी कैसे ठानूँ। २८२ मैं सीता की दशा देख खिन्न हो गया और चलते-चलते अशोक वाटिका को उजाड़ दिया। २८३ वहाँ घमासान लड़ाई हुई। बहुत से वीर लड़ाई में खेत आये। २८४ रावण का बेटा अक्षयकुमार मेरे ही हाथ से मारा गया। २८५ तब क्रुद्ध हो मेघनाद आया और उसने अन्यायपूर्वक मुझे परास्त किया। २८६ उसने ब्रह्मास्त्र चला दिया। मैं उसमें बाँधा गया और दुख-भोग करने लगा। २८७ तब लंका में घी और तेल जमा किया गया। मेरी पूँछ में सन और कपड़ा लपेटा गया और उसे घी तथा तेल से भिगोया गया और यह सोचकर उसमें आग लगा दी गई कि यह तुच्छ बन्दर जल मरेगा। २८८-२८९ राम के प्रताप से मैं हारा नहीं। मैंने नगर भर के सारे भवनों को जला दिया।" २९० सुनकर राम की आँखों में हर्ष के आँसू भर गये और वे बोले— "आपने जैसा काम किया है वह आपके सिवा कौन कर सकता है? देवताओं के लिए भी ऐसा करना कठिन है। आपके समान मेरा हितकारी और कौन है? २९१-२९२ आप परम साहसी और वीर हैं। आप अटूट भक्ति की खान हैं। २९३ आपके पिता वायु हैं जो 'जगत-प्राण' कहलाते हैं। ऐसे पिता के पुत्र के लिए यह उचित ही है। २९४ नाव उपलब्ध नहीं है,

॥ घनाक्षरी ॥

नाव अरि लाव नहि, उतरक दाव नहि, ॥ २९५ ॥
एक बुद्धि आव नहि सागर अपार मे ॥ २९६ ॥
वीर अरि छोट नहि, सङ्ग एक गोट नहि, ॥ २९७ ॥
लङ्का लघु कोट नहि विदित संसार मे ॥ २९८ ॥
दनुज अबल नहि, पुरी गम्य थल नहि, ॥ २९९ ॥
प्रदेश अमल्ल नहि युद्धक विचार मे ॥ ३०० ॥
अहाँक समान महि वीर हनुमान नहि, ॥ ३०१ ॥
सर्व्वस्वक दान नहि तूल उपकार मे ॥ ३०२ ॥

॥ इति श्रीचन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे सुन्दरकाण्डे चतुर्थोऽध्यायः ॥

॥ इति सुन्दरकाण्ड ॥

पार उतरने का कोई रास्ता नहीं मिलता, इस अपार सागर में कोई बुद्धि काम नहीं आ रही है। २९५-२९६ दुश्मन मामूली वीर नहीं है; साथ देने वाला कोई नहीं है; संसार में प्रसिद्ध है कि लंका कोई छोटा क़िला नहीं है। २९७-२९८ राक्षस कमज़ोर नही है। लंकापुरी जाना आसान नहीं है। युद्ध के मामले में लंका मल्लों (वीरों) से खाली नहीं है। २९९-३०० हे हनुमान, आपके समान धरती में और कोई वीर नहीं है, और सर्वस्व-दान भी परोपकार के तुल्य नहीं होता है। ३०१-३०२

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में सुन्दरकाण्ड का चौथा अध्याय समाप्त ॥

॥ सुन्दरकाण्ड समाप्त ॥

लंकाकाण्ड

॥ अथ प्रथमोऽध्यायः ॥

॥ श्लोक अनुष्टुप् ॥

मुकुन्दम्माधवं वन्दे समुद्रे सेतुकर्त्तारम् ॥ १ ॥
शयानन्दर्भशय्यायां दशग्रीवस्य हन्तारम् ॥ २ ॥
उमेशं सर्व्वदं वन्दे महाकालं गुणातीतम् ॥ ३ ॥
गरैः काकोदरैः प्रेतैः पिशाचाद्यैश्च निर्भीतम् ॥ ४ ॥

॥ चौपाइ ॥

लङ्का-चरित कहल हनुमान । सुनि प्रसन्न-मन श्रीभगवान ॥ ५ ॥
दोसर यहन करत के आन । दुष्कर कर्म्म कयल हनुमान ॥ ६ ॥
शत योजन जलनिधि विस्तार । खग समान उड़ि गेलहुँ पार ॥ ७ ॥
बड़ प्रताप लङ्का मे कयल । रावण आबि पकड़ि नहि धयल ॥ ८ ॥
सभ जन रक्षक मारुत-पूत । दोसर यहन हयत के दूत ॥ ९ ॥
मन मे होइछ समुद्रक ध्यान । कोन गति उतरब थिर नहि प्रान ॥ १० ॥

पहला अध्याय

राम की सेना की तैयारी और लंका-प्रस्थान

समुद्र में पुल बनानेवाले मुकुन्द माधव की मैं वन्दना करता हूँ, जो कुश की शय्या पर सोए हुए हैं और रावण को मारनेवाले हैं। १-२ मैं सभी कामनाएँ पूरी करनेवाले, गुणों से परे, महाकालस्वरूप, पार्वतीपति शिव की वन्दना करता हूँ जो विषों, सर्पों, पिशाचों आदि से निर्भीक हैं। ३-४ हनुमान ने लंका का वृत्तान्त सुनाया। सुनकर भगवान राम प्रसन्नचित्त हुए। ५ उन्होंने हनुमान से कहा— 'हे हनुमान, आपने जो दुष्कर काम किया है वैसा दूसरा कौन कर सकता है? ६ आप सौ योजन में फैले समुद्र को पक्षी की तरह उड़कर पार कर गये। ७ आपने लंका में भारी पराक्रम दिखाया। रावण आपको पकड़कर क़ैद नहीं कर सका। ८ हे पवनसुत हनुमान, आप सभी लोगों के रक्षक हुए। दूसरा ऐसा दूत कौन होगा? ९ मन में जब समुद्र का ध्यान करता हूँ तो चित्त घबरा जाता है, इसे किस तरह पार करूँगा? १० कैसे सीता को देखूंगा?

कोन परि देखब सीता जाय। रिपुकाँ मारब समर चढ़ाय॥ ११॥
शुनि सुग्रीव प्रभुक मुख-उक्ति। कहलनि साध्य हमर अछि युक्ति॥ १२॥
जलनिधि नक्र-झषाकुल तरब। लङ्का-गर्व्व सर्व्व हम हरब॥ १३॥
जिबइत नहि छाड़ब दशभाल। हे रघुपति हम अरिगण-काल॥ १४॥
चिन्ता जनु करु श्री रघुनाथ। विजय मानि लिय अपनहि हाथ॥ १५॥
बानर भालु बहुत रण-शूर। तनिकाँ लङ्का अछि कत दूर॥ १६॥
तरब समुद्र तकर मति करिय। रावण मृतक यहन मन धरिय॥ १७॥
धरब धनुष सन्मुख के हयत। जौँ सन्मुख दुख यम-घर जयत॥ १८॥
प्रभु समर्थ हमरा विश्वास। श्रीरघुनन्दन विश्व-निवास॥ १९॥
आगि पानि मे जाय समाय। बानर रहत न रण पछुआय॥ २०॥

॥ सोरठा ॥

मन-हर्षित रघुवीर, जलधि तरब से विधि करब॥ २१॥
कह रह धनुष सुतीर, हनूमान-साहित्य रह॥ २२॥
कहु लङ्काक सरूप, मारुत-नन्दन केहन से॥ २३॥
रावण भारी भूप, तत प्रवेश दुस्साध्य विधि॥ २४॥
हाथ जोड़ि हनुमान, कहल जेहनि लङ्कापुरी॥ २५॥
सानुकूल भगवान, मारब रावण सहित-बल॥ २६॥

कैसे लड़ाई ठानकर शत्रुओं को मारूँगा?" ११ सुग्रीव ने राम के मुँह से यह बात सुनकर कहा— "इसका उपाय मैं कर सकता हूँ। १२ मगर, मछली आदि से भरे समुद्र को मैं पार कर जाऊँगा। लंका के सारे घमंड को मिटा दूँगा। १३ रावण को जीते नहीं छोड़ूँगा। हे राम, मैं शत्रुओं का काल हूँ। १४ हे रघुनाथ, आप चिन्ता मत कीजिए। मान लीजिए कि विजय अपने ही हाथ में है। १५ बहुत सारे बन्दर और भालू लड़ाई में दक्ष हैं। उनके लिए लंका कितनी दूर है? १६ अब यह संकल्प कीजिए कि हम लोग समुद्र पार करेंगे। मान लीजिए कि रावण मर चुका। १७ मैं धनुष धरूँगा तो कौन मेरे सामने आएगा? यदि आएगा भी तो यमपुरी पहुँचकर दुःख झेलेगा। १८ हे रघुनन्दन, विश्वव्यापी ईश्वर, आप सब कुछ करने में समर्थ हैं। १९ पानी में आग लग सकती है, पर रण में वानर पीछे नहीं हो सकते हैं।" २० यह सुनकर राम प्रसन्न हो गये। उन्होंने कहा— "जैसा आपने कहा वैसा करूँगा। समुद्र पार करूँगा। २१ धनुष-बाण हाथ में और हनुमान साथ में रहेंगे। २२ हे पवनसुत हनुमान, बताइए, लंका किस रूप की, कैसी है? २३ रावण तो बड़ा पराक्रमी राजा है, अतः उस लंका में प्रवेश करना आसान नहीं होगा।" २४ हनुमान ने हाथ जोड़कर लंका का वर्णन सुनाया और कहा—

॥ चौपाइ ॥

गिरि त्रिकूट पर लङ्का केहनि । दोसर अमरपुरी हो जेहनि ॥ २७ ॥
सकल कनकमय दृढ़ प्राकार । मणिमय खम्भ सकल घरद्वार ॥ २८ ॥
परिखा शोभित निर्म्मल पानि । सुधा-मधुरताधिक पड़ जानि ॥ २९ ॥
उपवन वापी बहुत तड़ाग । पुर शोभा अति सुन्दर लाग ॥ ३० ॥
कय हजार शोभित गजवाह । पश्चिम द्वार न रिपु निर्वाह ॥ ३१ ॥
बहुत पदाति अश्व असबार । कय अर्व्बुद जन गणय न पार ॥ ३२ ॥
पूर्व्व द्वारमे तेहने सर्व्व । चिउटी ससर न तेहन पर्व्व ॥ ३३ ॥
बहुत रथी रह दक्षिण द्वार । मध्य कक्ष अतिशय विस्तार ॥ ३४ ॥
अगणित महामत्त गजराज । विविध यान रथि तनिक समाज ॥ ३५ ॥
बहुत शतघ्नी बड़ बड़ अस्त्र । सभकाँ परिहन लोहक वस्त्र ॥ ३६ ॥
केवल प्रभुक प्रताप सहाय । चतुर्थांश बल मारल जाय ॥ ३७ ॥
लङ्का जारल विपिन उजारि । अक्षयकुमार आदिकाँ मारि ॥ ३८ ॥
लघु वानरक हमर ई काज । परमेश्वर अपनै महराज ॥ ३९ ॥
प्रभु-कुदृष्टि मात्रहि जरि जयत । के अछि तेहन समर थिर हयत ॥ ४० ॥
सत्वर कयल जाय प्रस्थान । अरि-जन-दहन राम भगवान ॥ ४१ ॥

"आपकी कृपा रहेगी; मैं सेना-सहित रावण का संहार करूँगा। २५-२६ त्रिकूट पर्वत के ऊपर से लंका ऐसी लगती है जैसे दूसरी स्वर्गपुरी हो। २७ वह सारी सोने की बनी हुई है। उसकी चहारदीवारी बड़ी मज़बूत है। सारे भवनों और द्वारों के खम्भे रत्नों के हैं। २८ गढ़ के चारों ओर की खाई में निर्मल जल है जो अमृत से भी अधिक मीठा लगता है। २९ बहुत से उपवन हैं, वापियाँ हैं और पोखरे हैं। नगर की शोभा बड़ी रमणीय है। ३० कई हज़ार हाथी वाले सैनिक हैं। पश्चिम दरवाज़े पर शत्रु के प्रवेश की गुंजाइश नहीं है। ३१ भारी संख्या में पैदल सैनिक हैं। उनकी संख्या अरबों होगी, कौन गिन सकता है? ३२ पूरब के दरवाज़े में भी सब ऐसा ही है, वहाँ चींटी भी रेंगकर नहीं जा सकती है। ३३ दक्षिण दरवाज़े पर बहुत से रथारूढ़ सैनिक हैं। बीच का हिस्सा काफी फैला हुआ है। ३४ अनगिनत मत्त हाथी हैं, तरह-तरह के रथ और रथारोहियों का दल है। ३५ बहुत सी तोपें और बड़े-बड़े अस्त्र हैं। सभी लोहे का ज़िरहबख़्तर पहने हुए हैं। ३६ केवल आप के प्रताप से उसकी एक चौथाई सेना को मैंने मार दिया। ३७ वाटिका को उजाड़कर और अक्षयकुमार को मारकर लंका को जला दिया। ३८ मैंने छोटा सा वानर होकर जो ऐसा काम किया सो हे परमेश्वर, आपकी ही महिमा है। ३९ आपकी क्रुद्ध दृष्टि पड़ते ही शत्रु जल जाएगा। ऐसा कौन है जो लड़ाई में डटा रहेगा? ४० हे राम,

॥ सोरठा ॥

तखन कहल भगवान, शुनु कपीश सेना-निकर ॥ ४२ ॥
तत्क्षण कर प्रस्थान, उत्तम विजय-मुहूर्त्त अछि ॥ ४३ ॥

॥ षट्पद ॥

हमहुँ चलब यहि काल, काल दशमलहिँ मारब ॥ ४४ ॥
मारब बड़ बड़ दनुज, भार भूमीक उतारब ॥ ४५ ॥
तारब हम मुनिलोक, विदेह-तनूजा आनब ॥ ४६ ॥
नव नव चरित पवित्र, अमरगण गाओत मानव ॥ ४७ ॥
दक्षिणाक्ष अधभाग मे, स्फुरण होइ अछि बड़ सगुन ॥ ४८ ॥
चलु चलु यूथप सज्जलौँ, नहि कर्त्तव्य विचार पुन ॥ ४९ ॥

॥ विजया छन्दः ॥

इत मर्क्कटाधीश कय अर्व्व अक्षौहिणी ॥ ५० ॥
क्षोणिधर क्षोणि-संक्षोभ सौँ काँप ॥ ५१ ॥
तहँ दिग्गजोद्दण्ड महि शुण्डसम्पात कर ॥ ५२ ॥
चण्डरव दाँत महि कष्ट सौँ थाप ॥ ५३ ॥
गुरु पन्नगाधीश-फण फाट मन आँट भय ॥ ५४ ॥
कूर्म्मगणराट सह पीठ सन्ताप ॥ ५५ ॥

आप शत्रुओं के लिए मानों आग हैं। शीघ्र प्रस्थान कीजिए।" ४१ तब भगवान राम ने कहा— "हे सुग्रीव, सुनिए। तुरत सेना प्रस्थान करें। यह विजय-यात्रा के लिए उत्तम मुहूर्त है। ४२-४३ इसी समय मैं भी विदा होऊँगा। कालस्वरूप रावण को मारूँगा। ४४ बड़े-बड़े राक्षसों का संहार करूँगा। धरती का भार उतारूँगा। ४५ मुनिजनों का त्राण करूँगा। जानकी को ले आऊँगा। ४६ मेरे नये-नये चरित्रों (करामातों) की गाथा देव लोग और मानव लोग गाएँगे। ४७ दाहिनी आँख का निचला हिस्सा फड़क रहा है जो शुभ शकुन है। ४८ हे सेनापतियो, सभी तयार हो-होकर चलिए। अब क्या करें, यह सोचना नहीं है।" ४९ इधर वानरराज सुग्रीव कई अरब अक्षौहिणी सेना ले चले तो धरती डगमगाने लगी और उससे पहाड़ काँपने लगे। ५०-५१ उधर प्रचंड-दिग्गज लोग तिलमिला कर धरती पर सूँड़ पटक रहे हैं, घोर ध्वनि से चीख रहे हैं और बड़े कष्ट से अपने दाँतों से धरती को थामे हुए हैं। ५२-५३ उधर अति भार से शेषनाग का फन फटता जा रहा है और मन व्याकुल हो गया है। महाकच्छप अपनी पीठ पर धरती का भार बड़ी पीड़ा के साथ सहते हैं। ५४-५५ भगवान राम लंकापुरी पर विजय प्राप्त करने के लिए हाथ

बर विजय प्रस्थान भगवान श्रीराम प्रभु ॥ ५६ ॥
कयल लङ्कापुरी हाथ शरचाप ॥ ५७ ॥

॥ भुजङ्गप्रयात छन्दः ॥

चलू सर्व्वयूथेश लङ्केश मारू ॥ ५८ ॥
चतुर्दिक्षु सेनाक रक्षा सम्भारू ॥ ५९ ॥
लड़ाका बड़ा वीर दैत्येश भारी ॥ ६० ॥
महावञ्चनाधार सर्व्वत्रचारी ॥ ६१ ॥
हनूमान-कन्धस्थ श्रीराम भेला ॥ ६२ ॥
तथा अङ्गद-स्कन्ध सौमित्रि गेला ॥ ६३ ॥
विदा भेलि सेना युगान्ता घनाली ॥ ६४ ॥
सुपीतारुणा श्यामला वानराली ॥ ६५ ॥
कहै वीर पक्षी जकाँ जाइ लङ्का ॥ ६६ ॥
करी जाय शीघ्रे पुरीकेँ सतङ्का ॥ ६७ ॥
दशग्रीव को आबि केँ युद्ध कर्त्ता ॥ ६८ ॥
कहू कोश कीनाशकेँ आबि धर्त्ता ॥ ६९ ॥

॥ रोला छन्दः ॥

गज गवाक्ष ओ गवय मैन्द, द्विविदादि चलल नल ॥ ७० ॥
नील सुषेण ओ जाम्बबान, सेनाधिप भल भल ॥ ७१ ॥
मर्क्कट कर किलकार, अर्क्क-आच्छादित धूरा ॥ ७२ ॥
श्रीरघुबीर-प्रताप, कोश रणकोविद पूरा ॥ ७३ ॥

में धनुष-बाण ले प्रयाण कर रहे हैं। ५६-५७ आवाज़ होती है— "चलिए, सभी सेनापतियो, चलिए। लंकापति रावण को मारिए। चारों ओर सेना की सुरक्षा कीजिए। ५८-५९ राक्षसराज रावण भारी लड़ाकू वीर है। वह भारी माया जाननेवाला है, उसकी सर्वत्र गति है।" ६०-६१ राम हनुमान के कन्धे पर चढ़े तथा लक्ष्मण अंगद के कन्धे पर सवार हुए। ६२-६३ प्रलयकाल की मेघ-माला के समान सेना चली जिसमें पीले, लाल और काले रंगों के बानरों की पंक्तियाँ थीं। ६४-६५ वीर सैनिक लोग कहते— "पक्षियों की भाँति उड़कर लंका चलें और हम जल्द ही उसे आतंकित कर दें। ६६-६७ रावण आकर हम लोगों से क्या लड़ेगा? कपिगण आकर राक्षसों को पकड़ेंगे। ६८-६९ इस सेना में गज, गवाक्ष, गवय, मैन्द, द्विविद, नल, नील, सुषेण और जाम्बवान योग्य सेनापति थे। ७०-७१ कपिगण किलकार करते थे। धूल से सूरज छिप गया। ७२ राम की महिमा से कपिगण युद्ध में बड़े प्रवीण हैं। ७३ सेना के बीच में सुग्रीव-सहित राम

॥ सोरठा ॥

सैन्य मध्य श्रीराम, शोभित कपिपति सहित तहँ ॥ ७४ ॥
कतहु न हो विश्राम, अतिशय-रण-उत्साह मन ॥ ७५ ॥

॥ चौबेया छन्दः ॥

लाँघल सह्याचल, मलय सकल-दल, फल मधु करइत भक्षण ॥ ७६ ॥
तरुवर बड़ भारी, लेल उखारी, बानर समर-विचक्षण ॥ ७७ ॥
लाँगड़ि महि पटकय, तरु तरु लटकय, भूधर पर चढ़ि फामय ॥ ७८ ॥
बानर-मय धरणी, चल नभ-सरणी, मन किछु त्रास न मानय ॥ ७९ ॥

॥ कुण्डलिया ॥

किलकि-किलकि कौतुक करय, कपि-कुल अति बाचाल ॥ ८० ॥
रघुनन्दन आगाँ कहय, के थिक खल दशभाल ॥ ८१ ॥
के थिक खल दशभाल, व्याल पर हम छी खगपति ॥ ८२ ॥
सत्वर सन्तरु उदधि पार, हम करब दनुज-गति ॥ ८३ ॥
दनुज-मत्त-मातङ्ग उपर मदर्कट-मृगपति मिल ॥ ८४ ॥
बानर अनल समान, दनुज-कुल कानन थिक किल ॥ ८५ ॥

॥ सोरठा ॥

प्रलय-घटा-आटोप, अटकलि सेना सिन्धु-तट ॥ ८६ ॥
बानर-मन बड़ कोप, की विलम्ब जल-निधि तरू ॥ ८७ ॥
कहल राम भगवान, को प्रयास सागर तरब ॥ ८८ ॥

विराजमान हैं। ७४ कहीं ढिलाई नहीं है, सबों के मन में युद्ध करने का उत्साह है। ७५ फल और मधु चखते हुए कपिदल सह्याद्रि को तथा मलय को लाँघते हुए निकल पड़ा। ७६ युद्ध में दक्ष कपि लोग बड़े-बड़े पेड़ों को उखाड़ हाथ में ले लेते; ७७ पूँछ को धरती पर पटकते; पेड़ों पर लटकते और छलाँग मार-मारकर पर्वतों पर चढ़ जाते। ७८ लगता था कि सारी धरती पर बन्दर ही बन्दर हैं। वे आकाश-मार्ग से चलते और मन में कुछ भी डर नहीं करते। ७९ परम वाचाल कपिगण किलकारी मार-मारकर तमाशा करते और ८० राम के आगे कहते— "अरे वह दुष्ट रावण क्या है? वह साँप है तो हम गरुड़ हैं। ८१-८२ जल्द समुद्र को पार करें। हम राक्षसों की दुर्दशा कर देंगे। ८३ राक्षस-रूपी मतवाले हाथी पर कपि-रूपी सिंह टूट पड़ेंगे। ८४ राक्षस लोग जंगल हैं तो कपिगण आग।" ८५ प्रलयकाल के बादल-जैसे सेना समुद्र के किनारे ठहरी। ८६ कपियों के मन में बड़ा क्रोध था। वे कहते, "अब विलम्ब क्या, समुद्र पार किया जाए।" ८७ राम ने कहा— "हम किस युक्ति से समुद्र पार करेंगे? ८८ नावें

नहि देखी जल-यान, थिक विचार कर्त्तव्य की ॥ ८९ ॥
कपिपति आज्ञा पाबि, सन्निवेश सेना रहलि ॥ ९० ॥
की भेल सत्वर आबि, अति-अगाध बाधा कयल ॥ ९१ ॥
कर प्रभु विविध विलाप, हा जानकि सति प्रेयसी ॥ ९२ ॥
सभ मन हो सन्ताप, प्रजा तथा राजा यथा ॥ ९३ ॥

॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे
लङ्काकाण्डे प्रथमोऽध्यायः ॥

॥ अथ द्वितीयोऽध्यायः ॥

॥ चौपाइ ॥

रावण मन मन कर अनुमान। लङ्का डाहि गेल हनुमान ॥ १ ॥
बड़ आश्चर्य्य कहू की आन। अक्षयकुमारक लेलक प्राण ॥ २ ॥
सभा कयल निज लोक हकारि। रावण-बचन देथि के टारि ॥ ३ ॥
तखन सभ्य सौं रावण कहल। गुप्त न हमर कतहु कृति रहल ॥ ४ ॥
की कर्त्तव्य भेल बड़ घोल। बजबहि पड़य गरा पर ढोल ॥ ५ ॥

नहीं दिखाई देती हैं। अब यह विचारा जाए कि क्या करें?" ८९ सुग्रीव की आज्ञा पाकर सेना पड़ाव में टिक गयी। ९० सैनिक बोलने लगे, तेजी से आकर क्या हुआ? भारी, गहरा समुद्र हमारी यात्रा में बाधक हो गया। ९१ राम तरह-तरह से विलाप करने लगे— "हा जानकी, हा सती सीता, हा प्रेयसी।" ९२ सबका मन दुखी हो गया। कहावत है— 'यथा राजा तथा प्रजा'। ९३

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में लंकाकाण्ड का
पहला अध्याय समाप्त ॥

दूसरा अध्याय

रावण का हितैषियों के साथ विचार-विमर्श; विभीषण की चेतावनी

रावण मन में सोचता है, बन्दर लंका जला गया। १ बड़े आश्चर्य की बात है; और क्या कहा जाए, अक्षयकुमार का भी अन्त कर दिया। २ फिर उसने अपने हितैषियों की एक सभा बैठायी। रावण के वचन को कौन टाल सकता है? ३ तब रावण ने सभासदों से कहा— "मैंने जो कुछ किया वह कहीं किसी से छुपा न रहा। ४ अब क्या कर्तव्य है? इस विषय में बड़ी बहस हुई। अब कुछ न कुछ करना ही होगा, क्योंकि कहावत है, जब ढोल गले में पड़ता है तो बजाना ही पड़ता है। ५ मैं तो केवल नाम का राजा हूँ।

हम राजा छी केवल नाम। सभकाँ सुख धन सम्पति धाम॥ ६॥
एक-मत रहू कहू जे नीक। समर-कार्य्य कर्त्तव्ये ठीक॥ ७॥
नर वानर सौं मानब हारि। एहि सौं बढ़ि दोसर की गारि॥ ८॥
सामक समय रहल नहि आब। भावी आगाँ आगाँ धाव॥ ९॥
कहु कहु निज मति जे भल रीति। श्रवण करक भल जनकाँ नीति॥ १०॥
राक्षस बहुत कहल कर जोड़ि। देल जाय चिन्ता चित छोड़ि॥ ११॥
सुरपति-विजयी सुत घननाद। अनका जय मध कोन विवाद॥ १२॥
पुष्पक लेल कुबेरक छीनि। की सम्पति नहि अपन अधीनि॥ १३॥
वरुण बेचारे मानल हारि। आज्ञा केओ सकथि नहि टारि॥ १४॥
मय भय सौं देल कन्या आनि। भययुत की अपनैं मन हानि॥ १५॥
वानर आबि कयल उतपात। रण-वीरत्व देखु रहु कात॥ १६॥
नर-वानर सौं पृथिवी हीन। कय देब लागत थोड़े दीन॥ १७॥
आज्ञा प्रभुसौं पाओत जेह। कार्य्य-सिद्धि कय आनत सेह॥ १८॥

॥ दोहा ॥

बुद्धि-विहीन कुमन्त्रणा, कुम्भकर्ण शुनि कान॥ १९॥
कहल दशानन सौं उचित, नयकोविद निज ज्ञान॥ २०॥

यह सुख-सम्पत्ति, यह धन-धाम आप सबों का है, मैं तो केवल नाम का राजा हूँ। ६ आप सभी मेल से रहिए और जो अच्छा रास्ता हो वह बताइए। अब लड़ाई तो करनी ही है। ७ मनुष्य और बन्दर से हार मानना, इससे बढ़कर और तौहीनी क्या होगी? ८ अब साम (समझाते) का अवसर न रहा। जो भवितव्य होता है वह आगे-आगे दौड़ता जाता है, खुद द्रुत गति से घटता जाता है। ९ जिनकी समझ में जो अच्छा रास्ता हो, वह बताएँ। नीतिशास्त्र कहता है कि भले लोगों का विचार सुनिए। १० बहुत-से राक्षसों ने हाथ जोड़कर कहा— "हे रावण, मन में चिन्ता मत कीजिए। ११ जब इन्द्र तक को जीतनेवाले मेघनाद-जैसे आपके पुत्र हैं तब दूसरे को जीतने में क्या सन्देह है? १२ आपने कुबेर से पुष्पक विमान छीना है। कौन सम्पत्ति आपके हाथ में नहीं है। १३ आपसे बेचारे वरुण भी हार मान गये। आपकी आज्ञा कोई टाल नहीं सकता है। १४ मय नामक राक्षस ने डर से आपको अपनी बेटी दी। फिर आप डर से मन छोटा क्यों करते हैं? १५ बन्दरों ने उत्पात किया। इसके लिए आप अलग रहते हुए रण में हम लोगों की वीरता देखिए। १६ हम लोग पृथ्वी को मनुष्य-हीन और बन्दर-हीन कर डालेंगे। इसमें हमें बहुत समय नहीं लगेगा। १७ जिसको आपकी आज्ञा होगी, वही यह काम पूरा कर देगा।" १८ नासमझी से भरी यह बुरी सलाह सुनकर नीतिकुशल कुम्भकर्ण ने अपनी समझ के अनुसार रावण से

॥ रूपमाला छन्द ॥

चित्त दय दशकण्ठ प्रभु शुनु, कयल अहँ नहि नीक ॥ २१ ॥
कर्म्म सीता-हरण-रूपक, आत्म-नाशक थीक ॥ २२ ॥
रामचन्द्र अनन्त ईश्वर, काल-शासन बाण ॥ २३ ॥
धनुष सौँ छुटि जखन लागत, बचत अहँक कि प्राण ॥ २४ ॥
लेल अछि अवतार लक्ष्मी, राक्षसान्तक काज ॥ २५ ॥
काल-काली राम-सीता, प्राप्त अहँक समाज ॥ २६ ॥
कयल यद्यपि बहुत अनुचित, स्वस्थ-मन रहु भूप ॥ २७ ॥
कहब करब सुमन्त्र जेहन, भक्ति-भाव अनूप ॥ २८ ॥

॥ रोला छन्द ॥

शुनि सकोप कह मेघनाद की नीति विचारब ॥ २९ ॥
प्रभु-आज्ञा काँ पाबि राम लक्ष्मण काँ मारब ॥ ३० ॥
सुग्रीवादिक सकल प्रबल मर्क्कट संहारब ॥ ३१ ॥
मेघनाद हम पुत्र पिता-आज्ञा नहि टारब ॥ ३२ ॥

॥ घनाक्षरी ॥

कहल विभीषण विचार-सार बार बार ॥ ३३ ॥
करु न विरोध बन्धु राम भगवान सौँ ॥ ३४ ॥

कहा। १९-२० "हे रावण ध्यान देकर मेरी बात सुनिए। आपने अच्छा नहीं किया। २१ आपने जो सीता का हरण किया, वह मानों स्वयं अपना नाश किया। २२ रामचन्द्र अन्तहीन ईश्वर हैं। जब काल (यम) की आज्ञा के समान उनका बाण धनुष से छूटेगा तब क्या आपके प्राण बच पायेंगे ? २३-२४ लक्ष्मी ने राक्षसों के संहार के लिए सीता के रूप में अवतार लिया है। २५ राम कालस्वरूप होकर और सीता कालीस्वरूपा होकर आपके पास प्राप्त हैं। २६ यद्यपि आपने बहुत से अनुचित काम किये, तथापि आप निश्चिन्त रहिये। २७ मुझे आपके प्रति अनुपम भक्तिभावना है। आप जो भी भला विचार देंगे, उसके अनुसार मैं चलूँगा।" २८ यह सुनकर मेघनाद ने क्रोधपूर्वक कहा— "इसमें क्या नीति का विचार करना है। २९ जब ही प्रभु की आज्ञा मिल जाए, राम और लक्ष्मण को मार डालूँगा। ३० सुग्रीव आदि सभी बलवान बन्दरों का संहार कर दूँगा। मैं आपका पुत्र मेघनाद हूँ, आपकी आज्ञा कभी न टालूँगा।" ३१-३२ तब विभीषण ने आग्रहपूर्वक अपना ठोस विचार कहा— ३३ "भगवान राम से विरोध मत कीजिए। ३४ हनुमान आपकी नगरी लंका को

दशमाथ-नगर अनाथ जकाँ जारि गेल ॥ ३५ ॥
कत गोट अपमान भेल हनुमान सौँ ॥ ३६ ॥
एक गोट छोट भाय कहल कयल जाय ॥ ३७ ॥
खलक कहल न शुनल जाय कान सौँ ॥ ३८ ॥
बाली बलशालीक कुचालि पाबि आबि पुर ॥ ३९ ॥
दिव्य गति देल मारि उर एक बान सौँ ॥ ४० ॥

॥ अनुष्टुप् श्लोक ॥

धरित्री-पुत्रिका देवी, त्वया नीतात्र लङ्कायाम् ॥ ४१ ॥
हरेर्म्माया जगन्माता, हनूमत्प्राप्तलङ्कायाम् ॥ ४२ ॥
त्वया सा जानकी देया, न हेया सन्मतिर्ब्बन्धो ॥ ४३ ॥
अजेया वानरी सेना, समायाता तटे सिन्धोः ॥ ४४ ॥
महेशः किङ्करो यस्य, विभोः श्रीरामचन्द्रस्य ॥ ४५ ॥
प्रयासस्त्वल्लये कस्स्याद्दयार्द्रञ्चेन्मनो न स्यात् ॥ ४६ ॥

॥ चौपाइ ॥

काल विवश रावण हतज्ञान। धर्म्मकथा नहि धारण कान ॥ ४७ ॥
उलटे भाइक ऊपर कोप। असमय धर्म्म-ज्ञान हो लोप ॥ ४८ ॥
औषध सन्निपाति नहि खाय। अनट सनट रटि यमघर जाय ॥ ४९ ॥
क्रोध दशानन पुन बजलाह। मुनि भ्राता घर हमर छलाह ॥ ५० ॥

अनाथ की तरह जला गया। उसने कितना बड़ा अपमान किया। ३५-३६ छोटे भाई की एक बात सुनिए। दुष्टों की कही बात पर कान मत दीजिए। ३७-३८ राम ने बलवान बालि को कुकर्मरत पाकर उसके नगर में घुसकर छाती में एक बाण मारा और उसी से वह स्वर्गवासी हो गया। ३९-४० धरती की बेटी सीता को, जो भगवान विष्णु की मायाशक्ति हैं, जगत की जननी हैं, उन्हें आप हरकर यहाँ लंका में ले आये हैं और उस लंका को हनुमान ने आतंकित कर दिया है। ४१-४२ वह जानकी आप राम को लौटा दीजिए। हे भाई, आप सुध-बुध मत खोइए। ४३ न हारनेवाली बन्दरों की सेना समुद्र के किनारे पहुँच चुकी है। ४४ जिन रामचन्द्र के शिव स्वयं सेवक हैं, आपका अन्त करने में उन्हें क्या प्रयास लगेगा, यदि उनके मन में दया न आ जाए।" ४५-४६ काल के दबाये रावण की सुध-बुध जाती रही। उसने उचित सलाह पर ध्यान नहीं दिया। ४७ उल्टे अपने भाई के ऊपर क्रुद्ध हो उठा। जब बुरे दिन आते हैं तब उचित-अनुचित का ज्ञान लुप्त हो जाता है। ४८ सन्निपात का रोगी दवा न खाता, बल्कि अंट-संट बक कर मौत पाता है। ४९ फिर गुस्से में आकर रावण बोला— "मेरे घर में भ्राता मुनि थे। ५० यह सगा भाई विभीषण मेरे वंश को बदनाम करने

थिक कुल-दूषण सोदर भाय। अनुचित कयल जे कहल बजाय॥ ५१॥
बड़ कातर हिअ थर थर काय। जनु अन्धार घर सापहि साप॥ ५२॥
अरि-उत्कर्ष हमर लग बाज। धिक घोरि पिउलक सभटा लाज॥ ५३॥
हमरे लालित पालित पुष्ट। बुझल बिभीषण मानस दुष्ट॥ ५४॥
हमर नगर सौं खल हो कात। प्राण हरब मारब हम लात॥ ५५॥
छल मल दया सहोदर जानि। कुक्कुर-न्याय चढ़ल अछि छानि॥ ५६॥
शुनल बिभीषण मन बड़ आनि। लङ्का त्यागि चलल नभ फानि॥ ५७॥
मन्त्री चारि चतुर जन सङ्ग। बड़का भाइक बिगड़ल रङ्ग॥ ५८॥
गगन गदाकर धर्म्म पुकार। सर्व्व-बिनाश बढ़ल व्यवहार॥ ५९॥
काली काल लेल अवतार। हरण होयत अवनिक अति भार॥ ६०॥
तनि प्रेरित अहँकाँ नहि ज्ञान। निकट काल होइछ अनुमान॥ ६१॥
नर वानर कर दनुजक नाश। दशमुख त्यागू जीवन-आश॥ ६२॥
व्यापक ब्रह्म शुनै छी जेह। बिधि-प्रार्थित अवतरला सेह॥ ६३॥
बिस्मित-मन रावण बजलाह। सोदर-सर्प सदन अधलाह॥ ६४॥

वाला है। इसे बुलाकर मैंने जो विचार पूछा, वह ठीक नहीं किया। ५१ इसका दिल बड़ा कायर है, थर-थर काँप रहा है। कहावत है कि बुज़दिल को अँधेरे में साँप ही साँप नज़र आते हैं। ५२ मेरे सामने ही यह शत्रु की बड़ाई करता है। छिः, इसने लाज को घोलकर पी लिया। ५३ मेरा ही पालन-पोषण पाकर यह तगड़ा बना है। अब समझ में आया कि यह मन से दुष्ट है। ५४ अरे दुर्जन, तुम मेरे नगर से बाहर चले जाओ। लात मारते-मारते जान ले लूँगा। ५५ सगा भाई समझकर मैं बड़ी दया करता रहा। यह तो कुत्ते की तरह मेरे ही सिर पर सवार हो गया है।" ५६ यह बात सुनकर विभीषण के मन में भारी आन हुई। वे लंका को छोड़ छलाँग मारकर आकाश में चल पड़े। ५७ समझदार मन्त्री भी उनके साथ चले। बड़े भाई रावण का रंग बदल गया। ५८ विभीषण हाथ में गदा लिये आकाश में धर्म की पुकार करने लगे— चिल्लाकर सदुपदेश देने लगे— "सबको विनाश करनेवाली चालें चली जा रही हैं। ५९ काली ने और काल ने अवतार ले लिया है। अब धरती का भार दूर होगा। ६० हे रावण, आपका इस तरह नासमझ होना उन्हीं की प्रेरणा का फल है। लगता है काल नज़दीक आ गया है। ६१ नर और वानर राक्षसों का नाश करेंगे। हे रावण, अब जीवन की आशा छोड़िए। ६२ जो व्यापक ब्रह्म कहलाते हैं, विधाता की प्रार्थना से उन्होंने ही अवतार लिया है।" ६३ चकित हो रावण ने कहा— "सगा भाई और साँप का घर में रहना अच्छा नहीं है। ६४ समय पर मेल न हुआ तो अब क्या होगा? नाम के अनुरूप

समय सन्धि नहि कौसल आब। भीरु विभीषण नाम स्वभाव॥ ६५॥
कहल विभीषण भावी भङ्ग। जनि साहस खस अनल पतङ्ग॥ ६६॥
अद्यावधि हठ बल अभिमान। बिसरल नहि होयता हनुमान॥ ६७॥
रहितहुँ सहि घर कहितहुँ नीति। पुन पुर नाचय नटी कुरीति॥ ६८॥
॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे लङ्काकाण्डे द्वितीयोऽध्यायः॥

॥ अथ तृतीयोऽध्यायः॥

॥ हरिपद छन्द॥

नाम विभीषण जन कहइत छथि, दशमुख-सोदर-भाय॥ १॥
चरण-शरण मे राखु दयानिधि, अयलहुँ विकल पड़ाय॥ २॥
बहुत कहल हम नीति सभा मे, नहि मानल दशभाल॥ ३॥
मेघनाद रावण-सुत मन्त्री, रावण-मत वाचाल॥ ४॥
विश्वजननि वैदेही देवी, रामचन्द्र भगवान॥ ५॥
तनिक विरोध कुशल नहि ककरहु, ककरो बचत न प्राण॥ ६॥

ही विभीषण डरपोक है।" ६५ विभीषण ने कहा— "आगे बुरा हाल होने वाला है। जैसे साहस कर परवाने आग में जलते हैं। ६६ आज भी आप बल के अभिमान से हठ किये हुए हैं। अभी हनुमान आपको भूल नहीं गये होंगे। ६७ बर्दाश्त करके भी मैं घर में रहता और उचित सलाह देता रहता; पर इस नगर में तो फिर कुरीति का नंगा नाच हो रहा है। ६८

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में लंकाकाण्ड का दूसरा अध्याय समाप्त॥

तीसरा अध्याय

विभीषण का राम की शरण में आना और अभिषेक पाना

विभीषण बोले— "मुझको लोग विभीषण कहते हैं। मैं रावण का सगा भाई हूँ। १ हे दयासागर, मुझे अपने चरणों का शरण में रखिए। मैं दुखी हो भागकर आया हूँ। २ रावण के दरबार में उन्हें नीतिसम्मत उपदेश दिया, लेकिन रावण ने नहीं माना। ३ रावण का बेटा मेघनाद, जो उनका सलाहकार है, उनके समान ही मुँहजोर है। ४ मैंने उन्हें समझाया, सीता जगज्जननी हैं और रामचन्द्र ईश्वर हैं. ५ उनका विरोध करने से किसी का कल्याण नहीं; किसी के भी प्राण न बचेंगे, ६ तो मेरी यह बात सुनते ही

वचन हमर शुनितहिँ तहँ रावण, हाथ धयल तरुआरि ॥ ७ ॥
भयसौँ झटिति तनिक तट त्यागल, सहि नहि सकलहुँ मारि ॥ ८ ॥
मन्त्री हमर चारि जन सङ्गी, हिनकर उत्तम कर्म्म ॥ ९ ॥
विदित सकल विभु परमेश्वर काँ, सकल शुभाशुभ मर्म्म ॥ १० ॥

॥ चौपाइ ॥

के थिक के थिक भय गेल सोर । पकड़ पकड़ लङ्कापुर-चोर ॥ ११ ॥
कह सुग्रीव राम सौँ जाय । हिनकर विश्वासे अन्याय ॥ १२ ॥
रावण काँ लघु सोदर भाय । शान्त वेष की कारण पाय ॥ १३ ॥
आयल छथि मन्त्री सङ्ग चारि । कपट करत देत अहँ काँ मारि ॥ १४ ॥
धरु धरु बाँधि कहय किछु आन । राक्षस-गोलक बोल प्रमाण ॥ १५ ॥
हिनका सभ जन मारि खसाउ । शुभ संग्रामक सगुन बनाउ ॥ १६ ॥
शुनु कपि-वीर कहल हँसि राम । के हमरा जीतत संग्राम ॥ १७ ॥
उत्पति पालन लय सामर्थ्य । हमरा ककरो भय से व्यर्थ ॥ १८ ॥
हम देब अभय लाउ अरिआति । बड़ सज्जन छथि राक्षस जाति ॥ १९ ॥
हम छी अहँक शरण कहि धयल । सकृत प्रपन्न अभय जन कयल ॥ २० ॥
कहितथि रावण अपनहुँ आय । काल-कवल सौँ लितहुँ बचाय ॥ २१ ॥

रावण ने तलवार उठा ली । ७ मैं डरकर उनके पास से भागा । उनकी मार बरदाश्त न कर सका । ८ उनके चार मन्त्री, जो मेरे साथ आए हुए हैं, बड़े अच्छे आचरण वाले हैं । ९ आप व्यापक परमेश्वर हैं, आपको सारी बात मालूम ही रहती और सारे हित और अहित का तत्त्व ज्ञात ही रहता है ।" १० शोर मच गया कि कौन है, कौन है । पकड़ो-पकड़ो । यह तो लंका का चोर है । ११ सुग्रीव ने राम के पास जाकर उनसे निवेदन किया— "इनका विश्वास करना अनुचित होगा । १२ क्या कारण है कि रावण का सगा छोटा भाई शान्तिपूर्ण वेष और भावना के साथ चार मन्त्रियों-सहित आया है । लगता है, यह कोई प्रपंच करेगा और आपको मार देगा ।" १३-१४ कुछ और लोगों ने कहा— "इसे पकड़कर बाँध रखिए । पक्का यह राक्षसों के दल का है । १५ सब कोई मिलकर इसे मार गिराएँ, आगे की लड़ाई का शुभ सगुन बनायें ।" १६ राम ने हँसकर कहा— "लड़ाई में मुझसे कौन जीतेगा ? १७ सृजन, पालन और संहार तीनों शक्तियाँ मुझे प्राप्त हैं; फिर मुझे किसी से डर है, यह समझना निरर्थक है । १८ मैं उसे अभय देता हूँ, अगवानी करके ले आइए । राक्षस होते हुए भी वे बड़े सज्जन हैं । १९ 'मैं आपकी शरण में आया हूँ' यह कहकर इन्होंने मेरी शरण गही है । जो एक बार भी शरणापन्न हो जाता है उसे मैं अभय दे देता हूँ । २० यदि रावण स्वयं भी आकर इस तरह कहता तो मैं उसे भी काल के गाल से उबार लेता । २१ हे मित्र, मेरी

ई व्रत वृढ़तर हमरा मित्र। शतदोषी मन रहै पवित्र॥ २२॥
शुनि सुग्रीव गूढ़तर भाव। प्रभु-वचनक नहि उत्तर आव॥ २३॥
बड़ आनन्द ततय पुन जाय। निकट विभीषण देल बजाय॥ २४॥
कपिपति सङ्ग प्रभुक शुभ वास। अयला अचल-भक्ति निस्त्रास॥ २५॥
नयन सजल साष्टाङ्ग प्रणाम। कयल विभीषण कहि निज नाम॥ २६॥
धनुबर्णिधर शोभाधाम। देखल सानुज प्रभु घनश्याम॥ २७॥
परमेश्वर करता प्रतिपाल। स्मित-सुन्दर मुख नयन विशाल॥ २८॥

॥ पादाकुल ॥

महाराज सीता-मनरञ्जन, चण्ड चाप धर भक्त-दयानिधि॥ २९॥
शान्त अनन्त राम परमेश्वर, सुग्रीवक प्रभु मित्र स्वयंविधि॥ ३०॥
जगदुत्पत्ति पालना लय कर, तीनि-लोक-गुरु आदि सनातन॥ ३१॥
स्वेच्छाचार चराचर-संस्थित, बाहर भीतर भीति-रहित-मन॥ ३२॥
व्यापक व्याप्य विश्वमे भासित, देव जगन्मय समटा अनुमत॥ ३३॥
अपनेँक मायासौँ जग मोहित, पुण्य पाप-वश सकल गतागत॥ ३४॥

यह पक्की प्रतिज्ञा है। सौ अपराध करने पर भी यदि मन पवित्र रहे तो वह पवित्र ही समझें।" २२ सुग्रीव ने राम की बात सुनी और उसका भीतरी भाव समझा; फिर उनको कोई जवाब नहीं सूझा, वे कायल हो गये। २३ फिर बड़ी प्रसन्नता से वहाँ गये और विभीषण को अपने पास बुला लिया। २४ दृढ़ भक्ति से भरे और त्रास से रहित विभीषण सुग्रीव के साथ राम के कल्याणकारी आवास में आये। २५ विभीषण की आँखें आनन्दाश्रु से भर गयीं। उन्होंने अपना नाम बताकर बार-बार साष्टांग प्रणाम किया। २६ उन्हें राम का दर्शन हुआ; धनुष-बाण धारण किये हैं, बादल-जैसा श्याम वर्ण है, शोभा अपार है, साथ में लक्ष्मण विराजमान हैं, २७ मुँह में मुसकान है और बड़ी-बड़ी आँखें हैं। उन्हें विश्वास हुआ कि प्रभु राम उनकी रक्षा करेंगे। २८ विभीषण राम की स्तुति करने लगे— 'हे महाराज राम, आप सीता के मन को आनन्दित करनेवाले हैं, प्रचण्ड धनुष धारण करते हैं, भक्तों के लिए दया के सागर हैं; २९ शान्त हैं और अनन्त हैं, परमेश्वर हैं, सुग्रीव के प्रभु और मित्र हैं, स्वयं विधाता हैं। ३० आप संसार की सृष्टि, पालन और संहार तीनों करनेवाले हैं, तीनों लोकों के मालिक हैं आदि हैं, सनातन हैं। ३१ आप अपनी इच्छा के अनुसार जो कुछ चाहें, कर सकते हैं। आप चर और अचर हर वस्तु में बाहर और भीतर भी व्याप्त हैं। आपके मन में भय नहीं है। ३२ आप इस संसार में व्यापक और व्याप्य दोनों रूपों में प्रतीत होते हैं और आप जगत्स्वरूप भी हैं, क्योंकि आप में सभी विरोधों का समन्वय है। ३३ आप ही की माया से यह दुनिया मोहित (अज्ञान में पड़ी) है और पाप एवं पुण्य का फल

तावत्सत्य बिश्व भासित हो, रजत भ्रान्ति शुक्ति मे जेहन ॥ ३५ ॥
अपनेँक दया ज्ञानसौँ छूटय, प्रभु-पद-भक्त धन्य जे तेहन ॥ ३६ ॥

॥ चौपाइ ॥

अपनहि विधि हरि हर सुर सर्व्व । हरण करिय जग दुष्टक गर्व्व ॥ ३७ ॥
अणुसौँ अणु थूलहुँ सौँ थूल । जननी जनक सकल जन मूल ॥ ३८ ॥
सभसौँ रहित सहित सन काज । स्तुति हम कि करब होइछ लाज ॥ ३९ ॥
सकल अगोचर विभु परमेश । हरण कयल प्रभु हमर कलेश ॥ ४० ॥
हम राक्षस सत्कर्म-विहीन । अयलहुँ चरण-शरण हम दीन ॥ ४१ ॥
भासित माया-मानव-रूप । रावणारि जय जय विभु भूप ॥ ४२ ॥
जे छल सञ्चित हमरा पाप । से क्षय भेल सेवाक प्रताप ॥ ४३ ॥
ज्ञानयोग प्रभुसौँ हो प्राप्त । लङ्का दुर्ज्जय-दशा समाप्त ॥ ४४ ॥

॥ हरिपद ॥

कपट-रहित स्तुति कयल विभीषण शुनि प्रभु हर्षित-चित्त ॥ ४५ ॥
माँगू वर वरदानी हम छी जे अभीष्ट से वृत्त । ४६ ॥

भोगने के लिए जीव फिर-फिर जन्म लेते और मरते हैं । ३४ मिथ्या होते हुए भी यह संसार सच्चा प्रतीत होता है; जिस तरह सीप चाँदी समझ लिया जाता है । ३५ आप ही की दया से ज्ञान होने पर जन्म-मरण के बन्धन से छुटकारा मिलता है । जो आपका ऐसा भक्त है, वह धन्य है । ३६ आप ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि सभी देवता हैं । आप संसार में दुष्टों के घमंड को दूर कीजिए । ३७ आप लघु से भी लघु और महान से भी महान हैं, सभी लोगों के मूल (जन्मदाता) माता और पिता हैं । ३८ आप सभी गुणों से रहित हैं, फिर भी सगुण-रूप में काम करते हैं । मैं क्या स्तुति करूँ, स्तुति करते लज्जा होती है । ३९ आप सकल साधारण लोगों की समझ के बाहर हैं, व्यापक परमेश्वर हैं । हे प्रभु, आपने मेरे कष्ट को दूर किया । ४० मैं राक्षस हूँ, सत्यकर्मों से हीन हूँ, दीन हूँ; और आपके चरणों की शरण में आया हुआ हूँ । ४१ आप माया के बल मानव-स्वरूप धारण किये दिखाई देते हैं । हे रावण के शत्रु, विश्वव्यापी राजा, आपकी जय हो । ४२ जो पाप मैंने बटोरा था, वह आपके चरण की सेवा के फलस्वरूप सारे का सारा दूर हो गया । ४३ अब आपसे मुझे ज्ञान मिले और लंका में फैली बुरी नीति का अन्त हो । ४४ इस प्रकार विभीषण ने सच्चे हृदय से स्तुति की और राम सुनकर प्रसन्न हुए और बोले— ४५ "वर माँगिए, मैं वर देने को तैयार हूं । आपकी जो भी इच्छा हो, वह पूरी होगी ।" ४६ विभीषण ने कहा— "हे प्रभु, मैं धन्य हुआ । मेरे

कहल विभीषण देव धन्य हम भेल सकल सिधि काज ॥ ४७ ॥
प्रभु-पद-कमल नयन भरि देखल सत्य मुक्त हम आज ॥ ४८ ॥

॥ दोसर छन्द ॥

कर्म्मक बन्ध-विनाश हेतु हम, भक्तिज्ञान कौं पाबी ॥ ४९ ॥
देल जाय परमार्थ ध्यान निज, अपनैंक दास कहाबी ॥ ५० ॥
विषय-सुखक बैराग्य बनल रह, अपनैंक पद थिर भक्ती ॥ ५१ ॥
अपनैं सौं प्रभु किछु दुर्ल्लभ नहि, परमेश्वर बरशक्ती ॥ ५२ ॥
विमल विराग हमर जन योगी, शान्त हृदयमे बासा ॥ ५३ ॥
सीतासहित हमर अछि निश्चय, करब ध्यान प्रत्याशा ॥ ५४ ॥

॥ चौपाइ ॥

दर्शन हमर लाभ फल एक। सम्प्रति अहँक राज्य-अभिषेक ॥ ५५ ॥
लङ्कापति बनि भोगू राज। यावत गगन सूर्य्य द्विजराज ॥ ५६ ॥
शुनु कपीश जल घट भरि लाउ। हिनकाँ लङ्का-नृपति बनाउ ॥ ५७ ॥
घट भरि आयल सागर-पानि। भेल अभिषेक लग्न शुभ जानि ॥ ५८ ॥
देखि देखि जन जोड़ल हाथ। प्रणत-आर्त्ति-हर जय रघुनाथ ॥ ५९ ॥
अरि रावणक सहोदर भाय। करुणाकर लेलनि अपनाय ॥ ६० ॥

सारे कार्य सिद्ध हो गये, क्योंकि ४७ आपके चरण-कमल को नज़र भर देखा; आज मैं वास्तव में मुक्त हो गया। ४८ मेरी कामना है कि ऐसी भक्ति और ज्ञान दीजिए जिससे मेरे कर्मों के बन्धन टूट जायें। ४९ निःस्वार्थ भाव से आपका ध्यान होता रहे और मैं आपका दास कहाऊँ, ऐसा वर दीजिए। ५० संसार की वस्तुओं के भोग से विरक्ति रहे और आपके चरणों में स्थिर भक्ति रहे। ५१ आपसे कुछ भी पाना कठिन नहीं है; आप परम शक्तिमान परमेश्वर हैं।" ५२ यह सुनकर राम ने कहा— "जो हमारे सेवक योगी हैं उनके निर्मल, रागहीन, शान्त हृदय में सीता-सहित मेरा निवास रहता है। आप आशा करें कि आपको मेरा ध्यान होगा। ५३-५४ मेरे दर्शन पाने का एक फल आपको यह मिला कि मैं सम्प्रति आपका राज्याभिषेक करता हूँ। ५५ आप लंका के राजा बनकर तब तक राज्य को भोगते रहिए, जब तक आकाश में सूरज और चन्द्रमा रहें।" ५६ फिर राम ने सुग्रीव से कहा— "हे कपिराज सुग्रीव, सुनिए। घड़े में जल भर लाइए और इनको लंका का राजा बनाइए।" ५७ समुद्र से घड़ा भर पानी लाया गया। शुभ लग्न जानकर तुरन्त अभिषेक किया गया। ५८ यह देख-देखकर चकित हो सभी हाथ जोड़ बोले— "चरण पर गिरे लोगों की आर्ति दूर करनेवाले रामचन्द्र की जय हो! ५९ अपने शत्रु रावण के सगे भाई को भी परम दयालु राम ने अपना बना लिया।" ६० फिर विभीषण

मिलि कपीश कह लङ्कानाथ । सानुकूल प्रभु श्रीरघुनाथ ॥ ६१ ॥
रावण-बध मे होउ सहाय । किङ्कर-कोटि मे मुख्य कहाय ॥ ६२ ॥
कहल विभीषण शुनु कपिनाथ । सभ गति मति रघुनन्दन-हाथ ॥ ६३ ॥
किङ्कर-कर्म्म कुशल हम करब । अपने सबहिक सह सञ्चरब ॥ ६४ ॥
रावण दूत पठाओल चार । पर नर वानर बुझि व्यवहार ॥ ६५ ॥
रुसि गेला अछि हमरा भाय । लङ्का किदहु देता उलटाय ॥ ६६ ॥
शुक नामक चर गगन उचार । शुनु सुग्रीव समय अनुसार ॥ ६७ ॥
राक्षसेन्द्र कहलनि संवाद । नहि किछु कपिपति संग विवाद ॥ ६८ ॥
भ्राता सदृश बंश बड़ गोट । कर्म्म उठाओल अछि की छोट ॥ ६९ ॥
वनचर-राजा बड़ गोट नाम । आयल छी छिः की एहिठाम ॥ ७० ॥
राजकुमारक हृत भेल नारि । अहँक दोष नहि कयल विचारि ॥ ७१ ॥
घुरि सेना लय सदनहिँ जाउ । स्वेच्छाचार अमृत फल खाउ ॥ ७२ ॥
वानर जोतय लङ्का हाय । तौँ अकाल ध्रुव उदधि सुखाय ॥ ७३ ॥
वनचर-राजा ई नहि ज्ञान । वञ्चक-वचन गमायब प्रान ॥ ७४ ॥

से मिलकर सुग्रीव ने कहा— "हे लंका के राजा, आप पर भगवान राम अनुकूल हैं। ६१ आप रावण के वध में हमारे सहायक होइए और राम के सेवकों का मुखिया बनिए।" ६२ विभीषण ने कहा— "सभी काम और सभी बुद्धि राम के हाथ में हैं। ६३ मैं तो दक्षतापूर्वक केवल दास का काम करूँगा और आप लोगों के साथ-साथ चलूँगा।" ६४

रावण के गुप्तचर का राम की छावनी में आना

उधर रावण ने अपने दुश्मन, मनुष्य और बन्दर का हाल जानने के लिए और यह सोचकर कि भाई विभीषण रूठकर गया है, वह कहीं लंका का अहित न करे एक गुप्तचर दूत को भेजा। ६५-६६ शुक नाम का गुप्तचर आसमान में उड़ा और वहाँ से बोला— "हे सुग्रीव, समय के अनुरूप मेरी बात सुनिये। ६७ राक्षसराज रावण ने संवाद कहा है कि उन्हें सुग्रीव के साथ कोई झगड़ा नहीं है। ६८ आप भाई के समान हैं प्रतिष्ठित कुल के हैं, फिर यह छोटा काम क्यों अपने ऊपर लिया? ६९ आप वनचरों के राजा हैं। आपका बड़ा नाम है। फिर छिः यहाँ क्यों आये हैं? ७० राजकुमार की स्त्री का हरण हुआ, इसमें आपका दोष नहीं। सोच-विचार कर किया। ७१ सेना ले करके अपने घर लौट जाइए। इच्छानुसार सुख भोगिए। ७२ यदि बन्दर लंका को जीते तो निश्चय अकाल में ही समुद्र सुखा जाए। ७३ हे वनचरों के राजा, आपकी समझ में नहीं आया है। आप इन ठगों की बात में पड़कर जान गँवाएँगे। ७४ जहाँ देवता लोग भी हार मानते हैं, वहाँ ये नर

जतय अमरपति मानथि हारि। ततय करत नर वानर मारि॥ ७५॥
वानर शुनल उड़ल कय गोट। शुक काँ पटाक कयल लोटपोट॥ ७६॥
रामचन्द्र काँ कहथि शुनाय। आहि दूत नाहि मारल जाय॥ ७७॥
वानर हटल जाय महराज। प्राण लेबय चाहै अछि आज॥ ७८॥
अपनेँक देखयित ई बड़ शोच। दाढ़ी मोछ कठिन कपि नोच॥ ७९॥
रामचन्द्र हँसि देल छोड़ाय। शुक लङ्का मुख चलल पड़ाय॥ ८०॥
पुन आकाश जाय संभाष। कपिपति रहल कहक अभिलाष॥ ८१॥
लङ्केश्वर सौँ कि कहब जाय। कहल जाय से कथा शुनाय॥ ८२॥
कह सुग्रीव कहबनय सेह। बालिक गति भेलनि अछि जेह॥ ८३॥
राक्षस-नगर निन्द्य व्यवहार। आबि करब हम अरि-संहार॥ ८४॥
रामाङ्गना हरल खल चोर। जयबह कतय अन्त दिन तोर॥ ८५॥
आज्ञा देल तखन रघुनाथ। बाँधि धरू हिनका दुनु हाथ॥ ८६॥
रावण-दूत नाम शार्दूल। छल देखयित राक्षस प्रतिकूल॥ ८७॥
कपि मे कपि बनि गेल मिझड़ाय। चिन्हल भेल तौँ गेल पड़ाय॥ ८८॥
रावण सौँ कहलक से जाय। अनइत छी नहि दूत छोड़ाय॥ ८९॥

और वानर क्या लड़ाई करेंगे।" ७५ कपियों ने यह बात सुनी। कई बन्दर छलाँग लगाकर आकाश गये और शुक नामक दूत को पकड़कर धर दबाया। ७६ शुक रामचन्द्र को सुनाकर चिल्ला उठा— "हाय! दूत को मारना नहीं चाहिए। ७७ हे महाराज, आप इन बन्दरों को रोकिये। ये तो आज मेरी जान लेना चाहते हैं। ७८ आपकी नज़र के सामने यह हाल हो, यह बड़े दुख की बात है। ये कपि लोग तो मेरी दाढ़ी-मूँछ नोच रहे हैं।" ७९ रामचन्द्र ने हँसकर छुड़ा दिया। बेचारा शुक जान लेकर लंका की ओर भागा। ८० फिर आकाश में जाकर बोला— "हे कपिराज, एक बात कहने को रह गयी। ८१ मुझे यह समझाकर कहिए कि मैं जाकर लंकापति रावण से क्या कहूँगा?" ८२ सुग्रीव ने कहा— "यही कहना कि जो हाल वालि का हुआ वही आपका होगा। ८३ राक्षसों के नगर लंका में बुरा आचरण होता है, इसलिए मैं वहाँ आकर दुश्मनों का अन्त करूँगा। ८४ अरे चोर, तुमने राम की स्त्री का हरण किया। तुम जाओगे कहाँ? अब तुम्हारी मौत के दिन आ गये।" ८५ तब राम ने आज्ञा दी कि इसे दोनों हाथ बाँधकर रखिये। ८६ यह शार्दूल नाम का रावण का गुप्तचर था, जो राक्षस-जैसा तनिक भी नहीं लगता था। ८७ यह कपियों में कपि बनकर शामिल हो गया था। ज्यों ही पहचान में आया त्यों ही उड़ भागा। ८८ उसने रावण से जाकर कहा— "आप दूत को छुड़ाकर नहीं लाते। ८९ मैं तो आज भाग्य से

भाग्यहिँ बचि अयलहुँ हम आज। प्राण के अर्पय काल-समाज ॥ ९० ॥
अतिचिन्तातुर नृप लङ्केश। अन्तःपुर मे कयल प्रवेश ॥ ९१ ॥

॥ रूपमाला ॥

देखल वारिधि तखन रघुवर कोप लोचन लाल ॥ ९२ ॥
देखु लक्ष्मण दुष्ट वारिधि कयल गर्व विशाल ॥ ९३ ॥
हमर दर्शन हेतु ई नहि अबै छथि एक बेरि ॥ ९४ ॥
हमर को करताह वानर मनुज ई मन टेरि ॥ ९५ ॥

॥ जलहरण छन्द ॥

अथ जलनिधि-तट कहु निज निज मत ॥ ९६ ॥
कोन गति जलनिधि विषम तरू ॥ ९७ ॥
कमलनयन कुशशयन बहुत दिन ॥ ९८ ॥
अनशन व्रत प्रभु कयल बरू ॥ ९९ ॥
लछुमन कहल कुपित भय शुनु शुनु ॥ १०० ॥
निज कर शर-वर-धनुष धरू ॥ १०१ ॥
जड़ जलनिधि नहि कहल करथि हठ ॥ १०२ ॥
हिनक सकल जलहरण करू ॥ १०३ ॥

ही बचकर आया हूं। काल के पास जाकर अपनी जान कौन गँवाएगा।" ९० यह सुनकर लंकापति रावण भारी चिन्ता में पड़ा और रनिवास चला गया। ९१

समुद्र का मान-मर्दन और सेतु बनाने की तैयारी

राम ने आँखें लाल किये क्रोधपूर्वक समुद्र की ओर देखा और बोले—९२ "हे लक्ष्मण, देखिए, इस दुष्ट समुद्र को बड़ा घमंड हो गया है। ९३ यह मेरे दर्शन के लिए एक बार भी नहीं आया है। ९४ यह मन ही मन समझता है कि बन्दर मेरा क्या कर लेंगे। ९५ अब समुद्र के किनारे सभी लोग अपनी-अपनी राय कहिए कि इस बीहड़ समुद्र का लंघन कैसे किया जाए?" ९६-९७ कमल-नयन राम ने बहुत दिनों तक कुश के आसन पर सोकर अनशन-व्रत किया, पर समुद्र को कोई परवाह नहीं। ९८-९९ तब लक्ष्मण क्रुद्ध हो बोले— "सुनिए। अब आप धनुष-बाण अपने हाथ में लीजिए। १००-१०१ यह जड़ (चैतन्यहीन और मूर्ख) समुद्र हठी है, हमारी बात यों सुननेवाला नहीं है। १०२ अब तीर चलाकर इसके सारे पानी को सोख लीजिए।" १०३ राम ने कहा— "सचमुच में यह समुद्र भारी मूर्ख है। इसने

॥ मिथिला-संगीतानुसारेण केदार छन्दः ॥

कहल प्रभु जलनिधि महाजड़, कयल अति अपमान ॥ १०४ ॥
खनल हमरे पूर्व्व पुरुष, अहित हमरहि मान ॥ १०५ ॥
तुरत जल शोषण करब धय, बाण अनल-समान ॥ १०६ ॥
प्रीति भय बिनु कलहु प्रायः, शुनल अछि नहि कान ॥ १०७ ॥
कालकाल कराल शासन, धयल कर शर चाप ॥ १०८ ॥
शैल कानन सहित वसुधा-चलय भय-भर काँप ॥ १०९ ॥
एक योजन कूल त्यागल, जलधि मन सन्ताप ॥ ११० ॥
वारिचर-गण विकल-तर मन, करथि विकल विलाप ॥ १११ ॥

॥ चौपाइ ॥

डरसौं सागर थर थर काँप। देखल रामक प्रबल प्रताप ॥ ११२ ॥
दिव्यरूप धय मणि लय हाथ। गेला जतय राम रघुनाथ ॥ ११३ ॥
पदपङ्कज पर मणि देल राखि। त्राहि त्राहि पुन उठला भाखि ॥ ११४ ॥
हम बड़ जड़ खल-निकट निवास। एत दिन हम छल छी निस्त्रास ॥ ११५ ॥
समुचित हमरा होयहि बूझ। परमेश्वर जनिकाँ नहि सूझ ॥ ११६ ॥
नाश करू की राखू नाथ। अयलहुँ शरण करण प्रभु हाथ ॥ ११७ ॥
पुन नहि एहन करब हम दोष। परमेश्वर मन परिहरु रोष ॥ ११८ ॥

हमारा बड़ा अपमान किया। १०४ हमारे पूर्वज सगर ने ही इसे खोदकर बनाया है और यह हमें ही शत्रु समझता है। १०५ मैं आग के समान बाण चलाकर इसके सारे जल को सोख लूँगा। १०६ भय के बिना प्रीति होती, यह कहीं नहीं सुना गया है।" १०७ ऐसा कहकर काल के भी काल और कठोर शासन वाले राम ने धनुष-बाण हाथ में लिया। १०८ पहाड़ों और जंगलों-सहित सारी धरती डर से काँपने लगी। १०९ समुद्र को इतना सन्ताप हुआ कि किनारे को एक योजन दूर छोड़ चला। ११० जल-जन्तुओं का मन व्याकुल हो उठा और वे चीखने लगे। १११ राम का भारी प्रताप देखकर समुद्र डर से थर्राने लगा। ११२ वह दिव्य स्वरूप धारण करके हाथ में मणि का उपहार लिये वहाँ गया जहाँ राम थे। ११३ राम के पाँवों पर मणि रख दी और बोला, "बचाइए, मुझे बचाइए। ११४ मैं भारी जड़ हूँ। दुष्टों के बीच रहता हूँ। इतने दिनों तक मुझे घमंड था कि मुझे किसी से डर नहीं है। ११५ उचित दंड मुझे मिलना ही चाहिए, जिसे परमेश्वर नहीं दिखाई देते। ११६ अब आप चाहें तो मार दें या बचा लें। मैं शरण में आ गया। कुछ भी करना अब आपके हाथ में है। ११७ फिर मैं ऐसा अपराध कभी न करूँगा। हे ईश्वर, आप मन से क्रोध हटा लें।" ११८ इस प्रकार समुद्र की बात सुनकर

सागर-बिनय शुनल प्रभु कान। मन प्रसन्न भेला भगवान॥ ११९॥
अभय देल शरणागत जानि। जलधि तोहर नहि होयत हानि॥ १२०॥
हम जे चाप चढ़ाओल बाण। तकर कहू की नहि हो आन॥ १२१॥
उत्तर देश नाम गिरि कुल्य। पापी बसइछ बहुत अतुल्य॥ १२२॥
ततहि तीर प्रभु फेकल जाय। जैँ आभीर जरय समुदाय॥ १२३॥
बाण-निपात ततय भेल जाय। जारि घूरि तूणीर समाय॥ १२४॥
पुन सागर कहलनि शुनु राम। सहज उपाय सङ्ग एहिठाम॥ १२५॥
बहुत परिश्रम हो की हेतु। नल भल करता प्रस्तर-सेतु॥ १२६॥
मर्य्यादा प्रभु राखू आज। अनायास मे होइछ काज॥ १२७॥
कय प्रणाम गेल सागर पैशि। तखन विचार एतय भेल बैशि॥ १२८॥
कपिपति लक्ष्मणयुत श्रीराम। नल बजबाय लेल तहिठाम॥ १२९॥
शुनु नल शत योजन बन्ध सेतु। अगम जलधि लङ्का-जय हेतु॥ १३०॥
प्रभु भल कहल कहल नल वीर। चल दल संगी प्रबल समीर॥ १३१॥
कत अर्व्वुद वानर बलवान। लाबथि गिरिवर तोड़ि पखान॥ १३२॥
नल काँ सभ छल पढ़ले पाठ। ढेर भेल पाथर ओ काठ॥ १३३॥

भगवान राम हृदय से प्रसन्न हुए। ११९ शरण में आये जानकर समुद्र को अभय दिया— "हे समुद्र, आपका कोई अहित न होगा। १२० पर मैंने धनुष पर जो बाण चढ़ा दिया उसका अब दूसरा चारा क्या होगा सो बताइए?" १२१ समुद्र ने कहा— "उत्तर में गिरिकुल्य नाम का एक देश है, जहाँ भारी पापी लोग बसते हैं। १२२ हे प्रभु, इस बाण को वहीं चलाइए जिससे वहाँ के निवासी आभीर लोग जल मरें।" १२३ राम ने बाण छोड़ा और वह वहाँ जाकर गिरा, आभीरों को जलाकर लौटा और पुनः राम के तरकस में घुस गया। १२४ फिर समुद्र ने कहा— "हे राम, सुनिए। यहाँ पार जाने का एक सहज उपाय है। १२५ बहुत परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं। नल पत्थरों का शानदार पुल बना देंगे। १२६ हे प्रभु! मेरी प्रतिष्ठा बचाइए। आपका काम आसानी से हो जाता है"। १२७ इतना कहकर समुद्र प्रणाम करके जलराशि में लीन हो गया। तब यहाँ बैठकर विचार-विमर्श किया गया। १२८ सुग्रीव और लक्ष्मण के साथ राम बैठे और नल को वहाँ बुला लिया। १२९ राम ने कहा— "हे नल, सुनिए। लंका-विजय करने के लिए अगाध समुद्र में सौ योजन का पुल बनाया जाए।" १३० नल ने उत्तर दिया— "हे प्रभु! आपने ठीक कहा।" इतना कहकर वे साथियों के दल के साथ वायु-जैसे प्रबल वेग से चल पड़े। १३१ अरबों वीर वानर पहाड़ तोड़-तोड़कर पत्थर लाने लगे। १३२ नल को सारा पाठ पढ़ा ही था। पत्थर और लकड़ी का अम्बार लग गया। १३३ पुल के निर्माण में कौन

अप्रधान के सतय प्रधान। राम-काज मे सकल समान ॥ १३४ ॥
वर प्रसाद नल लेलन्हि काँधि। शत योजनक बाँध लेब बाँधि ॥ १३५ ॥
॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे लङ्काकाण्डे तृतीयोऽध्यायः ॥

॥ अथ चतुर्थोऽध्यायः ॥

॥ सवैया छन्दः ॥

बाँधल भेल बाँध वारिधि मे, दशवदनक विजयक मन काज ॥ १ ॥
शिवरामेश्वर तत संस्थापन, कयल सविधि प्रभु श्रीरघुराज ॥ २ ॥
रामेश्वरक करथि जे दर्शन, सेतुबन्ध काँ करथि प्रणाम ॥ ३ ॥
ब्रह्मघात-आदिक पातक सौं, छूटथि से कहलनि श्रीराम ॥ ४ ॥
वाराणसी जाय गङ्गाजल, लय रामेश्वर कर अभिषेक ॥ ५ ॥
सेतुबन्ध-सागर कर मज्जन, ब्रह्म होथि सम्प्राप्त-विवेक ॥ ६ ॥
महिमा हिनक अनन्त कहब कत, सकल मनोरथ-दायक रुद्र ॥ ७ ॥
शङ्कर-ध्यान निरन्तर जे कर, कि करत तनिका पापक क्षुद्र ॥ ८ ॥

प्रधान था और कौन उपप्रधान, यह कहा नहीं जा सकता ? राम के काम में सभी बराबर थे। १३४ उन्हें जो वर मिला था, उसके बदौलत उन्होने यह मार ले लिया कि सौ योजन का पुल बाँध लेंगे। १३५

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में लंकाकाण्ड का तीसरा अध्याय समाप्त ॥

चौथा अध्याय

रामेश्वर शिव की स्थापना; पुल का निर्माण; गुप्तचर शुक के मुँह से राम की सेना का वर्णन

रावण को जीतने के उद्देश्य से समुद्र में बाँध बनाया गया। १ वहाँ राम ने रामेश्वर शिव की विधिपूर्वक स्थापना की। २ राम ने कहा—"जो रामेश्वर का दर्शन करेंगे और सेतुबन्ध को प्रणाम करेंगे, वे ब्रह्महत्या आदि पापों से मुक्त होंगे। ३-४ जो वाराणसी जाकर, वहाँ से गंगा-जल लाकर रामेश्वर शिव का अभिषेक करेंगे और सेतुबन्ध के पास समुद्र में स्नान करेंगे, वे ज्ञान प्राप्त कर ब्रह्म में लीन होंगे। ५-६ रामेश्वर की महिमा का अन्त नहीं है, कितना वर्णन किया जाए। ये रुद्र सभी मनोकामना पूरी करनेवाले हैं। ७ जो सतत शंकर का ध्यान करते रहेंगे, उन्हें छोटे-छोटे पाप क्या करेंगे ?" ८ कपिवर नल ने एक दिन में चौदह योजन पुल बना लिया, दूसरे

॥ षट्पद छन्द ॥

एक दिन मे लेल सेतु बाँधि, चौदह योजन धरि ॥ ९ ॥
योजन बीस प्रमाण, दुसर दिन बाँधल नल हरि ॥ १० ॥
एकइस योजन सेतु, दिवस तेसर से कयलनि ॥ ११ ॥
बाइस योजन सेतु, चारि बासर निर्भयलनि ॥ १२ ॥
योजन तैस प्रमाण पुन, पाँचम दिन बाँधल अचल ॥ १३ ॥
बाँधल बाँधल जलधिकाँ, जय रघुनन्दन धुनि मचल ॥ १४ ॥
थल सन नल-कृत सेतु, चढ़ल भल चलल सकल दल ॥ १५ ॥
दलमल मेदिनि डोल, कोल कक्षप अहि हलचल ॥ १६ ॥
चल भेल बड़बड़ अचल, प्रबल कपि मन घन कड़कल ॥ १७ ॥
कल कल कय कपि उड़ल, व्योम रवि-बाजो भड़कल ॥ १८ ॥
विकल-लोक लङ्कापुरी, तङ्काकुल डङ्का शुनल ॥ १९ ॥
नल बाँधल अछि उदधिकाँ, वानर-दल अबइछ अनल ॥ २० ॥

॥ रूपमाला ॥

पवन-नन्दन तथा अङ्गद काँध चढ़ि दुहु भाय ॥ २१ ॥
देखल लङ्का दुर्ग वेलाचल-शिखर पर जाय ॥ २२ ॥
ध्वज प्रसाद सुवर्ण तोरण स्वर्णमय प्राकार ॥ २३ ॥
किला परिखा ओ शतघ्नी बनल सभ हथियार ॥ २४ ॥

दिन उन्होंने बीस योजन बाँधा। तीसरे दिन इक्कीस योजन बनाया। चौथे दिन बाईस योजन बनाया। ९-१२ पाँचवें दिन तेईस योजन बाँधा गया। १३ इस प्रकार बाँध पूरा होते ही शोर मच गया— समुद्र बँध गया, बँध गया, रघुनन्दन राम का जय! १४ जब नल ने स्थल-जैसा सेतु बना दिया तब उससे होकर सारी सेना चल पड़ी। १५ धरती डगमग डोलने लगी। शूकर, कच्छप और शेषनाग घबरा गये। १६ बड़े-बड़े अचल (पर्वत) चल हो गये। कपियों के मन-रूपी बादल कड़कने लगे। १७ कपिगण किलकारी भरते हुए आकाश में उड़ चले। सूरज के घोड़े हड़कने लगे। १८ लंकापुरी के निवासी रणभेरी की आवाज़ सुनते ही आतंकित और विकल हो उठे। १९ उन्होंने सुना, नल ने समुद्र को बाँध दिया, और वानरी सेना आग का लपट के समान बढ़ती आ रही है। २० राम और लक्ष्मण दोनों भ्राताओं ने क्रमशः हनुमान और अंगद के कन्धों पर सवार हो किनारे के पर्वत की चोटी पर चढ़ लंका-दुर्ग को देखा। २१-२२ वहाँ सोने की पताकाएँ थीं, सोने के महल और द्वार-भवन थे तथा सोने की चहारदीवारी थी। २३ गढ़ के चारों ओर खाईं थी और तोप आदि सभी हथियार लगे थे। २४ वहाँ एक बड़ा-सा अपूर्व भवन था।

भवन एक विचित्र विस्तृत स्थित जतय दशभाल ॥ २५ ॥
दश किरीट अपूर्व्व चमकय दशो मौलि विशाल ॥ २६ ॥
काल-मेघ समान कान्तिक कज्जलाद्रि समान ॥ २७ ॥
रत्नदण्ड सितात पत्रेँ लसित अति अभिमान ॥ २८ ॥
सचिव सह लङ्केश करइत छला जतय विचार ॥ २९ ॥
राम देल छोड़ाय शुक काँ गेला निज दरबार ॥ ३० ॥
पुछल रावण कहू शुक बुध की ततय वृत्तान्त ॥ ३१ ॥
रङ्ग अदित सन, कहू की कहल सीताकान्त ॥ ३२ ॥

॥ चौपाइ ॥

दशमुख-वचन शुनल शुक कान । कहलनि ईश्वर राखल प्राण ॥ ३३ ॥
गेलहुँ सागर-उत्तर तीर । संस्थित जत सानुज रघुवीर ॥ ३४ ॥
शोभित पुरुष मुख्यतस चारि । मान न कालहु सौँ से हारि ॥ ३५ ॥
सानुज राम नवल लङ्केश । कपिनायक देखल ओहि देश ॥ ३६ ॥
हम गगनस्थ कहल संवाद । कपि उड़ि धयलक कय हरिनाद ॥ ३७ ॥
कपि-कृत कत कहु की उतपात । सहल बहुत हम मूका लात ॥ ३८ ॥
बाँधल छलहुँ मनहु बड़ शोच । दाँत काट केओ नख सौँ नोच ॥ ३९ ॥

दशमुख रावण विराजमान था । २५ उसके दसों मस्तक पर दसों किरीटों से दसों दिशाओं में अद्भुत चमक फैल रही थी । २६ रावण काले बादल के समान या कालिख के पहाड़ के समान दिखाई देता था । २७ रत्नमय डंडी वाला सफ़ेद छाता उसकी शोभा बढ़ा रहा था और वह अभिमान से फूला हुआ था । २८ राम ने क़ैद किए हुए दूत शुक को छोड़ दिया । वह अपने दरबार में पहुँचा जहाँ लंकापति रावण अपने मन्त्री से विचार-विमर्श कर रहा था । २९-३० रावण ने शुक से पूछा— "हे पण्डित शुक, कहिए, वहाँ का क्या हाल है ? चेहरा फीका-सा लगता है । बताइए, राम ने क्या कहा ?" ३१-३२ रावण की बात सुनकर शुक ने कहा— "यही ग़नीमत है कि ईश्वर ने मेरे प्राण बचा लिये । ३३ मैं समुद्र के उत्तरी किनारे गया जहाँ लक्ष्मण-सहित राम ठहरे थे । ३४ वहाँ सबसे प्रमुख चार व्यक्ति थे जो काल से भी हार माननेवाले नहीं हैं— प्रथम राम, द्वितीय लक्ष्मण, तृतीय नये लंकापति विभीषण और चौथे सुग्रीव । इन चारों को मैंने वहाँ देखा । ३५-३६ मैंने आकाश से ही आपका संवाद सुनाया कि कपियों ने सिंह-गर्जन करके उड़कर मुझे पकड़ लिया । ३७ कपियों ने मेरी क्या-क्या दुर्दशा की, वह कहाँ तक सुनाएँ । मुझे बहुत लात और मुक्के सहने पड़े । ३८ मैं बँधा हुआ था, मन में भी भारी व्यथा थी । कोई बन्दर दाँत से काटता था तो कोई नाखून से नोचता

हम देखल बल कयल विचार। वानर-मात्र दनुज संहार ॥ ४० ॥
राम समाद कहल श्रीमान। हम अयलहुँ शुनि अपनहि कान ॥ ४१ ॥
जे बल सीता कयलह हरण। समर देखाबह वीराचरण ॥ ४२ ॥
आब विजय मे नहि अछि देरि। भोरहि लङ्का हम लेब घेरि ॥ ४३ ॥
हमरहु हृदय भेल अछि रोष। क्षण एक तोहर बल शोष ॥ ४४ ॥
अनकर कथा कहू की आज। अपनेक निन्दा बजितहिँ लाज ॥ ४५ ॥

॥ चौवेल छन्द ॥

कपि-मेला वेलाचल ऊपर, तरु तोड़ँ अछि लटकि लटकि ॥ ४६ ॥
लोचन-पथ लङ्काक लोक जौँ, तनिका मारय पटकि पटकि ॥ ४७ ॥
शुनु दशभाल काल दल जानू, चल अबइत अछि झटकि झटकि ॥ ४८ ॥
एको जन राक्षस नहि अहन, करत युद्ध रण अटकि अटकि ॥ ४९ ॥
सम्यक कयल उमेशाराधन, तथा चतुष्टय साधन ॥ ५० ॥
तप-प्रताप लङ्का गढ़ पाओल, सभ सौँ भेलहुँ महाधन ॥ ५१ ॥
जगदम्बा वन सौँ हरि आनल, कुल-मर्य्यादा बोरल ॥ ५२ ॥
मति विपरीति अनर्थ समय हो, पोखरिहि, माहुर घोरल ॥ ५३ ॥

था। ३९ मैंने उन लोगों की ताक़त देखी। मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि राक्षसों का अन्त यह वानरी सेना ही कर सकती है। ४० हे प्रभु! राम ने जो संवाद कहा है वह स्वयं सुनकर मैं यहाँ आया हूँ। ४१ उनका संवाद है कि 'जिस ताक़त से तुमने सीता का हरण किया वह वीरता तुम अब लड़ाई में दिखाओ। ४२ अब विजय में देर नहीं है। सुबह होते ही मैं लंका को घेर लूँगा। ४३ मेरे हृदय में भी क्रोध हुआ है। मेरा एक बाण ही तुम्हारी सेना को समाप्त कर देगा।' ४४ आज और की बात क्या करूँ? आपकी निन्दा बोलने में भी मुझे लज्जा होती है। ४५ वेलाचल के ऊपर वानरों की भीड़ लटक-लटककर पेड़ों को तोड़ती है। ४६ यदि कोई लंकावासी उसके सामने पड़ता तो वह उसे पटक-पटककर मारती है। ४७ हे रावण! समझिए कि काल का दल बड़ी तेजी से चला आ रहा है। ४८ एक भी राक्षस ऐसा नहीं है जो उसके सामने अड़कर लड़ाई करे। ४९ आपने भलीभाँति शिव की आराधना की और चारों पुरुषार्थ प्राप्त किये। ५० तप के बल से लंका-जैसा गढ़ पाया। सबों से अधिक धनवान हुए। ५१ पर वन से जगज्जनी जानकी को हर लाया, यह ठीक नहीं किया। इससे आपके कुल की प्रतिष्ठा गिर गई। ५२ जब बुरा होना होता है तब बुद्धि उलट जाती है। आपने मानो पोखरे में ही ज़हर घोल दिया। ५३ वानरों की सेना पास आ गई है और

॥ सवैया छन्दः ॥

अगणित विकट कटक कर्कट भट आयल निकट विरचि बड़ व्यूह ॥ ५४ ॥
शङ्का-विरहित लङ्का-गढ़ काँ लूटत करता के प्रत्यूह ॥ ५५ ॥
नहि प्रमाण प्रत्यक्ष सभ्य किछु निज लोचन सौँ देखल जाय ॥ ५६ ॥
जे जे वीर प्रधान ततय छथि तनिकाँ दै छी एखन चिन्हाय ॥ ५७ ॥

॥ षट्पद छन्दः ॥

गढ़ पर चाहथि कुदय राम-आज्ञा नहि पाबथि ॥ ५८ ॥
पर-दल-खण्डन-शील 'नील', कपि नाम कहाबथि ॥ ५९ ॥
शत सहस्र संग यूथपाल, अनलक बुझ बालक ॥ ६० ॥
सङ्गर-सुभट अजेय, त्रास हिनका नहि कालक ॥ ६१ ॥
सुग्रीवक सेनाधिपति, अव्याहत गति सकल थल ॥ ६२ ॥
लङ्कापति परिचय कहल, अबल उखाड़थि रण अचल ॥ ६३ ॥
विदित विश्व भरि छला, प्रबल अरिमर्दन बाली ॥ ६४ ॥
तनिक पुत्र युवराज नाम, 'अङ्गद' बलशाली ॥ ६५ ॥
कान्ति कमल-किञ्जल्क, पर्वताकार सुशोभित ॥ ६६ ॥
धरणि पटक लाङ्गूल शत्रु-कुल कर संक्षोभित ॥ ६७ ॥
शुनु लङ्केश्वर हिनक हम, कहब कहाँ धरि बुद्धिबल ॥ ६८ ॥
संग्रामक उत्साह मन, रघुपति-सेवक मन विमल ॥ ६९ ॥

गढ़ बना-बनाकर अनगिनत भयानक पड़ाव डाले हुए है। ५४ वह सेना निःशंक हो लंका-गढ़ को लूटेगी और इसमें कोई भी रोक-टोक नहीं सकेगा। ५५ प्रत्यक्ष में प्रमाण क्या? चलिए, अपनी आँखों से देख लीजिए। ५६ वहाँ जो-जो मुख्य वीर हैं, उनको पहचान अभी कश देता हूँ। ५७ लंका गढ़ पर अभी टूट पड़ना चाहते हैं पर राम की आज्ञा नहीं मिली है। ५८ शत्रु की सेना का संहार करना तो इन्हें स्वभावतः आता है। इन कपि का नाम है नील। ५९ ये सौ हज़ार सेना के नायक हैं। ये अग्नि के पुत्र हैं। ६० लड़ाई में अच्छा वीर भी इन्हें जीत नहीं सकता। इनको काल का भी डर नहीं है। ६१ ये सुग्रीव के सेनाध्यक्ष हैं और इनकी हर जगह अव्याहत गति है। ६२ हे लंकापति रावण, मैंने इनका परिचय बताया। ये कहीं डिगनेवाले नहीं हैं। लड़ाई में पर्वत को भी उखाड़ सकते हैं। ६३ शत्रु के संहार में समर्थ वालि नामक जो विश्वविख्यात वीर थे, उन्हीं के ये बलवान् पुत्र युवराज अंगद हैं। ६४-६५ इनके देह का वर्ण कमल के केसर-सा है। ये पर्वत जैसे विशालकाय हैं। ६६ ये जब धरती पर अपनी पूँछ पटकते हैं तो शत्रुओं के दल में खलबली मच जाती। ६७ हे लंकापति रावण, सुनिए। इनकी बुद्धि और बल का वर्णन मैं कहाँ तक करूँ। ६८ इनके मन में सदा लड़ाई का जोश रहता है; इनका चित्त पवित्र

पवन-पुत्र 'हनुमान', ललकि लङ्का-पुर जारल ॥ ७० ॥
अछय ज्ञात बल अछय, अछय-दल काँ संहारल ॥ ७१ ॥
जे अशोक-वन जाय, स्वामिनी-दर्शन कयलनि ॥ ७२ ॥
कयल सकल रघुराज-काज, भल भल फल खयलनि ॥ ७३ ॥
सगर नगर घर घर जनिक, नाम शुनय कम्पित रहय ॥ ७४ ॥
स्वर्ण शैल-सङ्काश तन, रुद्रमूर्त्ति बल के कहय ॥ ७५ ॥

॥ रूपमाला ॥

श्वेत राजत-अवनिधर रुचि, प्रबल बुद्धि विशाल ॥ ७६ ॥
कपिपतिक तट गतागत कर, चतुरतर सभ काल ॥ ७७ ॥
'रम्भ' नामक अतुल-विक्रम-केसरी-संकाश ॥ ७८ ॥
बार बार विलोक, लङ्का करय चाहथि नाश ॥ ७९ ॥
'शरभ' नामक कोटि-यूथप, थिकथि नायक बीर ॥ ८० ॥
दृष्टि दय दशभाल देखल जाय, ई बड़ धीर ॥ ८१ ॥
देखि रहला पुरी लंका, दग्ध जनु करताह ॥ ८२ ॥
जखन युद्ध विरुद्ध, उद्यत रोकि के सकताह ॥ ८३ ॥

॥ लोरठा ॥

'पनस' महा-बलवान, 'मैन्द' द्विविद' वानर तथा ॥ ८४ ॥
कपि हनुमान समान, आन आन संख्या-रहित ॥ ८५ ॥

रहता है और राम के सेवक हैं। ६९ ये वायु के पुत्र हनुमान हैं। इन्होंने क्रुद्ध हो लंकापुरी को जलाया। ७० इन्होंने उस अक्षयकुमार के दल का संहार किया, जिनका बल अक्षय माना जाता है। ७१ इन्होंने ही अशोक वाटिका जाकर सीता का दर्शन किया। ७२ राम के सारे काम को पूरा किया और अच्छे-अच्छे फल खाये। ७३ सारी लंकापुरी में घर-घर में इनका नाम सुन-सुनकर लोग काँपने लगे। ७४ इनका शरीर सोने के पर्वत-जैसा है। तेज में रुद्र के समान हैं। इनके बल का बखान कौन कर सकता है। ७५ ये 'रम्भ' नामक कवि हैं। इनका शरीर चाँदी के पर्वत-सा उज्ज्वल है। ये भारी बलवान और बुद्धिमान हैं। ये बड़े ही चतुर हैं और सदा सुग्रीव के पास आते-जाते रहते हैं। ये सिंह के समान बेजोड़ पराक्रमी हैं। ये बार-बार लंका की ओर देख रहे हैं और चाहते हैं कि इसे ध्वस्त कर दूँ। ७६-७९ इनका नाम 'शरभ' है। ये एक करोड़ सैनिकों के वीर नायक हैं। ८० हे रावण! गौर कर देखिए। ये बड़े धीर हैं। ८१ लंकापुरी को इस तरह घूर रहे हैं जैसे जला ही डालेंगे। ८२ जब ये युद्ध में खड़े होंगे तब इन्हें कौन रोक सकेगा? ८३ 'पनस', 'मैन्द', 'द्विविद' आदि और भी बहुत से बड़े-बड़े बलवान योद्धा हैं, जो हनुमान की बराबरी करते हैं। अन्यान्य योद्धाओं को तो गिना

॥ वनाक्षरी ॥

बाणक प्रताप जलनिधि थर थर काँप ॥ ८६ ॥
एको जन आबि न चढ़ल बीर्घ तरणी ॥ ८७ ॥
वानर बहुत व्योम विहग समान ऊड़ ॥ ८८ ॥
रोकल न रहय कतहु कपि-सरणी ॥ ८९ ॥
वीर दशकन्ध नहि चलत प्रबन्ध किछु ॥ ९० ॥
निरधन्ध बुद्धि की वानरमय धरणी ॥ ९१ ॥
प्रबल जनिक दल विदित सकल थल ॥ ९२ ॥
कलबल नलक समुद्र-सेतु-करणी ॥ ९३ ॥

॥ अनुष्टुप् ॥

विधाता सर्व्वलोकानामयं रामो धनुर्द्धरी ॥ ९४ ॥
मनोवाचामदृश्योऽसौ प्रभुस्सर्व्वत्र सञ्चारी ॥ ९५ ॥
रघोर्व्वंशे समुत्पन्नस्समर्थो भाति संसारी ॥ ९६ ॥
घनानां घोरपापानां खलानां गर्व्वसंहारी ॥ ९७ ॥
कृतं कार्य्यं त्वया नेष्टं छलाश्नीतात्र वैदेही ॥ ९८ ॥
शरण्यस्सेव्यतां सम्यक् भव त्वं तत्पदस्नेही ॥ ९९ ॥

भी नहीं जा सकता है। ८४-८५ राम के बाण के प्रताप से समुद्र थर्रा उठा। ८६ एक भी सैनिक को जहाज पर चढ़ना न पड़ा। ८७ असंख्य कपि पक्षी की तरह आकाश में उड़ चले। ८८ कपियों का रास्ता जल-स्थल-आकाश कहीं रुका न रहता। ८९ हे वीर रावण! अब किसी भी इन्तिज़ाम से काम चलने को नहीं। ९० अब चैन कहाँ? सारी धरती बन्दरों से छाई लगती है। ९१ राम की सेना बड़ी प्रबल है। समुद्र में सेतु बाँधने की नल की कला हर जगह मशहूर है। ९२-९३ ये धनुषधारी राम सभी लोकों की सृष्टि करनेवाले हैं। ९४ ये मन और वचन के परे हैं, सबों के मालिक हैं, सर्वत्र जानेवाले हैं। ९५ मायावश रघु के वंश में अवतार ले सर्वशक्तिमान होते हुए भी सांसारिक मनुष्य-जैसे लगते हैं। ९६ घनघोर पापों और दुष्टों के घमंड को दूर करनेवाले हैं। ९ आपने जो छल से सीता का हरण किया वह अच्छा नहीं किया। ९८ आप शरणागतवत्सल राम की सेवा कीजिए और उनके चरण-कमल में प्रीति कीजिए। ९९ जगज्जननी जानकी को हरण करके आपने अच्छा नहीं किया। अब शान्ति के खातिर सीता राम को लौटा

हृता भ्रान्त्या जगन्माता प्रशान्त्यातां प्रयच्छास्मै ॥ १०० ॥
असून् संरक्ष तद्बाणरनीती रोचते कस्मै ॥ १०१ ॥
॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे लङ्काकाण्डे चतुर्थोऽध्यायः ॥

॥ अथ पञ्चमोऽध्यायः ॥

॥ चौपाइ ॥

॥ जयकरी इत्यपि नाम ॥

शुक-मुख-वचन शुनल लङ्केश । मूढ़ तोर जानल बुढ़ बेश ॥ १ ॥
शुक गुरुजकँ को कहइछ ज्ञान । बाढ़ल मनमे बड़ अभिमान ॥ २ ॥
रे पापिष्ठ नगर काँ छाड़ । बसय न देब भाँड़ सम राड़ ॥ ३ ॥
एखनहि प्राण तोर हम लेब । खर खर कें मानब गुरु-देव ॥ ४ ॥
किङ्कर जानि कयल प्रतिपाल । सिंहक शासक शुभ्र शृगाल ॥ ५ ॥
रे हम त्रिभुवन-शासक आज । नीति पढ़ाबय मन नहि लाज ॥ ६ ॥
प्राण हरण करितहुँ से क्रोध । बचला पूर्व्वक गुण अनुरोध ॥ ७ ॥
पुन जनु आबह राजद्वार । बिगड़ल बुद्धि बिलट व्यवहार ॥ ८ ॥

दीजिए; और १०० उनके तीरों से अपनी जान को बचाइए। अन्याय किसे रुचता है ?" १०१

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में लंकाकाण्ड का चौथा अध्याय समाप्त ॥

पाँचवाँ अध्याय

रावण द्वारा शुक का अपमान; शुक की कथा; माल्यवान का निष्कासन

लंकापति रावण ने शुक के मुँह से उपर्युक्त बातें सुनीं और सक्रोध बोले, "अरे मूढ़, मुझे समझ में आ गया। तुम बहुत बूढ़े हो गये हो। १ शुक, तुम तो गुरु की तरह मुझे ज्ञान की बातें बताते हो। तुम्हारे मन में अभिमान बहुत बढ़ गया है। २ अरे परम पापी, तुम मेरी लंकापुरी से बाहर चले जाओ। इस फूटे भाँड़ जैसे राँड़ को मैं अपने नगर में रहने नहीं दूँगा। ३ अभी मैं तुम्हारी जान ले लूँगा। गधे के बराबर इस दूत को मैं अपना गुरुदेव मान लूँ ? ४ नौकर समझकर मैंने तुम्हारी परवरिश की। क्या सफ़ेद सियार सिंह का शासक हो सकता है ? ५ अरे, आज मैं तीनों लोकों का शासक हूँ, फिर मुझे ही तुम नीति पढ़ाते हो ? मन में लज्जा नहीं होती है तुम्हें ? ६ गुस्सा तो मुझे इतना हुआ कि अभी मैं तुम्हारी जान ले लेता, पर पिछले गुणों के कारण तुम अभी बच गये। ७ फिर कभी इस दरबार में मत

बानर-नख-दन्तक विष देह। औषध करह जाय निज गेह॥ ९॥
जोड़ल हाथ कम्प बड़ अङ्ग। चलल भवन भय मानक भङ्ग॥ १०॥
मन मे शुक कह महाप्रसाद। हेतु कि ककरहु कहब समाद॥ ११॥
शुक ब्रह्मिष्ठ छला द्विज जाति। वानप्रस्थ-विधि-रत दिन राति॥ १२॥
देव-वृद्धि सुख हो अभिराम। यज्ञ करथि असुर-क्षय-काम॥ १३॥
वज्रदंष्ट्र एक राक्षस घोर। आयल आश्रम बनि कें चोर॥ १४॥
अयला ततय अगस्ति महान। शुक पाहुनक कयल सम्मान॥ १५॥
जखना कुम्भज गेला नहाय। वज्रदंष्ट्र तनि वेष बनाय॥ १६॥
छाग मांस होइछ मन खाइ। कहलनि तृप्त निजाश्रम जाइ॥ १७॥
शुक बनबाओल तेहने पाक। मुनि विलम्ब पूजा सन्ध्याक॥ १८॥
से राक्षस पुन चूपहि चूप। आयल बनि शक-वधू स्वरूप॥ १९॥
मानुष-मासु परसि देल पात। अन्तर्हित अपने भय कात॥ २०॥
मानुष-मांस अमेध्य विचार। घोर कोप मुनि-मन सञ्चार॥ २१॥
रे शुक राक्षस हो तों जाय। मानुष मांस तों दितैं खोआय॥ २२॥

आना। जब बुद्धि बिगड़ जाती है तब चाल उलट जाती है। ८ तुम्हारे शरीर में बन्दर के नाखूनों और दाँतों का ज़हर फैला है। अपने घर जाकर इसका इलाज करो।" ९ सुनते ही शुक का शरीर ज़ोर-ज़ोर से काँपने लगा। उसने हाथ जोड़ लिये और भयभीत हो सम्मान गँवाकर अपने घर चला गया। १० शुक ने मन ही मन कहा— बड़ी कृपा हुई कि ज़िन्दा छोड़ दिया। मेरा अपराध यही हुआ कि मैंने किसी का संवाद सुना दिया। ११ शुक द्विज थे, ब्रह्म के साधक थे, दिन-रात वानप्रस्थों के कर्म में लगे रहते थे। १२ देवताओं की वृद्धि से अच्छा सुख मिलता है, इसलिए असुरों के नाश के लिए वे यज्ञ किया करते थे। १३ एक समय में वज्रदंष्ट्र नाम का एक भयानक राक्षस चोर बनकर उनके आश्रम में घुस आया। १४ उस आश्रम में महर्षि अगस्ति पधारे। शुक ने उन अतिथि का समुचित सत्कार किया। १५ जब अगस्ति मुनि स्नान करने गये तब वज्रदंष्ट्र ने उनका स्वरूप धारण कर लिया, १६ और बोले कि— "मन करता है खस्सी का मांस खाऊँ और तृप्त हो अपने आश्रम लौट जाऊँ।" १७ शुक ने वैसा ही खस्सी का मांस बनवाया। मुनि को शाम की पूजा में कुछ समय लग गया। १८ फिर वह राक्षस चुपके से शक जाति की महिला का रूप धारण कर आ गया। १९ उस छद्मरूपा महिला ने मनुष्य का मांस पत्ते पर परोस दिया और खुद ग़ायब हो गयी। २० मुनि अगस्ति ने ज्यों ही समझा कि मनुष्य का अखाद्य मांस परोसा गया है, त्यों ही क्रोध से आगबबूला हो गये, २१ और बोले— "अरे शुक, तुम तुरन्त राक्षस हो जाओ। आज तो तुम मुझे मनुष्य का मांस खिला

शुक-मन शुष्क कहल मुनि जेह। छाग-मांस भोजन विधि सेह॥ २३॥
मुनि मुहूर्त भरि कयलनि ध्यान। आनल कर्म्म कयल केओ आन॥ २४॥
कहल अगस्ति तोहर नहि दोष। शाप अकारण मन घन रोष॥ २५॥
रामक जखन होयत अवतार। दशवदनक बनबह तो चार॥ २६॥
रामक दर्शन सौँ छूट शाप। कर जनु शुक किछु मन मे ताप॥ २७॥
शुक ब्राह्मण राक्षस तन पाय। भोगल कर्म्म लिखल कत जाय॥ २८॥
बैखानस सङ्ग कर तप वेश। राक्षसताक रहल नहि लेश॥ २९॥

॥ चौबेल छन्द ॥

शुक निष्काशन कयल दशानन, तखन कहल भल माल्यवान॥ ३०॥
की निश्शङ्क चित्त लङ्कापति, कपि-डङ्का शुनि पड़य कान॥ ३१॥
अपनहुँ आँखि प्रबल दल देखल, अपने काँ के कहत आन॥ ३२॥
श्रीरघुवर-परमेश-समागम, नृपवर भय रहु सावधान॥ ३३॥
सीता देल जाय रघुवर केँ, काल-दण्ड कर तनिक बाण॥ ३४॥
शपथ खाय हम सत्य कहै छी, नहि तौँ बचत न अहँक प्राण॥ ३५॥
कोटि कोटि हनुमान अधिक-बल, नख-दन्तायुध चढ़ल शाण॥ ३६॥

देते।" २२ सुनते ही शुक के प्राण सूख गये। उन्होंने कहा— "हे मुनि, आपने जो कहा था वही खस्सी का मांस तो भोजन में दिया गया है।" २३ मुनि अगस्ति क्षण भर ध्यानमग्न हुए, फिर उन्हें मालूम हो गया कि यह कुकर्म किसी और ने किया है। २४ अगस्ति ने कहा— "अहा इसमें तुम्हारा अपराध नहीं है। तेज क्रोध के चलते नाहक मैंने तुम्हें शाप दे दिया। २५ जब राम का अवतार होगा तब तुम रावण के गुप्तचर बनोगे। २६ राम के दर्शन से तुम्हारा यह शाप दूर हो जाएगा। हे शुक, तुम मन में कुछ सन्ताप मत करो।" २७ इस प्रकार ब्राह्मण शुक ने राक्षस का शरीर पाकर कर्म का फल भोगा। जो भाग्य में लिखा हुआ है वह टलेगा कैसे? २८ तब वह शुक संन्यासियों के साथ तप करने लगा और उसमें राक्षसत्व का लेश भी न रहा। २९ इस तरह जब रावण ने शुक को निकाल बाहर कर दिया तब माल्यवान् ने कहा— "हे लंकाधिपति, आप कैसे चैन से हैं जबकि वानरी सेना के डंके की आवाज़ सुनाई पड़ रही है? ३०-३१ आपने अपनी आँखों से भी वानरों की प्रबल सेना को देखा। फिर आपसे ग़ैर क्या कहेगा? ३२ हे श्रेष्ठ राजा, परमेश्वर राम पधार रहे हैं। आप सावधान होकर रहिए। ३३ राम को सीता दे दीजिए। उनके हाथ का तीर मानों काल-दंड है। ३४ मैं सौगन्ध के साथ कहता हूँ, ऐसा न करने से आपकी जान न बचेगी। ३५ इस वानरी सेना में करोड़ों सैनिक हनुमान से अधिक ताक़तवर हैं। उनके

प्रातः पुरी-प्रवेश करत सभ, शत शङ्कर नहि करत त्राण ॥ ३७ ॥
यदवधि सीता हरि आनल अछि, असगुन होइछ पुरी आबि ॥ ३८ ॥
तकरो शान्ति सविधि होअक थिक, काटल जाय अनिष्ट भावि ॥ ३९ ॥
रामचन्द्र नारायण निश्चय, तनिक चरण मे करु भक्ति ॥ ४० ॥
जननी वैदेही काँ मानू, हरिमाया वर-आदि-शक्ति ॥ ४१ ॥
शुनि दशभाल लाल-लोचन कह, यम-कुवेर काँ हमर त्रास ॥ ४२ ॥
वानर-बल-आश्रित दुइ भ्राता, होयता राक्षस-जनक ग्रास ॥ ४३ ॥
जाह जाह घुरि एतय न आबह, बहुत वृद्ध गत-बुद्धि-ज्ञान ॥ ४४ ॥
रामचन्द्र विशि मिलि आयल छह, ततहि जाह निर्व्वाह मान ॥ ४५ ॥

॥ सवैया ॥

गिरिवर-उच्च सौध पर रावण बैसल वर-मन्त्री-गण सङ्ग ॥ ४६ ॥
कथक गाव रसभाव सुखद स्वर विविध ताल लय बाज मृदङ्ग ॥ ४७ ॥
मन्दोदरी निकट पट-भूषण-शोभित छथि शुनइत वर गान ॥ ४८ ॥
मदिरा पात्र-पात्र शोभित थल त्रास नाश अतिशय अभिमान ॥ ४९ ॥

नाखून और दांत मानो सान पर चढ़ाकर तेज किए हुए हो। ३६ वह सेना सुबह लंकापुरी में प्रवेश करेगी। एक सौ भगवान् शंकर भी आपका त्राण न कर सकेंगे। ३७ जब से आप सीता को हर लाये हैं, तब से इस लंकापुरी में अपशकुन होते रहे हैं। ३८ इन अपशकुनों की शान्ति भी विधिपूर्वक की जानी चाहिए। भावी अमंगल का निराकरण किया जाय। ३९ रामचन्द्र निःसन्देह नारायण-स्वरूप हैं। उनके चरणों में भक्ति कीजिए। ४० सीता को जगज्जननी, विष्णु की माया आदिशक्ति समझिए।" ४१ यह सुनकर रावण की आँखें लाल हो गईं। वह बोला— "यम और कुबेर को भी मेरा डर होता है। ४२ केवल वानरी सेना की ताक़त वाले ये दोनों भाई राक्षसों के भक्ष्य हो जाएँगे। ४३ जाओ, अपने घर लौट जाओ। फिर यहाँ मत आना। बहुत बूढ़े हो चले। अब तुम्हारी समझ-बूझ जाती रही। ४४ तुम राम से साँठ-गाँठ कर आये हो। वहीं जाओ। वहीं तुम्हारा निर्वाह होगा, वहीं सम्मान पाओगे।" ४५

राम के बाण से रावण के मुकुट का गिरना और मन्दोदरी द्वारा समझाना

पहाड़ की ऊँची चोटी पर श्रेष्ठ मन्त्रियों के साथ रावण बैठा था। ४६ कत्थक-रस और भाव से युक्त मधुर स्वर में गा रहा था और तरह-तरह के तालों में मृदंग बज रहा था। ४७ पास में बैठी मन्दोदरी कपड़ों और गहनों से सजी बैठकर सुन्दर संगीत सुन रही है। ४८ स्थान मदिरा से भरे प्यालों

रावण घन मुकुटाली चपला मन्दोदरी-श्रवण-ताटङ्क ॥ ५० ॥
रावण काँ देखल रघुनन्दन भेल कोप मन भ्रुकुटी वङ्क ॥ ५१ ॥
दश किरीट अवदात छत्र महि खसल चलल रघुवर-कर तोर ॥ ५२ ॥
को धिक को धिक दशमुख लज्जित कहल बहल नहि प्रबल समीर ॥ ५३ ॥

॥ सोरठा ॥

शयन-भवन चलगाह, मुकुट छत्र खसलय विमन ॥ ५४ ॥
पुन कहि हँसि उठालाह, शिर कटलय बढ़इछ विभव ॥ ५५ ॥

॥ मिथिला सङ्गीतानुसारेण जयकरी छन्दः ॥

मन्दोदरि असगुन मन मानि । दैवक हतमति काँ नित हानि ॥ ५६ ॥
राम-अनादर-फल परिणाम । कुशल कतहु रह लङ्का गाम ॥ ५७ ॥
तखनहि सौँ मन बढ़ आतङ्क । खसल अकारण श्रुति-ताटङ्क ॥ ५८ ॥
रावण काँ कहलनि सति रीति । मर्य्यादा कत जतय अनीति ॥ ५९ ॥
हमरहु दुख देखी हित हानि । गेलहुँ वर्षा बाँधो पानि ॥ ६० ॥
राम विमुख सुख-सिन्धु सुखाय । बधिर अन्ध कह जन-समुदाय ॥ ६१ ॥

से सुशोभित हैं। भय दूर हो गया है और भारी घमंड जगा हुआ है। ४९ रावण के घने मुकुटों की श्रेणी और मन्दोदरी के कान के झुमके स्वर की गति पर डोल रहे हैं। ५० राम ने इस रूप में रावण को देखा। उनके मन में क्रोध जाग उठा और भौंहें टेढ़ी हो गयीं। ५१ राम ने एक बाण चलाया। रावण के दसों मुकुट और श्वेत छत्र धरती पर गिर पड़े। ५२ रावण लज्जित हो बोल उठा— "अरे, यह क्या है? ये कैसे गिरे? कोई तेज़ हवा तो नहीं चली है!" ५३ मुकुट और छत्र के गिरने से, जो अशकुन है, चिन्तित हो रावण सोने के कमरे में चला गया। ५४ फिर हँसकर बोल उठा— "अरे, चिन्ता की क्या बात है? सर कटने से तो मेरी सम्पत्ति बढ़ती ही है।" ५५ मन्दोदरी इसे अशकुन समझकर चिन्ता करने लगी— 'जिसकी बुद्धि को दैव मार देता है उसका हमेशा अनभल होता रहता है। ५६ राम का अपमान करने का यह फल है। अब लंकापुरी में कुशल नहीं।' ५७ तभी से उसका मन आतंकित है जब से कान के गहने बिना कारण गिर पड़े थे। ५८ सती-साध्वी की रीति से मन्दोदरी ने रावण से कहा -- "जहाँ अन्याय होगा वहाँ प्रतिष्ठा नहीं बच सकती। ५९ मुझे भी दुख है। देखती हूँ, आपका अहित हो रहा है। कहावत है, वर्षा समाप्त हो जाने पर भी खेत में पानी बाँधकर रखना चाहिए, अर्थात् जो बीत गया सो बीत गया, अब आगे की चिन्ता कीजिए। ६० राम अप्रसन्न हो जाएँ तो सुख का समुद्र भी सूख जाएगा तथा लोग अन्धा और बहरा कहेंगे। ६१ आपने बिना किसी डर के अपने सगे भाई का

अपमानित सोदर निर्भीत। घर-विरोध नाशक पथ थीक ॥ ६२ ॥
अपने काँ अछि कोप प्रचण्ड। नीति कहथि से पाबथि दण्ड ॥ ६३ ॥

॥ सवैया छन्दः ॥

कहइत नीति लात सौँ मारल नेह न राखल सोदर भाय ॥ ६४ ॥
गेला विभीषण विश्वकर्म्म-सुत नलसौँ राम समुद्र बन्धाय ॥ ६५ ॥
हनूमान वानर से आयल लङ्का मे गेलि आगि लगाय ॥ ६६ ॥
प्राणनाथ निश्शङ्क वृथा छी बाढ़ल जाइछ विपति सदाय ॥ ६७ ॥

(रावण-वचन)

की करताह आबि लंका मे जनिकाँ वानर भालु सहाय ॥ ६८ ॥
प्रेयसि शुनु चिन्ता मन जनु करु कुम्भकर्ण सन हमरा भाय ॥ ६९ ॥
जगइत छथि एको नहि बचता सभ कपिदलकेँ ज थनि खाय ॥ ७० ॥
जिवइत पकड़ब दुनू भाइ काँ तखन तमाशा देखब जाय ॥ ७१ ॥

(मन्दोदरी-वचन)

देखल तमाशा लङ्का जरइत अक्षय बेरि नहि भेलहुँ सहाय ॥ ७२ ॥
ओ परमेश्वर थिकथि निरञ्जन माया-मानुष देह बनाय ॥ ७३ ॥
अनुज न तनुज न अपन सुतनु नहि सेना रक्षा करति कि हाय ॥ ७४ ॥
लौकिक उपलक्षणक मेल क्षण टिटही टेकल पर्व्वत जाय ॥ ७५ ॥

अपमान किया। घर में झगड़ा होना नाश का रास्ता है। ६२ आपका प्रचड क्रोध है। जो उचित बात कहता वह सज़ा पाता है। ६३ आपने नेक सलाह देते सगे भाई को लात मारा, स्नेह भुला दिया। ६४ विभीषण चले गये। विश्वकर्मा के पुत्र नल से राम ने समुद्र में बाँध बनवाया। ६५ हनुमान बन्दर आया और लंका में आग लगा गया। ६६ हे प्राणनाथ, आप निश्चिन्त क्यों हैं? विपत्ति रोज़ बढ़ती जा रही है।" ६७ रावण ने कहा— "जिनके केवल बन्दर और भालू मददगार हैं वे लंका में आकर मेरा क्या कर लेंगे? ६८ हे प्रिये, तुम मन में चिन्ता मत करो। मेरे कुम्भकर्ण-जैसा भाई है। ६९ उसे जागने दो। एक भी नहीं बचेगा। वह सभी बन्दरों को खा जाएगा। ७० राम और लक्ष्मण दोनों भाइयों को ज़िन्दा ही पकड़ लूँगा, तब तमाशा देखना।" ७१ फिर मन्दोदरी ने कहा— "जब लंका जल रही थी, तब तमाशा देख लिया। जब अक्षयकुमार का वक़्त आया, तब तमाशा देख लिया। आप तो एक बार भी मददगार नहीं हुए। ७२ राम निर्गुण परमेश्वर हैं और मानव के रूप में अवतार लिया है। ७३ न बेटा आपको बचा सकेगा, न भाई, न अपनी पत्नी, और न सेना। ७४ इस समय लोगों में प्रचलित यह कहावत याद आती है कि टिटिहरी पक्षी टाँगें उठाकर पर्वत को

॥ सोरठा ॥

करइछ सभ कृति काल, कहल बहुत मन्दोदरी ॥ ७६ ॥
मानल नहि दशभाल, चिन्तहिँ बितलि विभावरी ॥ ७७ ॥

॥ जयकरी छन्द ॥

इत प्रातहि जागल रघुवीर । जय जय ध्वनि कर कपि रणधीर ॥ ७८ ॥
आज्ञा देल जाय रघुनाथ । आनथि बाँधि बेरि दशमाथ ॥ ७९ ॥
सानुज राम विभीषण नाम । सह सुग्रीव सभा एकठाम ॥ ८० ॥
भेल विचार करक की आज । अयलहुँ चढ़ि दशकण्ठ-समाज ॥ ८१ ॥
कहल प्रसन्न प्रथम श्रीराम । थिक कर्त्तव्य प्रथम विधि साम ॥ ८२ ॥
दूत एक रावण तट जाय । रावण काँ कह नीति बुझाय ॥ ८३ ॥
जौँ मानथि से भल मे हारि । तौँ को हेतु भयङ्कर मारि ॥ ८४ ॥
सभ अनुमति सभ कह तट जाय । टहल करब प्रभु रहब सहाय ॥ ८५ ॥
कपि-कुल बहुत चित्त उत्साह । जायब हमहिँ नाथ कहताह ॥ ८६ ॥
ककरो मन नहि ततय मलान । प्रभु प्रताप विजयक अभिमान ॥ ८७ ॥

टेकता है।" ७५ इस प्रकार मन्दोदरी ने समझाया, पर सब कुछ काल ही करता है, इसलिए रावण ने कुछ नहीं सुना। चिन्ता में ही वह रात बीत गयी। ७६-७७

अंगद का दूत बनकर रावण के पास जाना और बातचीत करना

इधर सबेरे ही राम जागे। वीर कपिगण जय-जयकार करने लगे। ७८ और कहने लगे— "हे रघुनाथ, आज्ञा दीजिए तो दुश्मन रावण को बाँधकर ले आवें।" ७९ राम, लक्ष्मण, विभीषण और सुग्रीव चारों सभा लगाकर एक जगह बैठे। ८० यह विचार होने लगा कि रावण के पास तक चढ़ आये; अब आगे क्या करना चाहिए? ८१ सबसे पहले प्रसन्न चित्त से राम ने कहा— "पहला काम साम (मेल) का उपाय करना है। ८२ रावण के पास एक दूत भेजा जाय। वह रावण को समझाएगा कि क्या न्यायोचित है। ८३ यदि समझाने पर वह कायल हो जाय तो भयानक युद्ध करना निरर्थक है।" ८४ इस बात से सभी सहम गये। सब कहने लगे— "मैं रावण के पास जाऊँगा और इस काम में आपका सहायक बनूँगा।" ८५ कपियों के मन में बड़ा उत्साह था। हर कोई सोचता था— 'प्रभु की आज्ञा होगी, मैं ही जाऊँगा।' ८६ वहाँ किसी का मन उदास नहीं था। राम के प्रताप से सबों के हृदय में विजयी होने का अभिमान था। ८७ तब राम ने कहा— "शत्रु

॥ सोरठा ॥

तखन कहल रघुराज, लङ्का जयबा योग्य छथि ॥ ८८ ॥
बालि तनय युवराज, रिपु-भङ्ग अङ्गद बली ॥ ८९ ॥
बद्धाञ्जलि युवराज, उत्साही शुनितहिँ कहल ॥ ९० ॥
स्वयंसिद्ध प्रभु काज, टहल कहल कर्त्तव्य विधि ॥ ९१ ॥
पुन कहलनि रघुराज, परम चतुर युवराज अहँ ॥ ९२ ॥
जे भल जानब काज, सिद्धि करब अरि जीति रण ॥ ९३ ॥
कयल मुदित प्रस्थान, कयल प्रदक्षिण राम-पद ॥ ९४ ॥
सानुकूल भगवान, तारासुत विस्तार बल ॥ ९५ ॥
देखल राक्षस-लोक, पुन पुर अबइछ एक कपि ॥ ९६ ॥
केओ रोक नहि टोक, चौँकि पड़ायल विकल-मन ॥ ९७ ॥

॥ मन्दाक्रान्ता छन्द ॥

की रे की रे कह कि झट दै मूह कीयै सुखेलौ ॥ ९८ ॥
वीरे वीरे बहुत जन छी त्रास की हेतु भेलौ ॥ ९९ ॥
हाँ हौ हाँ हौ विपति बड़ छौ काल लङ्का समैलौ ॥ १०० ॥
लङ्काध्वंसी कपिक सदृशे दोसरो फेरि ऐलौ ॥ १०१ ॥

की सेना में भगदड़ मचानेवाले वालिपुत्र युवराज अंगद ही लंका जाने योग्य हैं।" ८८-८९ सुनते ही उत्साह से भरे युवराज अंगद ने हाथ जोड़कर कहा— ९० "आपका काम तो स्वयं सिद्ध होता है। फिर मुझे जो यह काम करने का भार दिया सो केवल व्यवहारार्थ।" ९१ फिर राम ने कहा— "हे युवराज अंगद, आप बड़े होशियार हैं। ९२ लड़ाई में शत्रु को पछाड़कर जैसा अच्छा समझिएगा वैसा कीजिएगा।" ९३ आज्ञा पाकर अतुल बलवान तारासुत अंगद ने राम के चरणों की प्रदक्षिणा करके खुशी से प्रस्थान किया। भगवान राम उन पर प्रसन्न थे। ९४-९५ राक्षसों ने देखा कि एक बन्दर फिर नगर में आ रहा है। ९६ उसकी कहीं किसी ने रोक-टोक नहीं की। हर कोई देखते ही चौंककर व्याकुल हो भाग गया। ९७ भागते देख और ने पूछा— "अरे, बात क्या है? जल्द कहो। चेहरा क्यों सूख गया है? ९८ हम बहुत-सारे बहादुर जुटे हुए हैं। फिर इस तरह आतंकित क्यों हो?" ९९ उसने उत्तर दिया— "हाँ जी, हाँ जी, भारी आफ़त आ पड़ी। लंका में काल घुस आया। १०० लंका को उजाड़नेवाले उस बन्दर-जैसा ही दूसरा बन्दर फिर आ गया है।" १०१ लंकापुरी में भारी

॥ जयकरी छन्द ॥

लंका नगर कोलाहल ढेर। पुर-दाहक कपि आयल फेर॥ १०२॥
के कर भानस खायत भात। हृदय काँप जनु पीपर-पात॥ १०३॥
घर घर सभ जनि कह हिय हारि। भल नहि भावि भयंकर मारि॥ १०४॥
एकओ गोटय जनु बाहर जाह। अछि संप्राप्त समय अधलाह॥ १०५॥
रावण काँ कह सभ जन जाय। कृत सभ तनिके करथु उपाय॥ १०६॥
प्रलय करत दौड़त कपि सर्व्व। व्यर्थ करथि घर रावण गर्व्व॥ १०७॥
को घर छथि रावण बहराथु। अपनहिँ राम-शरण मे जाथु॥ १०८॥
घर रहलेँ न सिद्धि हो काज। झपटल बगड़ा ऊपर बाज॥ १०९॥
करथु सन्धि जौँ जन-भल चाह। विग्रह सौँ नहि अछि निर्व्वाह॥ ११०॥
धर्म्ममूर्त्ति रावण-छोट-भाय। तनिकहु राम लेल अपनाय॥ १११॥
रावण निकट कहल जन जाय। रावण देखल आँखि उठाय॥ ११२॥

॥ शार्दूलविक्रीड़ित ॥

लङ्का मे कपि एक आयल बली, निश्शङ्कता को कहू॥ ११३॥
की ओ फेरि अनर्थ जारत पुरी, से वृत्त बूझू अहूँ॥ ११४॥

शोर मच गया कि लंका को जलानेवाला बन्दर फिर आ गया। १०२ कौन रसोई करता और कौन भात खाता। सबका कलेजा पीपल के पत्ते की तरह काँपने लगा। १०३ घर-घर में औरतें ढाढ़स खोकर कहने लगीं— "अब कल्याण नहीं है। भयानक लड़ाई होनेवाली है। १०४ कोई भी घर से मत निकलो। बुरे दिन आ गये हैं।" १०५ फिर सभी लोग रावण से कहते— यह सब रावण का किया हुआ है। वे ही अब इससे त्राण का उपाय करें। १०६ ये सारे बन्दर दौड़ते आयेंगे तो प्रलय मचा देंगे। रावण अपने घर में बेकार घमंड करते हैं। १०७ रावण घर में घुसे क्यों हैं? वे बाहर आवें। स्वयं राम की शरण में जायें। १०८ अब घर में घुसे रहने से काम नहीं बनेगा। अब तो गौरैया के ऊपर बाज झपट्टा मार रहा है। १०९ यदि रावण लोगों की भलाई चाहते हैं तो सन्धि कर लें। लड़ाई से कल्याण नहीं होगा। ११० रावण के छोटे भाई विभीषण जो परम धार्मिक हैं, उन्हें भी राम ने अपना लिया। १११ प्रजाजनों ने जाकर रावण से ये बातें कहीं। रावण ने नज़र उठाकर देखा। ११२ लोगों ने कहा— "एक बलवान कपि लंकापुरी में आया है। वह बड़ा ही निर्भय-निःशंक है। ११३ क्या वह फिर लंकापुरी जलाने का अनर्थ करेगा, यह खबर आपको भी रखनी चाहिए। ११४ नगर के लोगों को सोना, खाना-पीना और चलना-फिरना हराम हो गया है, हाय! और

निद्राहार-विहार-शून्य नगरी, हा कष्ट को की सहू ॥ ११५ ॥
आवैय कि सभा कहै किछु कथा, लङ्केश सज्जे रहू ॥ ११६ ॥

॥ चौपाइ ॥

स्मितमुख कहलनि रावण नीक । लय आनह कपि के ओ थीक ॥ ११७ ॥
एक कहयित दश दौड़ल धाय । अङ्गद काँ लय चलल बजाय ॥ ११८ ॥
हरिणाधिप गजराज-समाज । जेहन निशङ्क तेहन युवराज ॥ ११९ ॥
कह से कह कत चलल लेआय । रावण अछि कत दैह देखाय ॥ १२० ॥
शशि-रविकुल वर-वनिता-रत्न । छल हरि अनलक चोर प्रयत्न ॥ १२१ ॥
कालानल सन रघुपति-बाण । जे जरता गय शलभ समान ॥ १२२ ॥
देखि सभासद सभ भेल ठाढ़ । दशमुख-हृदय कोप बड़ बाढ़ ॥ १२३ ॥
देखल परस्पर से सभ रूप । सभा सकल जन कत छन चूप ॥ १२४ ॥
रावण पुछलनि परिचय नाम । ककर दूत की अछि मन काम ॥ १२५ ॥
देव - शत्रु - पुर मे की काज । त्रास-रहित कहु करु जनु लाज ॥ १२६ ॥

॥ वसन्ततिलका ॥

श्री रामचन्द्र-परमेशक दूत जानू ॥ १२७ ॥
लङ्का-निशाचर समस्तक काल मानू ॥ १२८ ॥

क्या-क्या तकलीफ़ झेलें। ११५ वह आ रहा है और दरबार में आकर कुछ बात कहेगा। इसलिए हे रावण, आप तैयार रहिये।" ११६ मुस्कराकर रावण ने कहा— "ठीक है, उस बन्दर को ले आओ। देखें, वह कौन है?" ११७ रावण ने एक से कहा तो दस व्यक्ति दौड़ पड़े और अगद को बुलाकर दरबार में ले गये। ११८ युवराज अंगद उसी तरह निःशंक थे, जिस तरह हाथी के सामने सिंह। ११९ अंगद ने कहा— "बताओ, मुझे कहाँ लिये जा रहे हो? मुझे दिखाओ, वह रावण कहाँ है; जो चन्द्रवंश और सूर्यवंश दोनों की श्रेष्ठ नारी सीता को चोरी से हरकर ले आया है; और जो प्रलयकाल की आग के समान राम के बाण से पतंग की तरह जलकर मरनेवाला है?" १२०-१२२ अंगद को देखते ही दरबार के सभी लोग खड़े हो गये। रावण क्रुद्ध हो उठा। १२३ दरबार के सभी लोग एक-दूसरे का चेहरा देखने लगे। कुछ देर सभी लोग गुम रह गये। १२४ तब रावण ने परिचय पूछा— "आप किनके दूत हैं और आपकी क्या कामना है? १२५ राक्षसपुरी में आपको क्या काम है? निर्भय होकर कहिए, लजाइए नहीं।" १२६ अंगद ने कहा— "मैं परमेश्वर रामचन्द्र का दूत हूँ। मुझे लंकावासी सारे राक्षसों का काल समझिए। १२७-१२८ जिनकी शूरता सर्वत्र विख्यात है,

बाली बली सकल जानल शौर्य्य से टा ॥ १२९ ॥
उद्दण्ड अङ्गद तनिक थिकौंह बेटा ॥ १३० ॥

॥ जयकरी छन्द ॥

एतय पठाओल अछि प्रभु राम । उचित प्रथम भूपति काँ साम ॥ १३१ ॥
विधि-प्रपौत्र शिव-द्विगुण सुभाल । अनुचित पथ चढ़लहुँ एहि काल ॥ १३२ ॥
जगदम्बा वन सौं हरि आनि । मोह-विवश नहि जानल हानि ॥ १३३ ॥
सीता काँ माता मन मानि । करू समर्प्पण रामक पानि ॥ १३४ ॥
कपि-दल आयल सागर-पार । रिपुदल - तूलराशि - अङ्गार ॥ १३५ ॥
पितो हमर छथि रामक सङ्ग । तनिक चरण मे प्रीति अभङ्ग ॥ १३६ ॥
जानि बूझि मन जनु अनठाउ । रामचरण मे माँथ लगाउ ॥ १३७ ॥
नव लङ्केश्वर अहँ काँ भाय । सुख सौं छथि प्रभु-दास कहाय ॥ १३८ ॥
हम देखल प्रभु-बाण-प्रताप । बाण प्राण-हृत हमरा बाप ॥ १३९ ॥
काल न जीति सकथि सङ्ग्राम । जानू परमेश्वर छथि राम ॥ १४० ॥
वचन हमर हित धरब न कान । तौं भावी जानू अछि आन ॥ १४१ ॥
हमर जनक काँ विश्व चिन्हार । के कर समर शूर व्यवहार ॥ १४२ ॥
स्मित मुख रावण बजलाह अहा । बड़ गुण-शालि बालि मुइलाह ॥ १४३ ॥

उन बलवान वालि का मैं पराक्रमी बेटा अंगद हूँ । १२९-१३० प्रभु राम ने मुझे यहाँ भेजा है । राजा को पहले साम (समझौते) का सहारा लेना उचित है । १३१ आप ब्रह्मा के प्रपौत्र हैं और पंचमुख शिव के दुगुने मस्तक वाले हैं, फिर भी आप सम्प्रति अनुचित रास्ते पर चले हैं । १३२ आप मोह में पड़कर जगज्जननी सीता को वन से हर लाये । इसका क्या कुपरिणाम होगा यह आपने नहीं सोचा ? १३३ आप सीता को माता समझकर राम के हाथ सौंप दीजिए । १३४ शत्रु की सेना को रुई की भाँति जलानेवाला अग्नि-रूपी कपि-सेना समुद्र पार कर चुकी है । १३५ मेरे चाचा सुग्रीव राम के साथ हैं । उन्हें राम के चरण में अटूट भक्ति है । १३६ समझ-बूझकर इस बात की उपेक्षा मत कीजिए । जाकर राम के चरण में माथा टेकिए । १३७ आपके भाई विभीषण लंका के नये राजा हुए हैं और वे राम का दास बनकर सुखपूर्वक वहाँ रहते हैं । १३८ मैंने राम के बाण की शक्ति देखी है । उस बाण ने मेरे पिता का भी प्राण-हरण कर दिया है । १३९ राम को लड़ाई में काल भी नहीं जीत सकता है । यह जान लीजिए कि राम मानव नहीं, परमेश्वर हैं । १४० यदि मेरी नेक सलाह को आप न सुनेंगे तो जान लीजिए कि कुछ और ही भावी है । १४१ मेरे पिता को सारी दुनिया जानती है । उनसे लड़ाई में मुक़ाबला कौन कर सकता है ?" १४२ रावण मुस्कराकर बोला— "अहा ! वालि मर गये । वे बड़े गुणवान थे । १४३ अब वानरों में

बानर मे नहि रहले शूर। छल छथि समर-कला-परिपूर ॥ १४४ ॥
बिलटल घर तनिके तोँ पूत। अयला बनल तपस्वी-दूत ॥ १४५ ॥
ओ अछि कतय एतय जे आय। लङ्का मे गेल आगि लगाय ॥ १४६ ॥
मारल गेल न दूत-विचार। नीति सौँ भरल हमर व्यवहार ॥ १४७ ॥
यम कुबेर लड़ि लड़ि पछताथि। के नहि हमरा डरेँ नुकाथि ॥ १४८ ॥
वनिता-विरही गत-उत्साह। मानुष असुर समुख लड़ताह ॥ १४९ ॥
देखलनि लंका घूरि घर जाथु। चारू खूट माँगि कें खाथु ॥ १५० ॥
हमरा जिबइत हमर कनिष्ठ। लङ्केश्वर बनलाह बलिष्ठ ॥ १५१ ॥
ई अन्याय बालि कां भाय। रामक से छथि मुख्य सहाय ॥ १५२ ॥
किष्किन्धा भेल वीर-परोक्ष। सुग्रीवे छथि प्रबल महोक्ष ॥ १५३ ॥
देखलहि लंका मन भेल त्रास। त्यागल सभ जन जीवन-आश ॥ १५४ ॥
दूत बनल अङ्गद अयलाह। राजपुत्र-बल पाओल थाह ॥ १५५ ॥
मन मे बाढ़ल समुचित धन्धि। अभिप्राय की होये सन्धि ॥ १५६ ॥
बालिक तनय कतहु नहि चूक। हसि हसि कहलनि फूजल ऊक ॥ १५७ ॥
बानर मे करु काल प्रतीति। लज्जारहित सकथि जग जीति ॥ १५८ ॥
घर समटल अछि अहँइक आज। प्रेत-समान कर्म्म नहि लाज ॥ १५९ ॥

कोई शूर न रहा। वे लड़ाई की कला में पारंगत थे। १४४ उनका घर बरबाद हो गया। तुम उन्हीं का बेटा होकर इस तपस्वी राम का दूत बने आये हो? १४५ वे कहाँ रहे जो आकर लंका में आग लगा गये थे? १४६ दूत समझकर मैंने उसे मारा नहीं। मेरा काम नीति के अनुसार होता है। १४७ यम और कुबेर मुझसे लड़-लड़कर पछताते हैं। मेरे डर से कौन नहीं छुप जाते हैं? १४८ जो स्त्री के विरह से खिन्न और उत्साहहीन हो गये हैं, ऐसे मानव राम राक्षसों से क्या लड़ सकेंगे? १४९ यहाँ आये तो लंका को देखा, यही लाभ हुआ, अब घर लौट जायें। चारों दिशाओं में भीख माँगकर पेट पालें। १५० मेरे जीते ही मेरा छोटा भाई लंका का बलवान राजा बन बैठा। १५१ ये अन्यायी वालि के भाई सुग्रीव राम के मुख्य सहायक हैं। १५२ अब किष्किन्धा में कोई वीर नहीं रहा। इसलिए सुग्रीव ही महारथी कहलाते हैं। १५३ लंका को देखते ही सभी डर गये और जीने की आशा छोड़ बैठे। १५४ इसीलिए तो अंगद दूत बनकर आये हैं। इसी से क्षत्रियों की ताक़त का पर्दाफ़ास हो गया। १५५ इसीलिए तो यह विचार हुआ कि सन्धि करना ही उचित होगा; पर सन्धि केवल इच्छा से होनेवाली नहीं है।" १५६ वालि के पुत्र अंगद कहीं चूकनेवाले नहीं हैं। उन्होंने खुले हुए ऊक की तरह हँस-हंसकर कहा— १५७ "बन्दर को काल समझिए। एक लाज को छोड़ दें तो सर्वत्र जीत ही जीत है। १५८ क्या आपका अपना घर दुरुस्त

लङ्का कपि अयल एक गोट। सुग्रीवक से अनुचर छोट॥ १६०॥
राक्षस-जन सौँ बाँधल जानि। बनचर अनुचर गञ्जन मानि॥ १६१॥
शाखामृग बन रहल लुकाय। बिनु आज्ञा कयलक अन्याय॥ १६२॥
निजजन-गञ्जन समुचित पाय। देवतारि-पुर अनल लगाय॥ १६३॥
छोड़ि देलक अछि सेव्य-समाज। बहुत गलानि मानि मन आज॥ १६४॥
निज घर शूर समटु मन रोष। बलक थाह पाओल भरि रोष॥ १६५॥
शङ्कर किङ्कर कर पद-ध्यान। रामक तुलना के कर आन॥ १६६॥
लङ्केश्वर अहँ काँ लघु भाय। सुपथ चलनि उत्तम पद जाय॥ १६७॥
लङ्का उलटक तन-सामर्थ्य। प्रलय करब ई यश बुझि व्यर्थ॥ १६८॥
सन्धि समर विधि देखल नयन। महितल बिकल करब अहँ शयन॥ १६९॥

॥ शार्दूलविक्रीड़ित ॥

एके गोट समुद्र लाँघि अयला, लङ्कापुरी डाहि कें॥ १७०॥
से की बान्दर-देह जानल अहाँ, गेला किला ढाहि कें॥ १७१॥
जे अज्ञान कुबुद्धि युद्ध भिड़ला, निष्प्राण से से तहाँ॥ १७२॥
सीतान्वेषक दूत कर्म्म बुझले, छी छिः अहाँ ओ कहाँ॥ १७३॥

है? आप प्रेत के जैसा काम करते हैं, फिर भी लाज नहीं आती। १५९ लंका में जो एक कपि आया था, वह तो सुग्रीव का छोटा-सा नौकर था। १६० राक्षसों से बाँधा गया; यह जानकर उस वनचारी नौकर की बड़ी फटकार हुई। १६१ इससे वह लजाकर वन में छुपा हुआ है। उसने आज्ञा के बिना गड़बड़ काम किया। १६२ राक्षसों की नगरी में आग लगायी, इसके लिए उसे अपने लोगों ने उचित ही बहुत फटकारा। १६३ उसे मन में बड़ी ग्लानि हुई और उसने अपने प्रभु के पास जाना भी छोड़ दिया है। १६४ हे अपने घर में शूर कहलानेवाले रावण, मन से गुस्सा हटाइए। आपकी ताक़त की हद भलीभाँति मालूम हो गयी। १६५ भगवान शिव भी जिनके उपासक हो चरण का ध्यान करते हैं, उन राम की बराबरी और कौन कर सकता है? १६६ हे लंकापति रावण, आपके छोटे भाई विभीषण ने अच्छे रास्ते को पकड़कर ऊँचे पद को प्राप्त कर लिया है। १६७ शरीर में लंका को उलट देने की शक्ति है, प्रलय मचा सकता हूँ, ऐसा अभिमान करना बेकार है। १६८ अब सन्धि कर लें, इसी में सामरिक चतुरता दिखाई देती है। अन्यथा आप विकल हो धरती पर सो जाइएगा। १६९ एक ही कपि तो समुद्र पार कर लंका आया और लंका में आग लगा, उसके गढ़ को ध्वस्त कर चला गया। क्या उसे आपने मामूली बन्दर समझ लिया? १७०-१७१ जो-जो नासमझी से या दुर्बुद्धिवश लड़ने आये वे सभी मारे गये। १७२ सीता को खोजने आये हुए दूत की करनी तो आपने देख ही ली। क्या वही आप हैं? धिक्कार है

॥ सवैया छन्द ॥

(रावण-वचन)

अजगव-खण्डन जलनिधि-बन्धन ॥ १७४ ॥
व्याध बनल छल मारल बालि ॥ १७५ ॥
छल सड़ले ओ जड़ मातल मृग ॥ १७६ ॥
शुन रे बालिक पुत्र कुचालि ॥ १७७ ॥
हमर बीश भुज सतत रहित-रुज ॥ १७८ ॥
अनायास कैलाश उठाब ॥ १७९ ॥
तोँ युवराज काज कर दूतक ॥ १८० ॥
धिक मन मे नहि लज्जा आब ॥ १८१ ॥

(अङ्गद-वचन)

काँख दबाय लेल तोहरा जे ॥ १८२ ॥
सातो जलधिक तट तट जाय ॥ १८३ ॥
सन्ध्यार्चन जे कयल महाबल ॥ १८४ ॥
विद्यमान तनि सोदर भाय ॥ १८५ ॥
एक तीर मारल रघुनन्दन ॥ १८६ ॥
बालिक रहि न सकल तन प्रान ॥ १८७ ॥
शुन दशभाल गाल बारह को ॥ १८८ ॥
काल-विवश नहि तोहरा ज्ञान ॥ १८९ ॥

आपको।" १७३ रावण ने कहा— "माना कि राम ने शिव-धनुष को तोड़ा, पर वह तो सड़ा हुआ था; माना कि उसने समुद्र को बाँधा, पर वह तो जड़ पदार्थ था और उसने व्याध बनकर छल से वालि को जो मारा, उसमें क्या बड़ाई है? वह तो मदमत्त जंगली जानवर था। १७४-१७६ अरे वालि के कुकर्मी बेटे, सुन। १७७ मेरी ये बीस भुजाएँ, जिनमें कभी जख्म नहीं हुआ, बिना श्रम के कैलाश पर्वत को उठाने में समर्थ हैं। १७८-१७९ तुम युवराज होकर दूत का काम करते हो? धिक्कार है! तुम्हें लज्जा नहीं आती?" १८०-१८१ अंगद ने कहा— "जिन्होंने तुम्हें बगल में दबाए सातों समुद्र के किनारे जा-जाकर सन्ध्या-वन्दन किया, उन महाबली वालि का सगा भाई अभी मौजूद है। १८२-१८५ राम ने एक ही बाण चलाया कि ऐसे महाबली वालि के भी प्राण उड़ गये। १८६-१८७ हे रावण, सुनिए। आप नाहक डींग हाँकते हैं। आप काल के वश हो सुध-बुध खो बैठे हैं।" १८८-१८९ रावण ने कहा— "यमराज मेरे पाँव दबाते हैं। सूरज अपना धीमी-धीमी किरण फैलाते हैं, ताकि मुझे तेज

(रावण-वचन)

हमर पयर जाँतथि यमराजा, मन्द मन्द रवि किरण पसार ॥ १९० ॥
आठो लोकपाल भय-कम्पित, बद्धाञ्जलि भय वचन उचार ॥ १९१ ॥
देववधू पन्नगी आदि काँ, गर्भ स्रवित हो देखि तरुआरि ॥ १९२ ॥
के थिक राम कहाँ के लक्ष्मण, वचन रचन कर सभा विचारि ॥ १९३ ॥

(अङ्गद-वचन)

शुन दशकन्ध वन्ध्य-मति लोचन-अन्ध लेश नहि भूपति ज्ञान ॥ १९४ ॥
रे हतप्राण त्राण के करतौ, मृग-विशेष व्यर्थहि जनु फान ॥ १९५ ॥
श्रीरघुवर-कर-मुक्त विषम शर, खसत समर सभटा तोर भाल ॥ १९६ ॥
बाल वृद्ध मिलि गृद्ध काक-कुल, क्रीड़ाकुल सञ्चरत शृगाल ॥ १९७ ॥

॥ सोरठा ॥

(रावण-वचन)

रे शाखामृग मूढ़, कि करब दूत अवध्य थिक ॥ १९८ ॥
भूप-नीति बड़ गूढ़, अङ्ग-भङ्ग अङ्गद करब ॥ १९९ ॥

(अङ्गद-वचन)

सुयश कतय नहि सोर, रे रे राक्षस अधम तोँ ॥ २०० ॥
धिक धिक वनिता-चोर, शूर्पनखा-गति हम करब ॥ २०१ ॥

न लगे। १९० आठों दिगपाल मेरे डर से थर्राते हैं और हाथ जोड़कर ही विनती करते हैं। १९१ मेरी तलवार को देख देव, गन्धर्व, पन्नग आदि की स्त्रियों के गर्भ गिर जाते हैं। १९२ मेरे सामने वह राम कौन है और वह लक्ष्मण कहाँ का है? दरबार में जरा सोच-विचारकर बोला करो।" १९३ अंगद ने कहा— "हे दशमुख, सुनो। तुम्हारी बुद्धि बेकार हो गयी है। आँखें अन्धी हो गयी हैं। राजा को जो ज्ञान होना चाहिए वह कुछ भी तुम्हें नहीं है। १९४ रे गतायु रावण, अब तुमको कौन बचाएगा? हमें चौपाया जानवर समझकर नाहक छलाँग मत भरो। १९५ राम के हाथ से छूटे तीखे तीरों से तुम्हारे सभी मुंड मिट्टी पर गिर जाएँगे। १९६ बच्चे-बूढ़े गीधों, कौओं और सियारों के झुंड उन मुंडों से खेलेंगे।" १९७ रावण ने कहा— "अरे नादान बन्दर क्या करूँ? मजबूर हूँ; क्योंकि दूत अवध्य होता है। १९८ राजनीति बड़ी पेचीदी होती है। मैं तुम्हारा अंग-भंग कर दूँगा।" १९९ अंगद ने कहा— "राम का यश कहाँ नहीं मशहूर है। अरे राक्षस, तुम नीच हो। २०० स्त्री चुरानेवाले तुमको धिक्कार है। मैं तुम्हारा वही हाल करूँगा जो शूर्पणखा का हुआ।" २०१ रावण ने कहा— "सूर्य मेरा दरबान

॥ रोला छन्द ॥

(रावण-वचन)

प्रतीहार रवि हमर, अमरपति मालाकारक ॥ २०२ ॥
वरुण वायु गृह बाढ, माज्जनी मृत्य अगारक ॥ २०३ ॥
दिनकर धर कर छत्र, पाककर्त्ता नित हुतग्रह ॥ २०४ ॥
रक्षभक्ष्य की हमर, समर मे तुलना करबह ॥ २०५ ॥

॥ षट्पद छन्द ॥

(अङ्गद-वचन)

रे रे कुमति कठोर मनुष-गणना रघुनन्दन ॥ २०६ ॥
नदी कि गङ्गा होथि वृक्ष की छथि हरिचन्दन ॥ २०७ ॥
की ऐरावत करटि इन्द्र-वाजी की छथि हय ॥ २०८ ॥
स्त्री की रम्भा होथि मूढ़मति शुन रे निर्भय ॥ २०९ ॥
की कृतयुग युग मे थिकथि धन्वी मनसिज के गणत ॥ २१० ॥
जनि प्रताप त्रिभुवन प्रकट हनूमान कपि के कहत ॥ २११ ॥

॥ रोला छन्द ॥

(रावण-वचन)

कुल-कलङ्क-प्रद पुत्र कतहु जनु देथि विधाता ॥ २१२ ॥
बरु जन सहथु विषाद रहथु वन्ध्या मय माता ॥ २१३ ॥
धिक अङ्गद युवराज तपस्वी-दूत कहाबय ॥ २१४ ॥
जे मारल छल बालि तनिक जय सतत मनाबय ॥ २१५॥

है; इन्द्र मेरा माली है; वरुण और वायु दोनों मेरे घर बुहारते हैं और मेरे आँगन में झाड़ू लगाते हैं; सूर्य मेरा छाता धरता है और अग्नि मेरा रसोइया है। २०२-२०४ राक्षसों के आहार बन्दर होकर तुम मुझसे क्या मुक़ाबला कर सकोगे ?" २०५ अंगद ने कहा— "अरे रे वज्र मूर्ख, क्या तुम राम को सामान्य मानवों में गिनते हो ? २०६ गंगा क्या सामान्य नदी है ? चन्दन क्या सामान्य काठ है ? २०७ क्या ऐरावत की गणना साधारण हाथियों में होती है ? क्या इन्द्र का घोड़ा उच्चैःश्रवा साधारण घोड़ा है ? २०८ क्या रम्भा की गणना साधारण स्त्रियों में होती है ? अरे निडर मूर्ख, सुन। २०९ क्या सत्ययुग सामान्य युग है ? कामदेव को कौन साधारण तीरन्दाज मानेगा ?" २१० हनुमान के कथनानुसार प्रभु राम का प्रताप त्रिभुवन में प्रकट है। २११ रावण ने कहा— "भले ही पिता को विषाद रहे और माता को वन्ध्या होने का दुःख रहे, कुल में कलंक लगानेवाला बेटा विधाता किसी को भी न दे। २१२-२१३ धिक्कार है ! उस युवराज अंगद को जो तपस्वी का दूत कहलाता है और जो सदा उसकी जय-ध्वनि करता रहता है, जिसने उसके पिता

॥ सोरठा ॥

(अङ्गद-वचन)

उचित कयल रघुनाथ, जे बनपति देल दिव्य गति ॥ २१६ ॥
बचत कि तोहर माँथ, परबनिता-गण-चोर खल ॥ २१७ ॥

॥ षट्पद छन्द ॥

(रावण-अङ्गद-वचन)

बाँधल किदहुँ समुद्र, अमर-अरि-घर नहि जानल ॥ २१८ ॥
कत हम त्रिभुवन जयी, कतय मर्कट हठ ठानल ॥ २१९ ॥
हसि कह बालि-कुमार, सत्य-संकल्प राम-घन ॥ २२० ॥
बरिसत कर नाराच, बचत तोहर नहि हित जन ॥ २२१ ॥
एक बिभीषण कुशल-मति, लङ्कापति बनले रहत ॥ २२२ ॥
छिन्न भिन्न रावण सकुल, शोणित-मय सरिता बहत ॥ २२३ ॥

॥ सवैया छन्द ॥

(रावण-वचन)

बाँधल बाँध जलधि मे वानर ॥ २२४ ॥
नहि आश्चर्य विदित व्यवहार ॥ २२५ ॥
पर्व्वत सन कर उच्च मृत्तिका ॥ २२६ ॥
अति लघुतर हो कीट बिचार ॥ २२७ ॥
लङ्का दग्ध कयल कपि चञ्चल ॥ २२८ ॥
से जानक थिक अनल-स्वभाव ॥ २२९ ॥

वालि को मारा है। २१४-२१५ अंगद ने कहा— "राम ने उचित ही किया जो वनराज वालि की सद्गति दी। २१६ अरे परायी औरतों को चुरानेवाले दुष्ट, तुम्हारा सर क्या बचा रहेगा ?" २१७ रावण ने कहा— "समुद्र को तो बाँध लिया, पर यह नहीं जाना कि राक्षसों का घर कहाँ है। २१८ कहाँ मैं तीनों लोकों को जीतनेवाला और कहाँ इन बन्दरों का हठ।" २१९ वालि के पुत्र अंगद ने हँसकर कहा— "राम का संकल्प सदा सत्य होता है। २२० उनके हाथों से छूटे बाणों की वर्षा होगी और उसमें तुम्हारा कोई हितबन्धु नहीं बचेगा। २२१ लंका में सही समझवाला एक मात्र लंकापति विभीषण बचा रह जाएगा। २२२ रावण अपने कुल के लोगों-सहित छिन्न-भिन्न हो जाएगा और लहू की नदी बहने लगेगी।" २२३ रावण ने कहा— "बन्दरों ने समुद्र में बाँध बनाया, यह तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ऐसी बात प्रायः देखी जाती है। २२४-२२५ दीमकें, जो बहुत छोटा कीड़ा होती हैं, मिट्टी का पहाड़-सा टीला बना देती हैं। २२६-२२७ चंचल बन्दर ने लंका को जलाया, इसमें क्या बड़ाई है ? जलाना तो आग का स्वभाव ही

राम-प्रताप एखन धरि नहि किछु ॥ २३० ॥
हम देखल अछि होयत कि आब ॥ २३१ ॥

॥ शार्दूल-विक्रीड़ित छन्द ॥

(अङ्गद-वचन)

गेली सूर्प्पनखा नटी कपटिनी गोदा-तटी धर्कटी ॥ २३२ ॥
श्रीरामानुज-तीक्ष्ण-खड्ग लगलें ख्याता मही नक्कटी ॥ २३३ ॥
लै सेना खरदूषणादि लड़ला गेला कहाँ से कहू ॥ २३४ ॥
सीतावल्लभ सौँ विरोध कयलें से ठाम जैबे अहूँ ॥ २३५ ॥

॥ सवैया छन्द ॥

(रावण-वचन)

अपनहि हाथ माँथ दश काटल ॥ २३६ ॥
होम कयल नहि किछु मन त्रास ॥ २३७ ॥
अति प्रसन्न गौरीश देल वर ॥ २३८ ॥
नव नव शिर भेल मन भेल हास ॥ २३९ ॥
बाँचल विधिक लेख निज भाल मे ॥ २४० ॥
मरण मनुक्ख-हाथ सौँ पाब ॥ २४१ ॥
सकल-लोक-जित बिश भुज हमरा ॥ २४२ ॥
विधि अति वृद्ध ज्ञान नहि आब ॥ २४३ ॥

है। २२८-२२९ अभी तक मैंने राम का प्रताप कुछ भी नहीं देखा है, आगे क्या खाक देखूँगा ?" २३०-२३१ अंगद ने कहा— "नर्तकी-जैसी मायाविनी, धृष्टा शूर्पणखा गोदावरी के किनारे आयी २३२ और लक्ष्मण की तीखी तलवार से नाक कटने पर 'नकटी' नाम से संसार में प्रसिद्ध हुई। २३३ खर, दूषण आदि जो वीर सेना लेकर लड़ने आये, वे कहाँ गये यह तो बताओ ? २३४ सीतापति राम से रार करने पर आप भी वहीं चले जाइएगा।" २३५ रावण ने कहा— "मैंने अपने ही हाथों से दसों सिरों को काटा और आहुति दी, इसमें तनिक भी डर न हुआ। २३६-२३७ परम प्रसन्न होकर शिव ने वर दिया, जिससे फिर नये-नये सिर हो गये, मन प्रफुल्ल हो गया। २३८-२३९ ललाट में विधाता का लिखा स्वयं पढ़ा कि मेरी मृत्यु मनुष्य के हाथ से होगी। २४०-२४१ मैंने तीनों भुवनों को जीत लिया है, मेरे बीस भुजाएँ हैं, फिर मैं मनुष्य के हाथ कैसे मरूँगा ? विधाता बहुत बूढ़े हो गये, अतः उन्हें अब ज्ञान न रहा।" २४२-२४३ अंगद ने कहा— "कितनी स्त्रियाँ तो पति के मरने

(अङ्गद-वचन)

पतिहीना दोना अबला कत, करय निराकुल अनल-प्रवेश ॥ २४४ ॥
अथवा इन्द्रजाल-विज्ञानी, काटय अङ्ग दुःख नहि लेश ॥ २४५ ॥
शुन रावण आब न मुख लज्जा, निज-मुख निज-गुण वर्णन कयल ॥ २४६ ॥
अक्षयकुमार मारि पुर जारल, तनि कपिकाँ किय बाँधि न धयल ॥ २४७ ॥

॥ दोहा ॥

कार्त्तवीर्य्य बलि बालि को, नहि त्रिभुवन सौं भिन्न ॥ २४८ ॥
तनि प्रताप अनुभव अहंक, मन होइछ नहि खिन्न ॥ २४९ ॥

॥ सोरठा ॥

(रावण-वचन)

के थिक मानव राम, के लक्ष्मण हनुमान के ॥ २५० ॥
करत कठिन संग्राम, हम रावण सुरपति-जयी ॥ २५१ ॥

॥ सोरठा ॥

(अङ्गद-वचन)

लक्ष्मण-कृत धनु-रेख, लाँघि न सकला शून्य मे ॥ २५२ ॥
हनूमान-बल देख, मान-रहित लङ्का कयल ॥ २५३ ॥

॥ रूपमाला ॥

बालि-सुत रघुनाथ-चरणक दास अङ्गद नाम ॥ २५४ ॥
मारि तोहरा आज दशमुख करब चौपट गाम ॥ २५५ ॥

पर नि:शंक भाव से आग में जल मरती हैं। २४४ अथवा कितने जादूगर अपना अंग काट लेते हैं और उन्हें कोई पीड़ा नहीं होती। २४५ अरे रावण, सुनो। अपने मुँह से अपनी प्रशंसा करते तुम्हें लज्जा नहीं आती। २४६ यदि तुम्हारे ताक़त थी तो जो अक्षयकुमार का मारकर लंका को जला गया, उस कांप को बाँधकर रखा क्यों नहीं ? २४७ राजा कार्तवीर्य, बलि और वालि, क्या वे त्रिभुवन के बाहर के हैं ? इनके प्रताप को यादकर क्या तुम्हारे मन में ग्लानि नहीं होती है ?" २४८-२४९ रावण ने कहा— "मानव राम कौन होता है, लक्ष्मण कौन होता है और हनुमान कौन होता है जो मुझसे घनघोर लड़ाई करेगा ? मैं रावण हूँ, इन्द्र को भी जीतनेवाला रावण। २५०-२५१ अंगद ने कहा, लक्ष्मण ने धनुष से रेखा बना दी। सूने में उसे तुम पार न कर सके। २५२ तुमने हनुमान का भी बल देख ही लिया, जिन्होंने लंका का मान-मर्दन किया। २५३ मैं वालि का पुत्र और राम का सेवक अंगद आज तुम्हें मारकर तुम्हारे नगर को खत्म कर दूंगा। २५४-२५५ फिर सीता और मन्दोदरी दोनों

जनकजा मन्दोवरी काँ संग लेब लगाय ॥ २५६ ॥
देब हम पहुँचाय प्रभु-तट विजय-वाद्य बजाय ॥ २५७ ॥

॥ षट्पद छन्द ॥

(रावण-वचन)

धर धर कपि वाचाल काल बनि हिनका मारब ॥ २५८ ॥
के अछि त्रिभुवन शूर जतय हम रण मे हारब ॥ २५९ ॥
सकल सैन्य सन्नद्ध मार मवकट काँ धय धय ॥ २६० ॥
त्रास-रहित चल लड़य पराक्रम सङ्गर कय कय ॥ २६१ ॥
धर तपसी दुहु भाय काँ, मार विभीषण अनुज खल ॥ २६२ ॥
रावण आज्ञा देल हम, वार्ता दय दे सकल थल ॥ २६३ ॥

(अङ्गद वचन)

थिर रह रे दशभाल काल हम तोहर अयलहुँ ॥ २६४ ॥
जयबह कतय पड़ाय चोर काँ चीन्हल धयलहुँ ॥ २६५ ॥
पटकल महि भुजदण्ड चण्ड-ध्वनि दश दिश व्यापल ॥ २६६ ॥
खसल दशानन-मुकुट मही ओ महिधर काँपल ॥ २६७ ॥
चपल-कोप युवराज तहँ, बाज-जकाँ तहिपर टूटल ॥ २६८ ॥
प्रभु-तट फेकल मुकुट से, चारू जनु नृप-गुण लुटल ॥ २६९ ॥

को साथ लगा लूंगा और जीत के बाजे बजाते हुए प्रभु राम के पास पहुँचा दूंगा।" २५६-२५७ रावण ने कहा— "पकड़ो, पकडो इस बकी बन्दर को! काल बनकर मैं इसको मार डालूंगा। २५८ तीनों भुवन में ऐसा शूर कौन है जिससे युद्ध में मैं हार जाऊँ? २५९ सारी सेना तैयार होकर इस बन्दर को पकड़कर पीटो। २६० देखो तो किस प्रकार यह निडर हो पराक्रम करते लड़ने को उतावला है। २६१ दोनों भाई तपस्वी राम और लक्ष्मण को क़ैद कर लो। दुष्ट छोटे भाई विभीषण को मार डालो। २६२ मैं रावण यह हुक्म देता हूँ। सारी जगह इस बात का ऐलान कर दो।" २६३ अंगद ने कहा— "अरे रावण! ठहरो, ठहरो। मैं तुम्हारा काल आ गया। २६४ भागकर जाओगे कहाँ? चोर को पहचाना और पकड़ लिया।" २६५ इतना कहकर अंगद ने धरती पर अपनी बाँह पटक दी। प्रचंड ध्वनि दसों दिशाओं में छा गयी। २६६ रावण के चार मुकुट धरती पर गिर पड़े। पर्वत काँप उठे और धरती काँप उठी। २६७ क्रोध से चंचल युवराज अंगद बाज़ पक्षी की भाँति उन पर टूट पड़े। २६८ फिर उन चारों मुकुटों को उठाकर राम के पास फेंक दिया, मानों रावण के चारों राज-गुणों को लूट लिया। २६९ उधर कपियों की मंडली में

॥ दोहा ॥

उत कपिदल हलचल सकल, अरिपुर सौं की चारि ॥ २७० ॥
अबइत अछि ग्रहवेग सौं, रविमण्डल-अनुकारि ॥ २७१ ॥

॥ सोरठा ॥

हनूमान उड़ि धैल, रवि-उज्ज्वल मुकुटावली ॥ २७२ ॥
सभक स्वस्थ मन कैल, उल्कापातक दिवस भ्रम ॥ २७३ ॥
हसि कहलनि भगवान, अङ्गद-प्रेषित तक्कं हो ॥ २७४ ॥
करत एहन के आन, राक्षसेन्द्र-शिर-मुकुट हर ॥ २७५ ॥

॥ चौपाइ ॥

बड़ कौतुक प्रभु मुकुट-निहार । अङ्गद-धन्यवाद उच्चार ॥ २७६ ॥
उत दशकन्धर मौन विचार । देखि बालि-सुत-बल-विस्तार ॥ २७७ ॥
त्रस्त अस्त-बल जेहन बटेर । बलि-युवराज-बाज-बल हेर ॥ २७८ ॥
जाइत छी कहलनि युवराज । अछि कर्त्तव्य आगु किछु काज ॥ २७९ ॥
करता रघुनन्दन भगवान । रावण-मुण्डावलि बलिदान ॥ २८० ॥
कह रावण मर्कट काँ घेर । करत अनर्थ कि चलती बेर ॥ २८१ ॥
कह अङ्गद हसि वचन प्रमान । अनल-पटल जानथि हनुमान ॥ २८२ ॥
अङ्गद धरणी रोपल चरण । रावण-गण-मन-संशय-हरण ॥ २८३ ॥

खलबली मच गयी। अरे, शत्रु की नगरी से ये चारों कौन चीज़ें ग्रह की जैसी तेज़ी से आ रही हैं? ये तो सूर्यमंडल-से लगते हैं। २७०-२७१ हनुमान ने आकाश में उड़कर सूरज-जैसे चमकनेवाले उन चारों मुकुटों को पकड़ लिया। २७२ सबों के मन प्रसन्न हुए। लगता था कि दिन में ही उल्कापात हो रहा है। २७३ राम ने हँसकर कहा— "लगता है, अंगद ने फेंका है। २७४ राक्षसराज रावण के सिरों के मुकुटों को छीन लेना, यह काम दूसरा कौन कर सकता है?" २७५ बड़े कुतूहल से राम उन मुकुटों को देखते हैं और अंगद को बधाई देते हैं। २७६ उधर वालि के पुत्र अंगद की शक्ति को देख रावण गुम हो सोच में पड़ गया। २७७ अंगद रूपी बाज़ के बल को देख रावण निर्बल बटेर की तरह त्रस्त हो गया। २७८ फिर अंगद ने रावण से कहा— "अब जाता हूँ। आगे और बहुत-कुछ करना है। २७९ भगवान राम रावण के मुण्डों का बलिदान करेंगे।" २८० रावण बोल उठा— "घेरो, घेरो इस बन्दर को! क्या यह जाते वक़्त भी कुछ अनर्थ कर जाएगा?" २८१ अंगद हँसकर सच्ची बात बोले— "आग लगाना तो हनुमान ही जानते थे।" २८२ रावण के दलवालों के मन में कोई संशय न रहे —यह सोचकर अंगद ने धरती पर अपना पाँव रख दिया और बोले— "जो मेरे पाँव को धरती से ऊपर उठा देगा उसकी

महि सौँ जे वेत चरण उखारि। से विजयी हम मानब हारि॥ २८४॥
कय बल राक्षस सुभट उठाब। उठय न पद प्रभु-राम-प्रभाव॥ २८५॥
सभ कह मन मन अदभुत कोश। भेल विपक्ष बुझल जगदीश॥ २८६॥
रावण चरण धरय चललाह। अङ्गद देखितहिँ हसि उठलाह॥ २८७॥
कयलह रघुनन्दन सौँ वैर। ककर ककर नहि धरबह पैर॥ २८८॥
रावण लज्जित बैशला घूरि। अङ्गद लेल प्रतिज्ञा पूरि॥ २८९॥
अङ्गद चलल उठल दरबार। रावण गेला वनितागार॥ २९०॥
मन्दोदरी कहथि शुनु नाह। लङ्कावास कठिन निर्व्वाह॥ २९१॥
यद्यपि अहाँ कयल बड़ दोष। श्रीरघुनन्दन काँ नहि रोष॥ २९२॥
दूत पठाओल बालि-कुमार। अहँक कयल नहि किछु अपकार॥ २९३॥
आनल हठ नहि मानल नीति। धर्म्म विरोध पाप सौँ प्रीति॥ २९४॥
आगर एकसर नगरी जार। विधि जौँ वाम वाम संसार॥ २९५॥
अङ्गद-चरित देखल सभ नयन। सकल पराक्रम सम्प्रति शयन॥ २९६॥
कयल विसर्ज्जन सचिव-प्रधान। हितकर वचन धरय के कान॥ २९७॥

जीत होगी; मैं उससे हार मान जाऊँगा।" २८३-२८४ सुनते ही एक-एक कर सभी राक्षस योद्धाओं ने पूरी ताक़त लगाकर उनका पाँव उठाने की चेष्टा की, किन्तु राम की महिमा से पाँव उठा न सके। २८५ सभा मन ही मन कहते— 'यह तो अजीब बन्दर निकला। लगता है ईश्वर हम लोगों के प्रतिकूल हो गये हैं।' २८६ अन्त में रावण स्वयं उनका पाँव उठाने चला। देखते ही अंगद हँस पड़े। २८७ बोले— "अरे, तुमने राम से वैर किया तो अब किसका-किसका पाँव न पकड़ोगे।" २८८ रावण शरमा गया और लौटकर बैठ गया। अंगद ने बाज़ी मार ली। २८९ अंगद चले गये। दरबार उठ गया। रावण निवास चला गया। २९० वहाँ मन्दोदरी ने कहा— "हे नाथ, अब लंका में रहना कठिन हो गया है। २९१ यद्यपि आपने भारी अपराध किया है, फिर भी राम को क्रोध नहीं है। २९२ उन्होंने आपकी कोई बुराई नहीं की है। उन्होंने अंगद को दूत बनाकर भेजा। २९३ आप ज़िद पर अड़ गये। आपने नीति का त्याग किया; धर्म के विरुद्ध रहे और पाप से नाता जोड़ा। २९४ अकेला बन्दर सारी लंका जला गया। अगर विधाता प्रतिकूल हो जाता है तो सारी दुनिया प्रतिकूल हो जाती है। २९५ आपने अंगद की सारी कारामात अपनी आँखों से देखी। सम्प्रति आपके सभी पराक्रम सुप्त हो गये हैं। २९६ आपने प्रधानमन्त्री को निकाल बाहर कर दिया। हित की बात पर कौन कान देता है। २९७ राम का दूत एक बन्दर आया। वह बिना

॥ सवैया छन्द ॥

जनिक दूत वानर एक आयल, निर्भय सौँ लङ्का-पुर जारि ॥ २९८ ॥
से हाँस गेल कथ क की तनिकर, ककरा ककरा सौँ करि मारि ॥ २९९ ॥
कालरात्रि सीता काँ आनल, ई की जानल प्राकृत नारि ॥ ३०० ॥
काल-विवश लङ्केश्वर निश्चय, भावी विषय शकय के टारि ॥ ३०१ ॥

॥ रूपक दण्डक ॥

शुनु प्राणेश सत्य मन मानू ॥ ३०२ ॥
जिबितहिँ छथि से बाली, बलशाली ॥ ३०३ ॥
सकल सभा काँ अङ्गद-बल-चय ॥ ३०४ ॥
अनुभव समर-प्रणाली, वागाली ॥ ३०५ ॥
जनिक विलोचन बसथि अनुक्षण ॥ ३०६ ॥
लहलह-रसना-बाली, कंकाली ॥ ३०७ ॥
लङ्कावास निराश, भेल मन ॥ ३०८ ॥
सुख सौँ बसथु शृगाली, काकाली ॥ ३०९ ॥

॥ जयकरी छन्द ॥

उत अङ्गद-मन हर्ष अपार। पहुँचल कुशल प्रभुक दरबार ॥ ३१० ॥
प्रभुक प्रदक्षिण कयल प्रणाम। अङ्गद राखल बालिक नाम ॥ ३११ ॥
राम पुछल कहु कहु युवराज। लङ्का जाय कयल की काज ॥ ३१२ ॥

किसी डर के लंका को जला हँसकर चला गया। उसका आप क्या बिगाड़ सके ? उसने किस-किससे युद्ध नहीं किया ? २९८-२९९ कालरात्रिस्वरूपा सीता को आप ले आये। क्या उनको आपने सामान्य नारी समझ लिया ? ३०० हे रावण, आप पर निश्चय काल आ गया है। जो भवितव्य होता है उसे कौन टाल सकता है ? ३०१ हे प्राणनाथ ! सच समझिए, वे बलवान् वालि जीते ही हैं (अपने पुत्र अंगद के रूप में)। ३०२-३०३ सारे दरबार को मालूम हो चुका है कि अंगद की कैसा ताक़त है, कैसा रणकौशल है और कैसा बोल है ? ३०४-३०५ इनकी आँखों में लहलहाती जीभ वाली भगवती कंकाली सदा निवास करती है। ३०६-३०७ लंका में चैन से रहने की आशा अब नहीं रही; अब सियार और कौए यहाँ सुख से रहेंगे।" ३०८-३०९

अंगद का लौटना; प्रभंजन का मारा जाना; राम-रावण का घमासान युद्ध

उधर अंगद बड़े प्रसन्न मन से कुशलपूर्वक राम के दरबार में लौट आये। ३१० प्रदक्षिणा करके राम को प्रणाम किया। अंगद ने अपने पिता की प्रतिष्ठा को क़ायम रखा। ३११ राम ने पूछा— "हे युवराज अंगद,

अङ्गद कहल दशानन-गर्व्व । प्रभुक प्रताप हरल हम सर्व्व ॥ ३१३ ॥
सन्धिक प्रिय नहि खल दशभाल । पयःपान निर्विष नहि व्याल ॥ ३१४ ॥
अबइछ रावण-सैन्य अपार । कयल जाय प्रभु समर-विचार ॥ ३१५ ॥
प्रभु प्रधान काँ देल निदेश । प्रातहिँ युद्ध करत लङ्केश ॥ ३१६ ॥
सावधान रहु कपि-दल राति । मायामय थिक राक्षस-जाति ॥ ३१७ ॥
सभ छल शयन प्रभुक बल पाय । जागल अङ्गद मात्र सहाय ॥ ३१८ ॥
नाम प्रभञ्जनि राक्षसि जाति । रावण-प्रेरित आइलि राति ॥ ३१९ ॥
से पापिनि काँ मुख्य विचार । सानुज रामक करब संहार ॥ ३२० ॥
कल कौशल जौँ सिद्ध उपाय । मूलच्छेदेँ वृक्ष सुखाय ॥ ३२१ ॥
देखलनि अङ्गद तकर स्वरूप । ग्रह-दुर्दशा आइलि चुप चूप ॥ ३२२ ॥
ललकारल नहि भेल पड़ाय । डाकिनि काँ नहि रहल उपाय ॥ ३२३ ॥
फनला अङ्गद धयलनि झोँट । लतिअओलेँ भेली लोटपोट ॥ ३२४ ॥
अति चीत्कार करय से लाग । शब्द शुनल कपि-दल भेल जाग ॥ ३२५ ॥
धर धर पकड़ पकड़ भेल सोर । जाय पड़ाय न राक्षस चोर ॥ ३२६ ॥
केओ भूधर केओ वृक्ष उखाड़ । मार मार लङ्कापुर-राड़ ॥ ३२७ ॥

कहिए। आपने लंका जाकर क्या-क्या काम किया ?" ३१२ अंगद ने कहा— "आपके प्रताप से मैंने रावण का सारा घमंड उतार दिया। ३१३ दुष्ट रावण सन्धि नहीं चाहता है। दूध पीने से साँप का ज़हर नहीं जाता। ३१४ रावण की अपार सेना आ रही है। अब लड़ाई का विचार किया जाय।" ३१५ राम ने सेनापति को हुक्म दिया— "रावण सुबह होते ही लड़ाई शुरू कर देगा। ३१६ हे कपियो, रात भर आप लोग सावधान रहिए। राक्षस मायावी जाति के होते हैं।" ३१७ राम के प्रताप के भरोसे सभी सैनिक सोये हुए थे, केवल अंगद रक्षा के लिए जगे थे। ३१८ उस रात रावण की भेजी प्रभंजनी नाम की एक राक्षसी आई। ३१९ उस पापिनी का खास इरादा राम और लक्ष्मण का वध करना था। ३२० यदि चतुरतापूर्वक यह प्रयास सिद्ध हो जाए तो मानों जड़ ही काट गयी, फिर पेड़ तो खुद सूख जाएगा। ३२१ अंगद ने उस राक्षसी को देख लिया; मानों चुपके से ग्रहों की बुरी दशा आ पहुँची हो। ३२२ फटकारने पर वह भागी नहीं। उस डायन को कोई रास्ता न मिला। ३२३ अंगद ने छलाँग मारकर उसके सिर के बाल पकड़ लिये। लात से पीटने लगे। वह धराशायी हो गयी। ३२४ ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगी। कपियों ने आवाज़ सुनी। सभी जाग गये। ३२५ 'पकड़ो-पकड़ो' का शोर मच गया ताकि वह चोर राक्षसी भाग न जाय। ३२६ कोई पहाड़ उखाड़ता तो कोई पेड़। सभी चिल्लाते— मारो, लंका के बदमाश को मारो! ३२७ जैसे प्रलयकालीन बादल गरजता है, उसी तरह तेज़ आवाज़

परिपूरित भेल कतय न शब्द । प्रलयकाल जनि गर्जय अब्द ॥ ३२८ ॥
दशवदनक मुह गेल सुखाय । मुइलि प्रभञ्जनि गञ्जन खाय ॥ ३२९ ॥
कह मन रावण हमरे भाय । बाट घाट सभ देल देखाय ॥ ३३० ॥
कपिदल मन किछु त्रास न पाव । पुर स्वाधीन जकाँ चल आव ॥ ३३१ ॥
हमरा बालि केँ बैरी भाय । पोसल पन्नग दूध पिआय ॥ ३३२ ॥
कपि चञ्चल-बल को करताह । अनल शलभ सन सब जरताह ॥ ३३३ ॥
गञ्जित मुइलि प्रभञ्जनि जाय । उचित न शत्रुक विजय उपाय ॥ ३३४ ॥
निज प्रधान काँ कहल सकोप । प्रथम करह बानर-बल लोप ॥ ३३५ ॥
शुनितहिँ चलल पटह देल चोट । कातर जीव न एको गोट ॥ ३३६ ॥
गोमुख भेरी बाज मृदङ्ग । पणवानक गोमुख भल रङ्ग ॥ ३३७ ॥
महिष ऊँट खर सिंह सवार । वाहन विविध चलह सञ्चार ॥ ३३८ ॥
शूल चाप तोमर तरुआरि । पाश यष्टि शक्तिक भल मारि ॥ ३३९ ॥
लङ्का सकल द्वार सौँ व्यूह । चलल बहुत उत्साही मूह ॥ ३४० ॥
एतय राम-अनुशासन पाय । कपि-दल चलल न रण पछुआय ॥ ३४१ ॥
केओ गिरि-शृङ्ग-शिखर कर धयल । तरु उखाड़ि केँ आयुध कयल ॥ ३४२ ॥

सर्वत्र व्याप्त हो गयी। ३२८ रावण का चित्त उदास हो गया। वह सोचने लगा कि प्रभंजनी राक्षसी फटकार खाकर मर गयी। ३२९ रावण मन-ही-मन कहता— "मेरे भाई विभीषण ने ही रास्ता बता दिया। ३३० कपियों को तनिक भी डर नहीं होता। वे बेधड़क नगर में घुसते आ रहे हैं जैसे स्वाधीन-स्वच्छन्द हो। ३३१ मुझे और बालि को भी अपना भाई ही दुश्मन हो गया। मानों हमने साँप को दूध पिलाकर पाला। ३३२ बन्दर तो स्वभावतः चंचल होते हैं, वे क्या ताक़त दिखाएँगे ? वे सभी उसी तरह जल जाएँगे जिस तरह आग में पतंगा। ३३३ प्रभंजनी वहाँ जाकर नाहक मारी गयी। शत्रु को जीतने का यह ठीक उपाय नहीं हुआ।" ३३४ ऐसा सोचकर रावण ने अपने प्रधान सेनापति से क्रोधपूर्वक कहा— "पहले वानरी सेना का संहार करो।" ३३५ सुनते ही राक्षसों की सेना चल पड़ी। डंके पर चोट पड़ी। एक भी सैनिक कायर हो रुके नहीं। ३३६ गोमुख, नगाड़ा, मृदंग, ढोल आदि भलीभाँति बजने लगे। ३३७ भैंसा, ऊँट, गधा, सिंह आदि विविध वाहनों पर चढ़-चढ़कर राक्षस-सैनिक वायुवेग से बढ़े। ३३८ बरछा, तीर-धनुष, भाला, तलवार, पाश, लाठी, साँग आदि अस्त्रों से घमासान लड़ाई हुई। ३३९ लंका के सभी द्वारों से सेनाएँ चलीं। उनमें हर व्यक्ति परम उत्साही था। ३४० इधर राम की आज्ञा पाकर वानरों की सेना चली जो युद्ध में कभी पिछड़ती नहीं। ३४१ किसी ने पहाड़ की चोटी को हाथ में ले लिया, किसी ने पेड़ को उखाड़कर उसे ही अपना अस्त्र बनाया। ३४२

दल सन्नद्ध सकल छल ठाढ़। वीरोत्साह बहुत मन बाढ़॥ ३४३॥
करब दशानन-सुभट संहार। मन मन कपिदल करथि विचार॥ ३४४॥
रोकल लंका चारू द्वारि। कपि-दल प्रबल मचल बड़ मारि॥ ३४५॥
कोटि कोटि यूथप एक बेरि। लंका नगर सगर लेल घेरि॥ ३४६॥
खन उड़ गगन मही धुरि आब। गर्ज तर्ज कपि चपल-स्वभाव॥ ३४७॥
अतिबल राम जयति जयवीर। तथा महाबल लक्ष्मण धीर॥ ३४८॥
राघव-पालित जय कपिराज। सिद्ध मन्त्र रण वानर बाज॥ ३४९॥

॥ षट्पद छन्द ॥

पवन-तनय युवराज, कुमुद नल नील महाबल॥ ३५०॥
शरभ केसरी द्विविद, तार वानर भट भल भल॥ ३५१॥
जाम्बवान दधिवक्त्र, मंन्द यूथप लंका काँ॥ ३५२॥
रोकल सगरो नगर, फानि बाढ़ल तंका काँ॥ ३५३॥
तरु पब्वत नख दन्त सौँ, राक्षस-बल कयलनि विकल॥ ३५४॥
युद्ध-हेतु सभद्वार सौँ, बहरायल क्रोधी सकल॥ ३५५॥

॥ चौपाइ ॥

भिन्दिपाल पट्टिश तरुआरि। शूल हाथ राक्षस कर मारि॥ ३५६॥
शोणित मांस पूर रण पंक। तदपि युगल दल बड़ निःशंक॥ ३५७॥

सैनिकों के सारे दल सज्जित हो तनात थे। सबों के मन में वीरोचित उत्साह लहरा रहा था। ३४३ कपि लोग मन में सोचते— आज राक्षस के बड़े-बड़े योद्धाओं को मार गिराऊँगा। ३४४ कपियों के दलों ने लंका के चारों द्वारों को रोक लिया। घमासान लड़ाई छिड़ गयी। ३४५ एक-एक बार में लाखों दलपतियों ने सारी लंकापुरी को घेर लिया। ३४६ चंचल स्वभाववाले कपि तुरत आकाश में उड़ जाते, तुरन्त धरती पर लौट आते और गर्जन-तर्जन करते। ३४७ वे लड़ाई के मैदान में इन सिद्ध मन्त्रों का नारा लगाते— परम बलवान राम की जय हो, रघुवीर की जय हो, महाबली धीर लक्ष्मण की जय हो, रामचन्द्र द्वारा संरक्षित कपिराज सुग्रीव की जय हो। ३४८-३४९ हनुमान, अंगद, कुमुद, नल, नील, शरभ, केसरी, द्विविद, तार, जाम्बवान, दधिवक्त्र, मैन्द —आदि सभी दलपति छलाँग मार-मारकर आगे बढ़े और आतंक में डूबी सारी लंका को घेर लिया। ३५०-३५३ कपियों ने पेड़, पहाड़, नाखून और दाँत के प्रहार से राक्षसों को व्याकुल कर दिया। ३५४ तब सभी राक्षस क्रुद्ध हो-होकर सभी द्वारों से निकल पड़े। ३५५ भिन्दिपाल (ढेलवाँस), पट्टिशर (भाला), तलवार, बरछा और शूल हाथों में लेकर राक्षस लड़ने लगे। ३५६ लहू और मांस से धरती कीचड़मयी हो गयी, तथापि दोनों दल निःशंक हो लड़ते रहे। ३५७ स्वर्ण-पर्वत के समान हाथियों, घोड़ों और रथों

काञ्चन-निभ हय गज रथ हाँकि। राक्षस-शूर कोश-दल ताकि ॥ ३५८ ॥
करय युद्ध हो दश दिश शोर। मत्त महाभट राक्षस घोर ॥ ३५९ ॥
कुपित कपीन्द्र दनुज-जय काज। राक्षस-चटक प्रकट कपि-बाज ॥ ३६० ॥
देव-अंश-सम्भव सब कोश। विद्यमान रघुवर जगदीश ॥ ३६१ ॥
समर अमर कपि दनुज विनाश। अंकुर-व्रीहि टिड़ी कर नाश ॥ ३६२ ॥
जय हो ततय जतय रह धर्म्म। दनुज-पराजय दशमुख-कर्म्म ॥ ३६३ ॥
चतुर्थांश सैन्यक भेल नाश। विचलित राक्षस-दल मन त्रास ॥ ३६४ ॥
मेघनाद भेल अन्तर्धान। ब्रह्म-दत्त वर मन अभिमान ॥ ३६५ ॥
गगन जाय अस्त्रक कर वृष्टि। नाना विधि अद्भुत रण-सृष्टि ॥ ३६६ ॥
वानर-सैन्यक चल नहि हाथ। विकल देख दल श्रीरघुनाथ ॥ ३६७ ॥
क्षण भरि छला महाप्रभु चूप। कोध कयल धय निज रूप ॥ ३६८ ॥
लक्ष्मण हमर अजय धनु देब। ब्रह्मास्त्रहिँ हम बदला लेब ॥ ३६९ ॥
तत्क्षण सभकाँ हम देब जारि। हमरा सौं के करता मारि ॥ ३७० ॥
शुनि घननाद गेल घुरि गेह। मन मानल समरक सन्देह ॥ ३७१ ॥
वानर-दल समर-क्षत-अङ्ग। ककरो छल नहि जीवक रङ्ग ॥ ३७२ ॥

पर सवार हो राक्षस योद्धा वानरों के दलों को खोजकर लड़ने लगे। दसों दिशाओं में कोलाहल होने लगा। ३५८-३५९ राक्षसों को जीतने के लिए कपिराज सुग्रीव क्रुद्ध हो उठे और राक्षस रूपी गौरैयों पर बाज़ की भाँति टूट पड़े। ३६० सभी वानर देवताओं के अंशावतार थे और राम संसार के ईश्वर थे। ३६१ लड़ाई में देवावतार कपि राक्षसों का संहार कर रहे थे जिस प्रकार टिड्डीदल फ़सल के अंकुरों का संहार करता है। ३६२ जहाँ धर्म रहता है वहीं जय होती है। रावण के कुकर्म के कारण राक्षसों की मृत्यु हो रही है। ३६३ जब राक्षसों की चौथाई सेना का अन्त हो गया तब डर से उनमें भगदड़ मच गयी। ३६४ फिर मेघनाद ग़ायब हो गया जिसे ब्रह्मा से मिले वर का घमंड था। ३६५ वह आसमान में जाकर अस्त्र बरसाने लगा। तरह-तरह के अजीब युद्ध हुए। ३६६ वानर सैनिकों के हाथों का चलना बन्द हो गया। सेना को इस हालत में देख राम घबरा गये। ३६७ क्षण भर तो महाप्रभु राम चुप हो देखते रहे, फिर क्रुद्ध होकर अपना रूप धारण किया। ३६८ बोले— "हे लक्ष्मण, मेरा 'अजय' नाम का धनुष दो ताकि इस ब्रह्मास्त्र का प्रतिकार किया जाय। ३६९ तुरन्त मैं सबों को जला दूँगा। मुझसे कौन युद्ध करेगा?" ३७० यह सुनकर मेघनाद लड़ाई के मैदान से लौटकर घर चला गया। उसे लड़ाई में जीत सन्दिग्ध जान पड़ी। ३७१ वानर सैनिकों के अंग लड़ते-लड़ते क्षत-विक्षत हो गये थे। लगता था कोई भी जी न सकेगा। ३७२ राम ने कहा— "हे हनुमान, सम्प्रति आपको छोड़

रघुनन्दन कह शुनु हनुमान। एखन प्रयास करत के आन ॥ ३७३ ॥
क्षीर-महोदधि सत्वर जाउ। द्रुहिणाचल औषधि लय आउ ॥ ३७४ ॥
अपन सकल दल विकल जिआउ। वीर-सुयश त्रिभुवन मे पाउ ॥ ३७५ ॥
शुनि हनुमान पवन-जव जाय। आनल ओ गिरि सकल उठाय ॥ ३७६ ॥
औषधि-बल बाँचल सभ कीश। पालक स्वयन्देव जगदीश ॥ ३७७ ॥
जत सौँ आनल नग हनुमान। राखल ततहि कहल भगवान ॥ ३७८ ॥
वानर-दल कर भैरव नाद। छुटल समर-श्रम भरण-विषाद ॥ ३७९ ॥
मन विस्मित शुनि लंकाधीश। कयलक कठिन काल-बल कीश ॥ ३८० ॥
विधि राघव-अरि ध्रुव निर्म्माय। वर्त्तमान देल नगर पठाय ॥ ३८१ ॥
हटि नहि रहब करब संग्राम। दूरि करब नहि रावण-नाम ॥ ३८२ ॥
मन्त्रि बन्धु यूथप जे शूर। करथु सकल जन आलस दूर ॥ ३८३ ॥
करथु युद्ध सभ मन उत्साह। हम नहि कयल ककर निर्व्वाह ॥ ३८४ ॥
हमरा कष्ट समय अछि आज। त्रासेँ धर रहला किछु व्याज ॥ ३८५ ॥
अरि सम तनिकाँ हम देब मारि। अपनहिँ हाथ धरब तरुआरि ॥ ३८६ ॥
त्रासेँ चलल समर सभ शूर। रण-पण्डित बल-कौशल-सुपूर ॥ ३८७ ॥

और कौन काम देगा ? ३७३ आप तुरन्त क्षीर-सागर जाइए और द्रुहिणाचल से बूटी ले आइए। ३७४ बीमार पड़े अपने सारे दल को जिलाइए और तीनों लोकों में वीर होने का यश पाइए।" ३७५ यह सुनकर हनुमान वायुवेग से वहाँ गये और उस सारे पर्वत को उठाकर ले आये। ३७६ उस बूटी के प्रभाव से सभी वानरों की प्राणरक्षा हुई। स्वयं भगवान राम उनके रक्षक थे। ३७७ फिर राम की आज्ञा के अनुसार हनुमान जहाँ से वह पर्वत उठा लाये थे वहाँ ले जाकर रख दिया। ३७८ कपिदल फिर भयावनी किलकार करने लगा। उनकी लड़ाई से होनेवाली सारी तकलीफ़ दूर हो गयी। ३७९ यह समाचार सुनकर लंकापति रावण अचम्भे में पड़ गया और बोला— 'काल के समान इस वानरी सेना ने बड़ी कठिनाई पैदा कर दी। ३८० मानों ब्रह्मा ने राम रूपी दुश्मन बनाकर सम्प्रति लंका में भेजा है। ३८१ मैं अपना रावण नाम बिना छोड़े और बिना हटे युद्ध करूँगा। मेरे जो-जो मन्त्री, बन्धु-बान्धव और दलपति बहादुर हैं वे सभी अब आलस्य छोड़ें। ३८२-३८३ सभी जोश के साथ लड़ाई करें। मैंने किसका पालन-पोषण नहीं किया है ? ३८४ आज मुझे वक्त पड़ा है तो वे कुछ बहाना बनाकर डर से घर घुस गये। ३८५ ऐसे लोगों को मैं दुश्मन की तरह मार दूँगा। अपने ही हाथ से तलवार उठाऊँगा।" ३८६ इतना सुनते ही रावण के सभी सैनिक, जो बल और कौशल दोनों से भरे रण-पंडित थे, डरकर रणभूमि की ओर चल पड़े। ३८७ 'अतिकाय' नाम का परम बलवान् सैनिक चला। सेनापति होकर 'प्रहस्त'

अतिबल चलल नाम अतिकाय । तथा प्रहस्त प्रधान कहाय ॥ ३८८ ॥
नाम महोदर औ महानाद । लड़य चलल रावण अह्लाद ॥ ३८९ ॥
नाम निकुम्भ देव-अरि नाम । वानर सङ्ग कयल सङ्ग्राम ॥ ३९० ॥
देवान्तक एक नाम कहाब । वीर नरान्तक नाम धराब ॥ ३९१ ॥
अगणित असुर कहब कत नाम । क्रुद्ध युद्ध कर जय मन-काम ॥ ३९२ ॥
वानर-दल मे गेल समाय । उद्यत युद्ध कहल नहि जाय ॥ ३९३ ॥
भिन्दीपाल भुशुण्डिक मारि । बाण परश्वध चल तरुआरि ॥ ३९४ ॥
नाना तरहक वयलय अस्त्र । पहिरि पहिरि रण लोहक वस्त्र ॥ ३९५ ॥
कपि-यूथप सङ्ग रण आघात । सहय तुरङ्ग तुरङ्गम-लात ॥ ३९६ ॥
पर्व्वताग्र तरुवर नख दन्त । एहि बल कपि कर राक्षस-अन्त ॥ ३९७ ॥
कत जन काँ दृढ़ मूका मार । नख सौं तनिकर उदर विदार ॥ ३९८ ॥
कत राक्षस काँ मारल राम । कत काँ कपि देल निर्ज्जर-धाम ॥ ३९९ ॥
कत राक्षस काँ अङ्गद मार । अगणित हति हनुमान प्रचार ॥ ४०० ॥
कत जन काँ लक्ष्मण कर नाश । समर जितल यूथप निस्त्रास ॥ ४०१ ॥
समर-जयी कपिराज-प्रताप । ठाढ़ महाप्रभु कर शरचाप ॥ ४०२ ॥

॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे लङ्काकाण्डे पञ्चमोऽध्यायः ॥

चला । ३८८ 'महोदर' और 'महानाद' नामक सैनिक रावण के हितार्थ लड़ने चले । ३८९ 'निकुम्भ' और 'देवारि' नामक सैनिकों ने वानरों के साथ युद्ध किया । ३९० एक सैनिक 'देवान्तक' नाम का था और एक 'नरान्तक' नाम का । ३९१ इस तरह अनगिनत राक्षस थे, कितने के नाम गिनाएँ ? सभी जोश के साथ विजय की कामना से युद्ध करने लगे । ३९२ वे बढ़ते-बढ़ते वानरों की सेना में घुस गये । ऐसी लड़ाई चली जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता है । ३९३ ढेलवाँस, तीर, लोप, तलवार और बरछे चलने लगे । ३९४ राक्षसों ने लोहे का कवच पहन-पहनकर तरह-तरह के अस्त्र चलाये । ३९५ वानरी सेना के दलपतियों के साथ मचे युद्ध में एक घोड़ा दूसरे घोड़े का लताड़ (चरण-प्रहार) खाने लगा । ३९६ पहाड़ की चोटियाँ, बड़े-बड़े पेड़, दाँत और नाखून इन्हीं अस्त्रों के सहारे कपिदल ने राक्षसों का संहार किया । ३९७ कितनों को कसकर मुक्का लगाया और नाखून से पेट फाड़ दिया । ३९८ कितने राक्षसों को राम ने मारा और कितनों को कपियों को स्वर्ग भेजा । ३९९ कितने ही राक्षसों को अंगद ने मारा । कितने ही को हनुमान ने मारा । ४०० कितनों का संहार लक्ष्मण ने किया । लड़ाई में जीत हुई । दलपतियों का डर जाता रहा । ४०१ कपिराज सुग्रीव के प्रताप से लड़ाई में विजयी होकर राम हाथ में तीर-धनुष लिये खड़े थे । ४०२

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला भाषा रामायण में लंकाकाण्ड का पाँचवाँ अध्याय समाप्त ॥

॥ अथ षष्ठोऽध्यायः ॥

॥ सोरठा ॥

जखन शुनल बिस-कान, समर शयित अतिकाय-गण ॥ १ ॥
दशमुख शोक-मलान, कोप-विवश हलचल पड़ल ॥ २ ॥

॥ चौपाइ ॥

मेघनाद लङ्का-रखबार । रावण कयल लड़य सञ्चार ॥ ३ ॥
विकट सुभट राक्षस लेल सङ्ग । चढ़ल दिव्य रथ कोप अभङ्ग ॥ ४ ॥
अस्त्र शस्त्र सभ लय लेल ताकि । प्रभु-सम्मुख रथ चलला हाँकि ॥ ५ ॥
आशीविष सन मारल बाण । कत जन कपिक छथित सन प्राण ॥ ६ ॥
सुग्रीवादिक यूथ-प्रधान । सभ रण शयन रहित भेल ज्ञान ॥ ७ ॥
कोप विभीषण देखलहिं बाढ़ । गदापाणि निर्भय रण ठाढ़ ॥ ८ ॥
कलकौशल सारथि सौं माँगि । मय-देत्त गमहिं चलाओल साँगि ॥ ९ ॥
देखि विभीषण-नाशिनि शक्ति । बध-अयोग्य हमरा मे भक्ति ॥ १० ॥
अभय देल रण मे रघुवार । लक्ष्मण आगु धनुष लय तोर ॥ ११ ॥

छठा अध्याय

रावण का राम से युद्ध करना; लक्ष्मण को शक्ति लगना

रावण ने यह समाचार सुना कि अतिकाय आदि सेनापति मारे गये । १ यह सुनकर वह शोक से म्लान हो गया । फिर जोश में आकर हलचल मचाने लगा । २ रावण ने लंका की रक्षा का भार मेघनाद को सौंपकर लड़ने के लिए प्रयाण किया । ३ वह बड़े-बड़े लड़ाकू राक्षसों को साथ ले अटूट जोश के साथ दिव्य रथ पर सवार हो गया । ४ खोज-खोजकर सारे अस्त्र-शस्त्र चुन लिये और रथ हाँककर राम के सामने पहुँच गया । ५ उसने साँप-जैसा तीर मारा, जिससे कई वानरों के प्राण जाने-जाने को हो गये । ६ सुग्रीव आदि जितने दलपति थे सभी रणभूमि में सो गये । सबों के होश जाते रहे । ७ विभीषण को हाथ में गदा लिये निर्भीक खड़ा देखते ही रावण गुस्से से भर गया और ८ चुपके से सारथी से वह शक्ति (साँग) हथियार माँग लिया जो उन्हें मय नामक राक्षस से मिला था । उन्होंने अवसर देख उस शक्ति को चला दिया । ९ विभीषण पर छोड़ी गयी उस शक्ति को देख राम ने सोचा कि विभीषण मेरे भक्त हैं, इसलिए इन्हें मृत्यु से बचाना चाहिए । १० ऐसा सोच राम ने उन्हें युद्ध में अभय का वरदान दे दिया । लक्ष्मण धनुष-बाण लिये आगे खड़े थे । ११ वह शक्ति लक्ष्मण के हृदय में जा लगी । वह ऐसी तेज

लक्ष्मण-हृदय लाग से साँगि। विषम तेहन शक्ति पानि के माँगि ॥ १२
मायाशक्ति जते संसार। सभहिक लक्ष्मण परमाधार ॥ १३
शेष महाप्रभु से अवतार। सहथि सकल धरणिक जे भार ॥ १४
कि करत ततय शक्ति-सङ्घात। जनि फण धरणि सिरिस-फुलपात ॥ १५
कर रण मानव-लीलाभाव। रावण-मन उत्साह बढ़ाव ॥ १६
लक्ष्मणकेँ मूछित मन जानि। चलब उठाय यहन मन मानि ॥ १७
कर सौँ बल सौँ जाय उठाब। जगदाधारक गरिम सुभाव ॥ १८
उठला नहि कत कयल प्रयास। गर्व उठाओल छल कैलास ॥ १९
तेहन अनर्थ देखि हनुमान। दौड़ला प्रबल जेहन पवमान ॥ २०
रावण काँ मारल तत जाय। एक मुक्का दृढ़ हृदय तकाय ॥ २१
लगइत अशनि-पतन प्रतिभसल। रोकि ठेघुन मुहभर से खसल ॥ २२
सभ मुख सभ लोचन सभ कान। शोणित बहल पड़ल अज्ञान ॥ २३
दशमुख घूर्णित-नयन अवाक। रथपर बैशल भयवश ताक ॥ २४ ॥

॥ सोरठा ॥

भुज भरि लेल उठाय, हनूमान सौमित्रि काँ ॥ २५ ॥
देल ततय पहुँचाय, जगन्नाथ रघुनाथ तट ॥ २६ ॥

थी कि उसके लगने पर किसी को पानी माँगने का भी होश न रहता। १२ संसार में जितनी भी माया शक्तियाँ हैं, लक्ष्मण उन सबों के मूल हैं। १३ वे उन शेषनाग के अवतार हैं जो सारी धरती का भार सहते हैं। १४ ऐसे लक्ष्मण को वह शक्ति क्या कर सकती है जिनके फन पर धरती का गिरना शिरीष के फूल के गिरने के बराबर है? १५ वे तो युद्ध में मानव की लीला दिखा रहे हैं और रावण के मन को उकसा रहे हैं। १६ रावण ने लक्ष्मण को मूर्च्छित समझकर मन में सोचा कि उठाकर ले जाऊँ। फिर जोर लगाकर हाथ से उठाने लगा, पर जगत के आधार शेषनाग के अवतार लक्ष्मण में असाधारण भारीपन स्वभावतः है। १७-१८ कितना भी प्रयास किया, पर लक्ष्मण को उठा न सका, जब कि उसके मन में कैलाश पर्वत उठाने का घमंड था। १९ ऐसा अनर्थ देख हनुमान वायुवेग से दौड़े। २० वहाँ जाकर रावण के हृदय में एक मुक्का लगाया। २१ उसे लगा जैसे बज्र गिर पड़ा हो। वह घुटने टेककर मुँह के बल धरती पर गिर गया। २२ दसों मुँहों और बीसों आँखों से लहू बहने लगा। वह बेहोश हो लेट गया। २३ उसकी आँखें घूमने लगीं। बोलती बन्द हो गयी। रथ पर लेटा, वह डर से निहारने लगा। २४ हनुमान ने लक्ष्मण को अपनी बाँहों में लेकर उठा लिया और वहाँ पहुँचा दिया जहाँ राम थे। २५-२६ वह शक्ति शेषावतार लक्ष्मण को छोड़ रावण

रावण रथपर जाय, बैसलि शक्ति अनन्त तजि ॥ २७ ॥
दशमुख संज्ञा-पाय, धयल शरासन कोपवश ॥ २८ ॥

॥ रूपमाला ॥

सँभरि रथपर कर-शरासन, चलल रावण क्रुद्ध ॥ २९ ॥
रामचन्द्रक निकट पहुँचल, करक निर्भय युद्ध ॥ ३० ॥
हनूमान अमान-बल, वरयान चढ़ि रघुवीर ॥ ३१ ॥
कयल धनु-टङ्कार जेहन, अशनि-धुनि गम्भीर ॥ ३२ ॥
कहल प्रभु गम्भीर वचनहिँ, रे दशानन चोर ॥ ३३ ॥
कतय जयबह एहि समरसौँ, निकट अन्तक तोर ॥ ३४ ॥
हनल जे राक्षस-जनालय, तोहर अनुचर लोक ॥ ३५ ॥
तेहन गति हम करब, सम्प्रति छुटत तोहर शोक ॥ ३६ ॥

॥ चौपाइ ॥

रामक वचन शुनल दशभाल । भ्रुकुटी कुटिल नयन सभ लाल ॥ ३७ ॥
पवन-तनय काँ शत्रु विचार । शर अनेक तनि काँ तन मार ॥ ३८ ॥
शर-व्रण-व्यथा वृथा मन मान । केशरि-नाद करथि हनुमान ॥ ३९ ॥
देखि शरजर्जर मारुति-अङ्ग । कालरुद्र सम श्रीप्रभु-रङ्ग ॥ ४० ॥
अश्वसहित रथ ध्वज रथवाह । धनुष शस्त्र सभ तन सन्नाह ॥ ४१ ॥

के रथ पर जा बैठी । २७ रावण को होश आया । फिर कुपित हो उसने तीर-धनुष उठाया । २८ सँभलकर तीर-धनुष लिये रथ पर सवार रावण क्रुद्ध हो चल पड़ा । २९ निडर हो लड़ने के लिए राम के पास पहुँचा । ३० असीम बलवान हनुमान को साथ ले राम अच्छे रथ पर सवार हुए । ३१ धनुष को छेड़कर ऐसा टंकार किया जैसे वज्र गिरने की गम्भीर ध्वनि हो । ३२ फिर राम ने गाढ़ी आवाज़ में कहा— 'अरे चोर रावण ! ३३ इस लड़ाई से उबरकर तुम कहाँ जाओगे ? तुम्हारी मौत पास आ चुकी है । ३४ लंका में जो तुम्हारे पीछे चलनेवाले राक्षस थे, उन सबों का मैंने अन्त कर दिया । ३५ अब तुम्हारा ऐसा हाल करूंगा कि तुम्हारा सारा कष्ट सदा के लिए दूर हो जाएगा ।" ३६ रावण ने राम की बात सुनी । सुनते ही उसकी भौंहें टेढ़ी और आँखें लाल हो गयीं । ३७ हनुमान को शत्रु समझकर रावण ने उनके शरीर पर अनेक तीर मारे । ३८ तीर के घावों की कोई परवाह न कर हनुमान सिंह-गर्जन करने लगे । ३९ हनुमान के शरीर को तीरों से क्षत-विक्षत देख राम मानों प्रलयकाल के रुद्र हो गये । ४० राम ने शर चलाकर रावण के घोड़ों-सहित रथ, ध्वजाएँ, सारथी, धनुष आदि अस्त्र, शरीर का कवच, छत्र, पताका, सबों को काट दिया । राम के बाण का आघात कौन सह सकता

छत्र पताका सभ देल काटि। रघुवर शरक सहय के साटि॥ ४२॥
रावण हृदय अशनि-शर मारि। भूधर उपर जेहन पाकारि॥ ४३॥
थर थर दशमुख रण मे काँप। कर सौँ ससरि ससरि खस चाप॥ ४४॥
रघुपति देखल रावण-रङ्ग। रविनिभ मुकुट शरेँ कय भङ्ग॥ ४५॥
रे रे दशमुख खल कृशप्राण। एखन प्रहार करब नहि बाण॥ ४६॥
घुरि केँ लङ्का लज्जित जाह। प्रातहिँ अबिहह जनु अगुताह॥ ४७॥
देखिहह हमर समर-बल प्रात। अहह रहह हनुमान सौँ कात॥ ४८॥
मुका तनिक लगतौ एक गोट। यमपुर जयबह कर्म्मक छोट॥ ४९॥
शुनि रावण लज्जित चललाह। विकल अपन बल पाओल थाह॥ ५०॥
लक्ष्मण मूर्छित धरणी-शयन। सकरुण देखल पङ्कजनयन॥ ५१॥
कत विलाप कय कय प्रभु कान। विकल सकल अङ्गद हनुमान॥ ५२॥
ततय विभीषण कहल उपाय। लङ्कादूत महाबल जाय॥ ५३॥
वैद्य सुषेण जनिक थिक नाम। तनिकाँ लय आनथि एहि ठाम॥ ५४॥
ओ औषधि कहता अनुकूल। लक्ष्मण काँ सञ्जीवन-मूल॥ ५५॥
प्रभु-आज्ञा मारुत-सुत जाय। आनल तनिकाँ गमाहँ उठाय॥ ५६॥

है? ४१-४२ राम ने रावण की छाती पर उसी तरह तीर मारा, जिस तरह इन्द्र पर्वत के ऊपर वज्र मारते हैं। ४३ लड़ाई में रावण थर-थर काँपने लगा। उसके हाथ से धनुष खिसक-खिसक कर गिर जाता। ४४ राम ने रावण का यह हाल देखा और उसके सूरज-से चमकीले मुकुट को बाण के प्रहार से तोड़ दिया। ४५ राम ने कहा— "अरे रे दुष्ट रावण, अब तुम्हारी जान थोड़ी सी रह गयी है। अभी मैं तुम पर तीर नहीं चलाऊँगा। ४६ अभी तुम लज्जित हो लंका जाओ। सुबह होते ही फिर आना। हड़बड़ी क्या है? ४७ कल देखोगे कि लड़ाई में मेरी ताक़त कैसी है? अरे, हनुमान से बचकर रहना। ४८ उनका एक ही मुक्का खाकर तुम अभागे यमलोक चले जाओगे।" ४९ यह सुनकर रावण लज्जित और खिन्न हो घर लौट गया और उसे अपनी ताक़त का हद मालूम हो गयी। ५०

संजीवनी लाने का प्रयास; कालनेमि की कथा

इधर राम ने करुण भाव से देखा कि लक्ष्मण धरती पर बेहोश पड़े हैं। ५१ राम बिलख-बिलखकर रोते हैं और अंगद, हनुमान आदि सभी घबराये हुए हैं। ५२ वहाँ विभीषण ने एक उपाय बताया— "हनुमान को दूत बनाकर लंका भेजिए। ५३ सुषेण नाम के जो वैद्य वहाँ रहते हैं, उन्हें यहाँ ले आवें। ५४ वे ही लक्ष्मण के लिए उपयुक्त दवा सजीवन-मूल बताएंगे।" ५५ राम की आज्ञा पाकर हनुमान गये और वैद्य सुषेण को धीरे

कहल वैद्य औषधिक ठेकान। रातिहिँ भरि मे जौँ एत आन ॥ ५७ ॥
तौँ बच लक्ष्मण वीरक प्राण। प्रात होइत होयत नहि त्राण ॥ ५८ ॥
के जायत लायत एत राति। सह सह करइछ राक्षस जाति ॥ ५९ ॥

॥ सोरठा ॥

नल त्रिरात्र घूरि आब, मैन्द द्विविद दुइ राति मे ॥ ६० ॥
से सुग्रीव-प्रभाव, एकराति मे नील घुर ॥ ६१ ॥
चारि पहर मे आब, जाय द्रुहिणगिरि बालिसुत ॥ ६२ ॥
अड़ड़ा लागल नाव, राम विकल सकरुण कहल ॥ ६३ ॥

॥ चौपाइ ॥

समर-शूर रुद्रक अवतार। हनुमानक मुख राम निहार ॥ ६४ ॥
महावीर द्रुहिणाचल जाउ। मृतावस्थ सौमित्रि जिआउ ॥ ६५ ॥
कह हनुमान यथाज्ञा पाय। लायब पर्व्वत त्वरित उठाय ॥ ६६ ॥
सञ्जीवन औषधि अछि हाथ। चिन्ता परिहरु श्रीरघुनाथ ॥ ६७ ॥
जाइत अबइत हयत न देरि। आनब सञ्जीवन काँ फेरि ॥ ६८ ॥
सकरुण हृदय कयल नहि जाय। कपि-दल सकल बिकल अकुलाय ॥ ६९ ॥
रावण काँ वार्त्ता भेल कान। औषध काज चलल हनुमान ॥ ७० ॥
कालनेमि-गृह आतुर जाय। चिन्तातुर रावण असहाय ॥ ७१ ॥

से उठा लाये। ५६ वैद्य ने संजीवनी दवा का ठिकाना बताया और कहा कि यदि कोई रात भर में ही वह दवा यहाँ ला दे तो वीर लक्ष्मण के प्राण बच सकते हैं, नहीं तो सुबह होते ही इन्हें कोई बचा न सकेगा ? ५७-५८ राम ने बिलखते हुए कहा— "इतनी रात में कौन जाकर ले आएगा ? क़दम-क़दम पर राक्षसों की भरमार है। नल तीन रातों में द्रुहिणाचल जा, लौट सकते हैं। मैन्द और द्विविद दो रातों में। सुग्रीव भी दो रातों में लौटने की शक्ति रखते हैं। नील एक रात में लौट सकते हैं। वालि के पुत्र अंगद चार पहरों में लौट सकते हैं। नाव औघट में अटक गयी।" ५९-६३ इतना कहकर राम लड़ने में बहादुर रुद्रावतार हनुमान का मुँह देखने लगे और बोले— ६४ "हे महावीर, आप ही द्रुहिणाचल जाइये और मरणासन्न लक्ष्मण को जिआइये।" ६५ हनुमान ने कहा— "यदि आज्ञा हो तो मैं तुरत उस पर्वत को उठाकर ला दूँ। ६६ हे राम, आप चिन्ता मत कीजिए। मानों संजीवनी बूटी मेरे हाथ में है। ६७ मुझे जाते और आते देर न लगेगी। मैं संजीवनी लेकर लौटूँगा। ६८ हे राम, आप हृदय में करुण भाव मत आने दीजिए। आपको सकरुण देख सारे कपिगण आकुल-व्याकुल हो उठेंगे।" ६९ उधर रावण को खबर हो गयी कि हनुमान दवा लाने चले। ७० रावण चिन्ता से व्याकुल हो

बैसला अर्घ्यादिक सन्मान। से कयलनि जे उचित विधान ॥ ७२ ॥
अति आश्चर्य्य कथा ई लाग। राजागमन सुभवनक भाग ॥ ७३ ॥
कालनेमि कह कहु वृत्तान्त। नृप भय को अयलहुँ एकान्त ॥ ७४ ॥
के थिक से कहु करु जनु ओझ। आनन-कमल मलिन भेल आज ॥ ७५ ॥
रावण कहल वचन छल-हीन। हमरहु सङ्कट काल-अधीन ॥ ७६ ॥
मय-देल साँगि चलाओल आज। लक्ष्मण मूछित से भल काज ॥ ७७ ॥
सञ्जीवन आनय हनुमान। अति-जव कयल वीर प्रस्थान ॥ ७८ ॥
कपट मुनिक पथ वेष बनाउ। मारुत-नन्दन काँ अटकाउ ॥ ७९ ॥
प्रातहिँ मरता लक्ष्मण नाश। विजय हमर हेयत सङ्ग्राम ॥ ८० ॥
रावण-वचन शुनल से कान। के रोकत चलइत हनुमान ॥ ८१ ॥
कालनेमि कह आज्ञा करब। मारीचक जकाँ तकइत मरब ॥ ८२ ॥
हत भेल पुत्र पौत्र प्रिय लोक। अपनेँ काँ मन नहि हो शोक ॥ ८३ ॥
हमर असुर-कुल-वीर विनाश। अपनेँ काँ अछि जिवइक आश ॥ ८४ ॥
कि करब सीता कि करब राज। डर सौँ समुचित जन के बाज ॥ ८५ ॥
मुनिगण सङ्ग बसू वन जाय। संयम नियम करू समुदाय ॥ ८६ ॥

अकेले कालनेमि के घर गया। ७१ रावण वहाँ बैठा। कालनेमि ने यथोचित रीति से अर्घ्य आदि देकर उसका सत्कार किया। ७२ कालनेमि ने कहा— "बड़े अचरज की बात है। राजा की सवारी घर आयी, यह मेरे सौभाग्य की बात है। कहिए, क्या हाल है? क्या आप किसी राजा के डर से अकेले आये हैं? ७३-७४ कहिए, छुपाइये नहीं। वह राजा कौन है? आपका चेहरा आज उदास लगता है।" ७५ रावण ने ठीक-ठीक बता दिया— "मैं भी काल के वश में हूँ, इसलिए मुझ पर भी एक संकट आ पड़ा है। ७६ आज मैंने मय द्वारा प्रदत्त साँग (शक्ति) चलाया। उससे लक्ष्मण मूर्च्छित हुए, यह तो भला हुआ। ७७ पर महावीर हनुमान संजीवनी लाने के लिए बड़े वेग से चल पड़े हैं। ७८ आप मुनि का कपट वेष बनाकर हनुमान को अटकाइये। ७९ सुबह होते ही लक्ष्मण मर जाएगा फिर लड़ाई में मेरी ही जीत होगी।" ८० कालनेमि ने रावण की बात सुनकर कहा— "हनुमान को रास्ता चलते कौन रोक सकता है? ८१ फिर भी मैं आपकी आज्ञा पूरी करूँगा और मारीच की भाँति देखते-देखते मारा जाऊँगा। ८२ आपका बेटा मरा, पोता मरा और कई प्रिय लोग मरे, फिर भी आपके मन में शोक नहीं हुआ। ८३ मेरे राक्षस कुल के वीर एक-एक कर मरते जा रहे हैं; पर आपको अपने ही जीने की आशा है। ८४ सीता को लेकर और राज्य को लेकर आप क्या कीजिएगा? डर के मारे कोई भी आपसे उचित बात नहीं कहता है। ८५ आप वन जाकर मुनियों के साथ निवास कीजिए और वहाँ मिल-जुलकर संयम-नियम के साथ रहिए। ८६ इस संसार को केवल माया (वंचना) समझिए।

मायामय जानू संसार। सभ जनले अछि ज्ञानविचार॥ ८७॥
हम उपदेश कहै छी गूढ़। काल-विवश ज्ञानी हो मूढ़॥ ८८॥
ताकब गय की देश विदेश। लोचन-पथ निज पुर परमेश॥ ८९॥
रामचन्द्र विष्णुक अवतार। लक्ष्मण शेष धरणि धर भार॥ ९०॥
सीता विष्णुक माया जानि। हठ परित्यागु हेतु की हानि॥ ९१॥
हृदय-कमल प्रभु-ध्यान लगाउ। ई संसार-जलधि तरि जाउ॥ ९२॥
भजु रघुनन्दन सीता-सहित। वैरि-भावनादिक सौं रहित॥ ९३॥
एखनहुँ धरि अछि विजयक आश। सूर झूर जनु लाग हुताश॥ ९४॥

॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे लङ्काकाण्डे षष्ठोऽध्यायः॥

॥ अथ सप्तमोऽध्यायः॥

॥ चौपाइ॥

लखकि उठल रावण खिसिआय। कालनेमि-मुह गेल सुखाय॥ १॥
रामचन्द्र मे तोहरा प्रीति। के न कहत थिक बहुत अनीति॥ २॥

आपको तो ज्ञान की सारी बातें जानी हुई हैं। ८७ फिर भी मैं कुछ रहस्यमय उपदेश कहता हूँ। काल के वश में आकर ज्ञानवान पुरुष भी अज्ञानी हो जाता है। ८८ आप क्यों देश-विदेश में खोजने जाइएगा। परम प्रभु तो स्वयं आपके नगर में आये हुए हैं। ८९ राम विष्णु के अवतार हैं और लक्ष्मण धरती का भार धारण करनेवाले शेषनाग के अवतार हैं। ९० सीता को विष्णु की स्त्री माया समझिए और जिद छोड़िए। नाहक बरबादी में क्यों पड़िएगा। ९१ हृदय में प्रभु राम का ध्यान कीजिए और इस ससार रूपी सागर को पार कीजिए। ९२ सीता-सहित राम का भजन कीजिए जिनमें वैर आदि दुर्भावनाएँ नहीं हैं। ९३ अब भी आपकी जीत की आशा बनी हुई है, मानो सूखी हुई रुई में आग लग गयी हो।" ९४

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में लंकाकाण्ड का छठा अध्याय समाप्त॥

सातवाँ अध्याय

रूपमाली की कथा; हनुमान द्वारा कालनेमि राक्षस का संहार

रावण गुस्से से आगबबूला हो उठा। कालनेमि देखकर सहम गया। रावण तमककर बोला— १ "तुम्हें रामचन्द्र से प्रीति हो, कौन नहीं कहेगा कि यह एकदम नीति के प्रतिकूल है। २ मैं कुछ और ही सोचता था, पर तुम तो मुझे ज्ञान का उपदेश देने चले हो। ३ जो काम करने को मैंने कहा है वह

अभिप्राय हमरा किछु आन । ई शिखबय लगला अछि ज्ञान ॥ ३ ॥
करह करह गय कहल उपाय । नहि तौं यमघर देबहु पठाय ॥ ४ ॥
कालनेमि मन कहि चललाह । उचित कहल लागल अधलाह ॥ ५ ॥
तुहिनाचल पर तपवन कयल । मुनिसम स्वाङ्ग सकल से धयल ॥ ६ ॥
योजन-मित एक आश्रम नीक । बुझि पड़ जनु मुनि जनहिक थीक ॥ ७ ॥
शिव शिव कहथि सुवेष विवेक । कालनेमि मुनि शिष्य अनेक ॥ ८ ॥
से आश्रम देखल हनुमान । लगला करय हृदय अनुमान ॥ ९ ॥
की भोंथिआय गेल अछि पन्थ । कहता सभटा निकट महन्थ ॥ १० ॥
बाट सोझ हुनका सौं जानि । जायब तखन पीबि लेब पानि ॥ ११ ॥
आश्रम मध्य गेला हनुमान । ऐन्द्रयोग मुनि कर सविधान ॥ १२ ॥
देखल शिव-पूजन-विधि वेश । मानल चित्त पुण्यमय देश ॥ १३ ॥
मारुतनन्दन कयल प्रणाम । हनूमान सभ जन कह नाम ॥ १४ ॥
रामकाज सौं क्षीर-समुद्र । जाइत छी पालक छथि रुद्र ॥ १५ ॥
हमरा सहज त्रिकाल-ज्ञान । भाग्यहिं भेट भेल हनुमान ॥ १६ ॥
रामक दिव्य विलोचन गर्व्व । बचला लक्ष्मण वानर सर्व्व ॥ १७ ॥
छोट कमण्डलु वारि न पूर्त्ति । तृष्णा होइति अद्भुत मूर्त्ति ॥ १८ ॥

करो, नहीं तो यमलोक भेज दूँगा।" ४ यह सुनकर कालनेमि ने मन में कहा, "मैंने तो उचित बात कही पर उसे बुरी लगी।" फिर वह विदा हो गया। ५ हिमालय पर्वत पर तपोवन बनाया और हूबहू मुनि का स्वाँग बना लिया। ६ एक योजन का एक सुन्दर आश्रम बनाया जो लगता था जैसे वास्तव में मुनियों का हो। ७ सुन्दर वेष बनाए, मुनि का रूप धारण किए अनेक शिष्यों से युक्त कालनेमि शिव-शिव जपने लगा। ८ हनुमान ने उस आश्रम को देखा और मन में अनुमान करने लगे— ९ "क्या मेरा रास्ता भुला गया? पास की कुटी के प्रधान सारा हाल बताएँगे। १० उनसे सीधा रास्ता जानकर और वहाँ पानी पीकर आगे बढ़ूँगा।" ११ ऐसा सोचकर हनुमान ने आश्रम में प्रवेश किया और देखा कि मुनि विधि-विधानपूर्वक ऐन्द्र-योग कर रहे हैं। १२ शिव-पूजा का सुन्दर विधान देखा और देखकर मन में विश्वास हो गया कि यह धर्म-स्थान है। १३ हनुमान ने उस छद्म मुनि को प्रणाम किया और कहा— "मेरा नाम हनुमान है। १४ राम के काम से क्षीर समुद्र जा रहा हूँ। भगवान रुद्र मेरी रक्षा करनेवाले हैं।" १५ कालनेमि ने कहा— "मुझे अनायास वर्तमान, भूत और भविष्य तीनों काल का ज्ञान हो जाता है।" १६ राम की अलौकिक दृष्टि की महिमा से सभी वानरों-समेत लक्ष्मण बच गये। १७ कमंडल छोटा है। उसमें पानी भी पूरा-पूरा भरा नहीं है। प्यास बहुत तेज़ लगी होगी।" १८ यह सुनकर हनुमान ने कहा,

कतय जलाशय से दिय देखाय। सुख सौं पान करब जल जाय॥ १९॥
मुनि-आज्ञा शुनि लेल बटु आगु। मारुतसुत तनि पाछाँ लागु॥ २०॥
आँखि मूनि अहँ कय जलपान। सत्वर आउ निकट हनुमान॥ २१॥
मन्त्र एक हम देब उपदेश। त्वरितहिं देखब औषधि वेश॥ २२॥
गेला जलाशय लोचन मूनि। पिबायित पानि शब्द भेल शूनि॥ २३॥
महतो मकरी पयरे धयल। पवनक पुत्र पराक्रम कयल॥ २४॥
तनिकर मुह देल हाथेँ फाड़ि। अन्तरिक्ष गेलि से तन छाड़ि॥ २५॥

॥ रूपमाला ॥

दिव्यरूप-धराङ्गना से रूपमाली नाम॥ २६॥
कहल सभ हनुमान काँ जे कपट छल तहिठाम॥ २७॥
हे कपीश्वर अहँक चरणक परशँ छूटल शाप॥ २८॥
मुनि न थिक ओ विकट राक्षस कालनेमि सपाप॥ २९॥
ओकर जनु विश्वास-करु मन धाउ तनिकाँ जाय॥ ३०॥
जाउ द्रोणाचल त्वरित अहँ बाट विघ्न मेटाय॥ ३१॥
ब्रह्म-जनपद हम चलं छी कयल पद-सय्योँग॥ ३२॥
तकर फल निष्पापिनी हम छुटल शापज भोग॥ ३३॥

"इसके लिए चिन्ता मत कीजिए। जलाशय कहाँ है यह मुझे बता दीजिए? मैं वहीं जाकर सुविधापूर्वक पानी पी लूँगा।" १९ मुनि की आज्ञा सुनकर एक ब्रह्मचारी बटु को रास्ता बताने के लिए आगे करके हनुमान उनके पीछे-पीछे चल पड़े। २० फिर कालनेमि बोले, "हे हनुमान! आप जल्द जाइए, आँख मूँदकर पानी पीजिए और लौटकर मेरे पास आइए। २१ मैं एक मंत्र का उपदेश दूँगा जिसके प्रभाव से आप संजीवनी दवा को पहचान जाइएगा।" २२ हनुमान आँख मूँदकर जलाशय गये और ज्यों ही पानी पीने लगे कि एक आवाज़ सुनाई पड़ी। २३ एक भारी मकरी (मादा मगर) ने उनके पाँव पकड़ लिये। हनुमान छुड़ाने के लिए पराक्रम करने लगे। २४ हाथों से उसके मुँह को फाड़ दिया। वह मगर रूपी शरीर को छोड़ आसमान में चली गयी। २५ फिर अपने दिव्य रूप में प्रकट हो गयी। वह यथार्थ में रूपमाली नाम की दिव्यांगना थी। २६ उसने हनुमान को वह सारा हाल बताया कि वहाँ कैसा कपट रचा गया था? २७ आगे उसने कहा— "हे हनुमान, आपके चरणों के स्पर्श से मेरा शाप समाप्त हुआ। २८ वह मुनि नहीं है, वह तो भयानक पापी राक्षस कालनेमि है। २९ उस पर विश्वास मत कीजिए। जाकर उसे मार डालिए। ३० फिर रास्ते के विघ्नों का दूर करते हुए द्रोण नामक पर्वत पर जाइए। ३१ मैं अब ब्रह्मलोक जा रही हूँ। मैं आपके चरणों का स्पर्श पा चुकी हूँ। ३२ उसके परिणामस्वरूप मैं पाप-

॥ चौपाइ ॥

शुनत बेखल कपिवर से चरित । रुष्ट फिरल आश्रम मे त्वरित ॥ ३४ ॥
कालनेमि कह दहिना कान । लाउ निकट झट दय हनुमान ॥ ३५ ॥
उचित दक्षिणा जे अहँ देब । हम सन्तुष्ट पुष्ट भय लेब ॥ ३६ ॥
मुका एक मारल हनुमान । ग्रहण करू दक्षिणा विधान ॥ ३७ ॥
प्रकट भेल खल मरइक काल । लड़न भिड़ल कय मायाजाल ॥ ३८ ॥
कतय कमण्डलु मायाजाल । कालनेमि काँ धयलक काल ॥ ३९ ॥
गेल महाबल गिरिबर द्रोण । चिन्हल न पर सञ्जीवन कोन ॥ ४० ॥
गिरि समस्त काँ लेल उठाय । पवनक पुत्र पवन जकँ जाय ॥ ४१ ॥
उत रघुनन्दन सकरुण चित्त । करथि विलाप इ लोक निमित्त ॥ ४२ ॥
लक्ष्मण काँ लेल हृदय लगाय । किएक न प्राण प्रथम विधि जाय ॥ ४३ ॥
मसक-पक्ष-पवनक आघात । उड़ि जरु जाथि धराधर सात ॥ ४४ ॥
पन्नगेश काँ भेकी खाय । चीटी-उदर करीन्द्र समाय ॥ ४५ ॥
मेषी देखि सिंह वन त्याग । सुधा-अधिक मधु हो कटु साग ॥ ४६ ॥
ई बरु होय कथा थिक अल्प । मिथ्या नहि रघुकुल-सङ्कल्प ॥ ४७ ॥

रहित हो गयी। मेरे शाप के भोग का अन्त हुआ।" ३३ हनुमान ने उस राक्षस कालनेमि का यह हाल सुना और देखा। फिर रोष के साथ तुरन्त आश्रम लौटे। ३४ कालनेमि ने कहा— "हे हनुमान, अब आप तुरन्त अपना दाहिना कान मेरे पास लाइए, मैं मंत्र देता हूँ। ३५ आप जो भी दक्षिणा देंगे, मैं सन्तोषपूर्वक स्वीकार कर लूँगा।" ३६ हनुमान ने एक मुक्का लगाया और कहा— "यह विधिवत दक्षिणा स्वीकार कीजिए।" ३७ तब वह कपट मुनि मरते समय अपने वास्तविक रूप में प्रकट हुआ। मायाजाल फैलाकर लड़ाई ठानी। ३८ क्षण में ही कहाँ वह कमंडल चला गया और कहाँ वह मायाजाल? कालनेमि को हनुमान रूपी काल ने ग्रसित कर लिया। ३९ तब महाबली हनुमान द्रोणाचल पर पहुँचे, परन्तु यह पहचान न सके कि संजीवनी कौन सी है? ४० अतः समूचे द्रोणाचल को उठाकर पवनसुत हनुमान पवन की भाँति तेज गति से चल पड़े। ४१ उधर करुण हृदय राम लौकिक लीला के रूप में विलाप करने लगे। ४२ लक्ष्मण को छाती से लगा लिया और चिन्ता करने लगे— "हा विधाता, पहले मेरे ही प्राण क्यों नहीं चले जाते? ४३ मच्छर के पंख की हवा के झोंके से सातों कुलाचल भले ही उड़ जाएँ; ४४ गरुड़ को भले ही छोटा-सा मेढक खा ले; चींटी के पेट में भले ही हाथी समा जाए; ४५ भेड़ को देख सिंह भले ही जंगल से भाग जाए; कड़ुवा साग भले ही अमृत से भी अधिक मीठा हो जाए। ४६ इन सबों का हो जाना कोई बड़ा अचरज नहीं है, पर रघुवंशी के मन में जो भावना आती है वह कभी

रहल मनोरथ ठामहिँ ठाम। अस्त भेल रघुवंशक नाम॥ ४८॥
लक्ष्मण सन नहि भेटता भाय। विधिहुक घर अतिशय अन्याय॥ ४९॥
रावण जिबइत रहबे कयल। कथि लय बाण धनुष कर धयल॥ ५०॥
चौदह वर्षक अछि अवसान। समय कयल विधि आनक आन॥ ५१॥
जायब की घर बनल सशोक। शुनि शुनि कि कहत ओतयक लोक॥ ५२॥
शिव शिव जीवन हमरो व्यर्थ। रमणी-कारण मरण अनर्थ॥ ५३॥
वैदेही ई शुनतिह कान। मरती विलपि होइछ अनुमान॥ ५४॥
माता तकयित हयती बाट। नोरक लेल धरणि धुर पाट॥ ५५॥
धिक धिक जीवन एहि संसार। कुलकलङ्क बिगड़ल व्यवहार॥ ५६॥
दुष्ट दैव कहँ कि कहब आज। भल जन बस नहि तनिक समाज॥ ५७॥
उठु उठु सत्वर लक्ष्मण भाय। दिनमणि-कुलक कलङ्क मेटाय॥ ५८॥
शिव शिव कतय गेला हनुमान। जनि कर अर्पल तन ओ प्राण॥ ५९॥
देखि पड़इछ सभटा प्रत्यक्ष। ककरो केओ नहि दैव विपक्ष॥ ६०॥
की राक्षस हनुमान सौँ युद्ध। कियलक पथ मे हमर विरुद्ध॥ ६१॥
महावीर काँ कयलक आँट। राक्षस-संघ कि रोकल बाट॥ ६२॥

झूठी नहीं हो सकती है। ४७ मेरी योजना ज्यों की त्यों रह गयी। रघुवंश का नाम जाता रहा। ४८ लक्ष्मण-जैसा भाई फिर नहीं मिलेगा। विधाता के घर में भी भारी अन्याय होता है। ४९ अब रावण जीता रह गया। व्यर्थ मैंने धनुष-बाण धारण किया। ५० चौदह वर्षों की अवधि बीतने ही वाली है। ऐन मौक़े पर विधाता ने क्या से क्या कर दिया? ५१ शोक में डूबा कैसे घर जाऊँगा? वहाँ के लोग सुन-सुनकर क्या कहेंगे? ५२ हाय-हाय! मेरी भी ज़िन्दगी बेकार है। यदि मैं स्त्री के खातिर मर जाऊँ तो बड़ा अनर्थ हो जाएगा। ५३ मेरे मरने का समाचार ज्यों ही सीता के कान में पड़ेगा तो लगता है वह रोते-रोते मर जाएगी। ५४ माता राह जोहती होगी। उनके आँसू से धरती की धूल कीचड़ हो गयी होगी। ५५ इस संसार में धिक्कार है मेरी ज़िन्दगी को। मैंने कुल को कलंकित किया। कुल की परम्परा को मैंने बिगाड़ दिया। ५६ आज दुष्ट विधाता को क्या कहूँ? उनके पास कोई भला आदमी रह नहीं सकता। ५७ हे लक्ष्मण! उठो-उठो ताकि सूर्यवंश को कलंक न लगे। ५८ हाय-हाय! वे हनुमान कहाँ चले गये जिनके हाथ में मैंने अपना तन और प्राण भी सौंप दिये हैं। ५९ सारा हाल मैं प्रत्यक्ष देख रहा हूँ। यदि विधाता वाम हो तो किसी को कोई बचानेवाला नहीं होता? ६० क्या मेरी दुश्मनी में किसी राक्षस ने रास्ते में लड़ाई छेड़ दी? ६१ क्या राक्षसों के दल ने हनुमान का शिकस्त कर रास्ता रोक दिया?" ६२ ज्यों-ज्यों रात बीतती जाती, त्यों-त्यों राम घबराते जाते। ६३ कोई सेनापति

जौँ जौँ बीतलि रजनी जाथि। रामचन्द्र तौँ तौँ अकुलाथि ॥ ६३ ॥
केओ सेनाधिप प्रश्न विचार। चढ़ि तरु भूधर उपर निहार ॥ ६४ ॥
औषधि सञ्जीवनक समीप। रविसम कान्ति अखण्डित दीप ॥ ६५ ॥
नभ मे शुनि पड़ धुनि बड़ गोट। हर्ष विषाद हृदय नहि छोट ॥ ६६ ॥
रविशशि विनु को गगन प्रकाश। क्षण मन हर्ष क्षणहिँ मन त्रास ॥ ६७ ॥

॥ सोरठा ॥

गिरि समेत हनुमान, प्रभु-सन्निधि आयल मुदित ॥ ६८ ॥
शुनु रघुपति भगवान, गिरि आनल औषधि सहित ॥ ६९ ॥
हर्ष कहल नहि जाय, करुण गमन वीरागमन ॥ ७० ॥
प्रभु लेल हृदय लगाय, जगत्प्राण-नन्दन बली ॥ ७१ ॥

॥ मत्तगजेन्द्र छन्द ॥

वैद्य सुषेणक सम्मति सौँ, रघुनन्दन दिव्य महौषधि लेकेँ ॥ ७२ ॥
लक्ष्मण वीरक प्राण बचाओल, जे अनुपान यथाविधि देकेँ ॥ ७३ ॥
सूतल जागल-रीति जकाँ, उठि ठाढ़ तहाँ रण हर्षित भेकेँ ॥ ७४ ॥
गेल कहाँ रणसौँ खल रावण, मारब आज धनुर्द्धर धेकेँ ॥ ७५ ॥

शकुन उचारते थे तो कोई पहाड़ की चोटी पर चढ़कर हनुमान की राह जोहते थे। ६४ संजीवनी बूटी के पास सूरज के समान चमक दिखाई दी, जैसे अखंड दीप जलता हो। ६५ आकाश में बड़ी तेज़ आवाज़ सुनाई पड़ी। उनके मन में भारी हर्ष और विषाद दोनों साथ-साथ होने लगा। ६६ न सूरज है न चाँद, फिर आकाश में प्रकाश कैसा? क्षण ही में उसे संजीवनी की चमक समझकर हर्ष हुआ और क्षण ही में कोई उत्पात समझकर त्रास भी हुआ। ६७ हनुमान पर्वत को उठाए खुशी के साथ राम के पास आये और बोले— ६८ "हे भगवान राम, मैं संजीवनी-सहित पर्वत को ही उठाकर ले आया हूँ"। ६९ राम को जो हर्ष हुआ उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है। करुण रस का अन्त हुआ और वीर रस फिर लौट आया। ७० राम ने पवनसुत बली हनुमान को हृदय से लगा लिया। ७१ वैद्य सुषेण की राय से राम ने दिव्य महौषधि संजीवनी बतायी गयी रीति के अनुसार अनुपान (योग) के साथ पिलाकर वीर लक्ष्मण के प्राण बचाए। ७२-७३ लक्ष्मण प्रसन्न हो उसी तरह उठ बैठे जैसे सोया हुआ आदमी जागने पर बैठता है और लड़ने के लिए खड़े हो गये और बोले— ७४ "अरे वह दुष्ट रावण रणभूमि से कहाँ भाग गया? आज मैं तीर-धनुष से उसके प्राण ले लूँगा।" ७५ ऐसे कहते हुए लक्ष्मण को राम

॥ जयकरी छन्द ॥

ई कहयित लक्ष्मण लय अङ्क। लागल नहि रघुबंश कलङ्क ॥ ७६ ॥
महाबीर रुद्रक अवतार। कपट-महोदधि कयलहुँ पार ॥ ७७ ॥
देखल निरामय लक्ष्मण बीर। अहँक प्रसाद भेल मन थीर ॥ ७८ ॥
कष्ट नष्ट कयलहुँ हनुमान। ई उपकार-दक्ष के आन ॥ ७९ ॥

॥ रूपक ॥

॥ दण्डक छन्द ॥

जय जय अतिबल रघुबर सानुज।
कहि कपि कयल तयारी, बड़ भारी ॥ ८० ॥
रण-बाजा सभ बाजय लागल।
गिरि चढ़ि देखथि मारी, त्रिपुरारी ॥ ८१ ॥
चलल सकल दल लङ्कागढ़ पर।
तरुवर लेल उखारी, गिरिधारी ॥ ८२ ॥
कपि सुग्रीव बिभीषण अनुमति।
रोकय चारू द्वारी, रिपुहारी ॥ ८३ ॥

॥ जयकरी छन्द ॥

रामक शर सौँ जर्जर काय। बसल निज सिंहासन जाय ॥ ८४ ॥
सिंहक त्रासित जनु गजराज। पराभूत फणि गरुड़-समाज ॥ ८५ ॥

ने छाती से लगा लिया और बोले— "खैर, रघुकुल में कलंक न लगा। ७६ हे महावीर, आप रुद्र के अवतार हैं। आप ने राक्षसों के छल रूपी समुद्र को पार किया। ७७ वीर लक्ष्मण को रोग-मुक्त देखा। आपकी कृपा से मेरा मन प्रसन्न हुआ। ७८ हे हनुमान! आपने मुझे भारी संकट से उबारा। ऐसा अलौकिक उपकार करने में आपके समान और कौन समर्थ है?" ७९ तब 'लक्ष्मण-सहित महाबली रामचन्द्र की जय' इस प्रकार जयघोष करके कपियों के दल ने लड़ाई के लिए भारी तैयारी की। ८० लड़ाई के सारे बाजे बजने लगे। भगवान शिव हिमगिरि पर चढ़कर युद्ध देखने लगे। ८१ सारी सेना ने लंका गढ़ पर चढ़ाई की। कुछ बन्दर पेड़ उखाड़कर हाथ में लिये हुए थे तो कुछ पर्वत लिये हुए। ८२ कपिगण ने सुग्रीव और विभीषण की आज्ञा के अनुसार शत्रु का संहार करते हुए चारों द्वारों को रोक लिया। ८३

युद्ध से घबराकर रावण द्वारा कुम्भकर्ण को जगाया जाना

लड़ाई में राम के तीरों से रावण का शरीर जर्जर हो गया। वह भागकर अपने सिंहासन पर जा बैठा। ८४ जैसे सिंह के डर से हाथी और

कहन दशानन जन सौँ खेद । शरबीड़ित तन मन निर्व्वेद ॥ ८६
मरण कहन विधि मानुष-हाथ । सैह उपस्थित छथि रघुनाथ ॥ ८७
अनरण्यक हमरा अछि शाप । से दिन निकट हृदय बड़ काँप ॥ ८८
कहयित छी अनरण्यक उक्ति । से दिन लगिचायल सभ युक्ति ॥ ८९
परमात्मा हमरा कुल आबि । लेता जन्म समय अछि भावि ॥ ९०
तोहरा पुत्रादिक जे हयत । राम-हाथ मृति पर-पुर जयत ॥ ९१
कहि अनरण्य गेला परलोक । तकरे कारण उपगत शोक । ९२
रामक हाथ हमर अछि मरण । त्यागब हम नहि वीराचरण ॥ ९३
सभजन मिलि कें तहँ अहँ जाउ । कुम्भकर्ण काँ जाय जगाउ ॥ ९४
कहबनि हमर दशा सभ गोट । बड़ गोट काय कर्म्म की छोट ॥ ९५
रावण काँ प्राणान्तिक कष्ट । अहँ की शयन-सुखी धिक भ्रष्ट ॥ ९६
सभ जन कयलनि बहुत उपाय । कुम्भकर्ण लग ढोल बजाय ॥ ९७
बहुत उपाय करय लगलाह । कुम्भकर्ण तें नहि जगलाह ॥ ९८
हुनकर वनिता देल उपदेश । लय आनू गायिनि जनि बेश ॥ ९९

गरुड़ के सामने साँप हार कर बैठ जाता है। ८५ रावण अपनी व्यथा अप लोगों से कहने लगा, "तीरों के घाव से मेरे शरीर में दर्द हो रहा है औ मन में ग्लानि हो रही है। ८६ ब्रह्मा ने कहा है कि मेरी मृत्यु मनुष्य के हा से होगी। उसी मनुष्य के रूप में आज राम उपस्थित हैं। ८७ मुझ प अनरण्यक नामक ऋषि का एक शाप है। वह दिन नजदीक आ गया है मेरा कलेजा काँप रहा है। ८८ अनरण्यक ने शाप में जो कहा था वह बताते हैं। हर तरह से वह दिन आज पास आ गया है। ८९ उन्होंने कहा थ 'ऐसा समय आनेवाला है जब परमात्मा मेरे वंश में आकर अवतार लेंगे। ९ तुम्हें जो पुत्र-पौत्रादि होंगे वे राम के हाथ से मर-मरकर परलोक सिधारेंगे।' ९ इतना कहकर अनरण्यक मुनि स्वर्ग चले गये। उसी शाप के कारण यह शो आज मुझे आ पड़ा है। ९२ राम के हाथ मेरी मृत्यु निश्चित है; फिर भी वीरोचित कर्म नहीं छोड़ूँगा। ९३ आप सभी लोग मिलकर वहाँ जाइए जह कुम्भकर्ण है और उसे जगाइए। ९४ मेरा जो हाल है वह पूरा-पूरा उस कहिएगा। मेरा शरीर तो बड़ा है, पर करनी बड़ी छोटी है। ९ कहिएगा कि रावण को प्राणान्तक पीड़ा हो रही है और आप आराम से सो हुए हैं। आप भ्रष्ट हो गये। धिक्कार है आपको।" ९६ सभी लो कुम्भकर्ण के पास गये और ढोल पीट-पीटकर उसे जगाने की कोशिश कर लगे। ९७ बहुत प्रयास करने के बावजूद कुम्भकर्ण न जगा। ९८ कुम्भकर्ण की स्त्री ने सलाह दी, "आप लोग अच्छी-अच्छी गायिकाओं को ले आइए। ९९ उन सुन्दरियों का गान सुनते ही ये जाग जाएँगे, तब आप

उठता शुनि शुनि वनिता-गान। जे कहनीय कहब से कान॥ १००॥
एक दश कानन एक दिश नाँच। भोग रहल लङ्का दिन पाँच॥ १०१॥
कुम्भकर्ण उठला निज सेज। लय पहुँचल राक्षस गण भेज॥ १०२॥
गिरिसम मासुक ढेरी कयल। तीव्र सुरा अगणित घट धयल॥ १०३॥
मदिरा मासु गेला पिबि खाय। कहल बजौलनि बड़का भाय॥ १०४॥
जाय भूप काँ कयल प्रणाम। दीन वचन कह दशमुख नाम॥ १०५॥
कुम्भकर्ण हम पड़लहुँ कष्ट। लङ्का-विभव-निवह हत नष्ट॥ १०६॥
पुत्र पौत्र बान्धव हत समर। वानर कुशल बनल अछि अमर॥ १०७॥
वानर राक्षस-भट संहार। समुचित की कर्त्तव्य विचार॥ १०८॥
रामचन्द्र सुग्रीव-सहाय। लङ्का पहुँचल उदधि बँधाय॥ १०९॥
हमरो दशा देखि छी नयन। अहँ चिर काल करै छी शयन॥ ११०॥
सकल सुभट सौं लङ्का हीन। बचि रहलहुँ अछि गनती तीन॥ १११॥
वानर मरय करू से काज। काज जगाय मँगाओल आज॥ ११२॥

॥ सोरठा ॥

अट्टहास शुनि कयल, कुम्भकर्ण भ्राता-वचन॥ ११३॥
नीति कान नहि धयल, पूर्वहि मन्त्र-विचार मे॥ ११४॥

उनसे जो कुछ कहना है सो कहिएगा।" १०० एक ओर क्रन्दन और एक ओर गान। लंका में पाँच दिनों तक यही रंग रहा। १०१ तब जाकर कुम्भकर्ण अपनी शय्या से उठे और राक्षसों का दल सदेश लेकर पहुँचा। १०२ मांस का पहाड़-सा ढेर लगा दिया और अनगिनत घड़े तीखी मदिरा सामने रखी। १०३ जब कुम्भकर्ण सारा मांस खा गया और मदिरा पी गया तब राक्षसों ने कहा कि आपको बड़े भाई रावण ने बुलाया है। १०४ कुम्भकर्ण ने जाकर भाई को प्रणाम किया। रावण ने बिलखते हुए कहा— १०५ "हे कुम्भकर्ण! मैं मुसीबत में पड़ा हुआ हूँ। लंका की सारी धन-सम्पत्ति नष्ट हो गयी। १०६ मेरे बेटे, पोते और रिश्तेदार लड़ाई में मारे गये, पर वानरों का दल खैरियत के साथ जिन्दा है जैसे अमर हो। १०७ बन्दर राक्षसों की सेना को मौत के घाट उतारते गये हैं। अब यह विचार करो कि आगे क्या करना उचित होगा? १०८ राम सुग्रीव के सहारे समुद्र में बाँध बनाकर लंका पहुँच गया है। १०९ मेरी भी जो हालत है वह तो तुम अपनी आँखों से देख ही रहे हो। तुम तो अधिक समय सोये ही रहते हो। ११० लंका में जितने अच्छे-अच्छे योद्धा थे सभी समाप्त हो चुके हैं, अब हम केवल तीन बचे हुए हैं। १११ अब ऐसा काम करो जिससे बन्दर मरें। काम ही ऐसा पड़ा, इसलिए जगाकर बुलाया।" ११२ भाई रावण की बात सुनकर कुम्भकर्ण अट्टहास कर उठा और बोला— ११३ "आरम्भ में ही मन्त्रणा

॥ चौपाइ ॥

उपगत शत शत जत तत पाप। दिन दिन छिन हो प्रबल प्रताप ॥ ११५ ॥
पूर्व कहल नारायण राम। सीता आदि प्रकृति श्री-नाम ॥ ११६ ॥
नगर विशाला बन गिरि सानु। हम देखल नारद जनु भानु ॥ ११७ ॥
कत चललहुँ अछि हे मुनिनाथ। हम पूछल करु एक न लाथ ॥ ११८ ॥
सकल देव काँ मन्त्र-विचार। होइछ ततय कयल सञ्चार ॥ ११९ ॥
अहँ सौं रावण सौं सभ अमर। पीड़ित कय न शकथि केओ समर ॥ १२० ॥
कहल विष्णु काँ होउ सहाय। रावण काँ मारू महि जाय ॥ १२१ ॥
त्राहि त्राहि हम धयलहुँ चरण। मानुष-कर अछि तनिकर मरण ॥ १२२ ॥
मानुष बनि प्रभु सुख-अवतार। हरण करू अवनिक सभ भार ॥ १२३ ॥
नारायण कयलनि स्वीकार। सैह थिकथि रघुबर अवतार ॥ १२४ ॥
भल भय भय सौं रहु घर बैशि। नहि तौं मरण समर-महि पैशि ॥ १२५ ॥
तनिक चरण-पङ्कज करु भक्ति। यावत अछि एतबो तन-शक्ति ॥ १२६ ॥
भक्तिभाव सौं पायब ज्ञान। भक्ति मुक्तिदा वेद प्रमाण ॥ १२७ ॥

के समय आपने नीतियुक्त उचित बात को अनसुना कर दिया। ११४ ज्यों-ज्यों पाप संचित होते जाते हैं, त्यों-त्यों दिन-पर-दिन प्रताप घटता जाता है। ११५ मैंने पहले ही कहा था कि राम नारायण के अवतार हैं और सीता मूल प्रकृति लक्ष्मी हैं। ११६ मैंने विशाला नाम की नगरी में जंगल के बीच पहाड़ की चोटी पर नारद को जाते देखा जो सूरज के समान चमक रहे थे। ११७ मैंने पूछा कि हे मुनिवर, आप कहाँ चले हैं साफ़-साफ़ मुझे बताइये ? ११८ उन्होंने बताया— 'वहाँ सभी देवता जुटकर आपस में मन्त्रणा कर रहे हैं। मैं वहीं जा रहा हूँ। ११९ सभी देव आपसे और रावण से पीड़ित हैं और आप लोगों से लड़ने की ताक़त उनमें नहीं है।' १२० देवों ने विष्णु भगवान से कहा, 'आप हमारे सहायक होइये और पृथ्वी पर जाकर रावण का वध कीजिए। १२१ बचाइये, हमें बचाइये। हम आपके पाँव धरते हैं। रावण की मृत्यु मनुष्य के हाथ से होनी है। १२२ इसलिए हे प्रभु! आप मनुष्य रूप में सुखपूर्वक अवतार लीजिए और धरती के सारे भार को दूर कीजिए।' १२३ भगवान विष्णु ने यह निवेदन स्वीकार कर लिया। वही अवतार-पुरुष ये राम हैं। १२४ भले आदमी बनकर आप डर से घर जा बैठिये, नहीं तो रणभूमि में आप मारे जाइएगा। १२५ जब तक इतनी भी ताक़त है, राम के चरणों में भक्ति कीजिए। १२६ भक्ति के सहारे आप ज्ञान पाएँगे। वेद बताते हैं कि भक्ति से मुक्ति मिलती है। १२७ हे भ्राता,

सहज उपाय करब नहि भाय। दुर्म्मति धरब मरब रण जाय॥ १२८॥
नारायणक बहुत अवतार। कहयित कथा बहुत विस्तार॥ १२९॥
सभ सौँ श्रेष्ठ ज्ञानि अवतार। से आयल छथि लङ्काद्वार॥ १३०॥
नहि उपाय सम्प्रति किछु आन। रामक शरण करण कल्याण॥ १३१॥
॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे लङ्काकाण्डे सप्तमोऽध्यायः॥

॥ अथ अष्टमोऽध्यायः॥

॥ सोरठा॥

शुनल वचन लङ्केश, कुम्भकर्ण समुचित कहल॥ १॥
मानल हृदय कलेश, क्रोधातुर चहलनि उठय॥ २॥
शिखइक नहि अछि ज्ञान, बजबाओल से काज करु॥ ३॥
जाउ जौँ मन किछु आन, करु सुषुप्ति निद्रा-विकल॥ ४॥

॥ चौपाइ॥

कुम्भकर्ण शुनि रावण-उक्ति। कालविवश काँ नीति न युक्ति॥ ५॥
समुचित कहल कयल ओ कोप। पापक उपचय शर्म्मक लोप॥ ६॥

यदि आप यह सीधा सा उपाय नहीं कीजिएगा और अपने बुरे इरादे पर अड़े रहिएगा तो लड़ाई में बेमौत मरिएगा। १२८ भगवान विष्णु के बहुत से अवतार हैं। उनकी कथा कहना बड़ा लम्बा काम होगा। १२९ उन सभी अवतारों में सबसे श्रेष्ठ है ज्ञानी के रूप में रामावतार। वही राम लंका के द्वार पर आये हुए हैं। १३० अब और कोई चारा नहीं है। राम की शरण गहने में ही खैरियत है।" १३१

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में लंकाकाण्ड का सातवाँ अध्याय समाप्त॥

आठवाँ अध्याय

कुम्भकर्ण का वध

कुम्भकर्ण का कहा हुआ उचित वचन रावण ने सुना। १ उसे वह बुरा लगा। सुनते ही वह गुस्से में आ गया और तुरन्त उठकर चले जाना चाहा। २ जाते समय कहा— "मुझे तुमसे ज्ञानोपदेश नहीं लेना है। जिस काम से बुलाया है वह काम करो। ३ यदि मन में कोई और बात हो तो जाकर सो जाओ। तुम नींद से परेशान जान पड़ते हो।" ४ रावण की यह बात सुनकर कुम्भकर्ण सोचने लगा— "जिसके सर पर काल सवार हो जाता है उसे नीति नहीं भाती है। ५ मैंने तो उचित बात कही, पर वह कुपित हो

महागोट पर्व्वत सन काय। चलला समर विषाद विहाय॥ ७॥
रण-महि कयल तेहन से नाद। सातो जलधि रहित-मर्याद॥ ८॥
अति भयकारक कपि-दल जान। कुम्भकर्ण थिक काल-समान॥ ९॥
झपटि झपटि वानर कें खाथि। गिरि सपक्ष सन सत्वर जाथि॥ १०॥
मुद्गर लय कर तेहन घुमाब। कालदण्ड गुणि के लग आब॥ ११॥
बहुतक चूर चरण ओ हाथ। बहुत जनक भेटय को माथ॥ १२॥
जाय विभीषण कयल प्रणाम। गदापाणि कहलनि निज नाम॥ १३॥
भाय दया करु भय गेल भेट। रावण रहल न कहल समेट॥ १४॥
बहुत कहल हम नीति बुझाय। अनुचित मानल बड़का भाय॥ १५॥
कि कहब सहल बहुत अपमान। रहितहुँ निकट न बचयित प्राण॥ १६॥
मारल लात हाथ तरुआरि। असमन्धिक जकँ धिक पढ़ गारि॥ १७॥
राम-शरण हम धयल बिचारि। सचिव-वारि-युत कुशल निहारि॥ १८॥
अमृत त्यागि विष तिष के खाय। चुम्बन करय व्यालमुख जाय॥ १९॥
कुम्भकर्ण लघु भ्राता जानि। मिलि कहलनि की तोहर हानि॥ २०॥

ठठा। पाप संचित होने से सुख का नाश होता है।" ६ ऐसा सोच मन के विषाद को भुलाकर पर्वतकाय कुम्भकर्ण लडाई के लिए चल पड़ा। ७ रणभूमि में पहुँचते ही उसने जो सिंहनाद किया उससे सातों समुद्र उछलने लगे। ८ कपियों का दल उससे बहुत डर गया। अरे, कुम्भकर्ण तो काल के समान है। ९ वह झपट-झपटकर वानरों को खाता और पाँखोंवाले पहाड़ की भाँति झटपट उड़ जाता। १० जब वह हाथ में मुग्दर ले उसे भाँजने लगता तो उसे कालदण्ड समझ कोई नजदीक आने की हिम्मत न करता। ११ उसने बहुत से वानर भटों के हाथ-पाँव चूर-चूर कर दिये। बहुतों का तो माथा ही लापता हो गया। १२ तब विभीषण हाथ में गदा लिये कुम्भकर्ण के पास गये और उसे अपना नाम कहा और बोले— १३ "हे भाई! मुझ पर दया करो। सौभाग्यवश भेंट हो गयी। रावण मेरी सलाह में नहीं रहा। १४ मैंने उसे बहुत से नीति-उपदेश समझाये। पर मेरे बड़े भाई रावण ने उसे बुरा मान लिया। १५ क्या बताऊँ, मैंने बहुत अपमान बर्दाश्त किया। यदि उसके पास रहता तो मेरे प्राण भी न बच पाते। १६ हाथ में तलवार लिये मुझे लात मारा और ऐसी भद्दी-भद्दी गालियाँ दीं जैसे मैं उसका रिश्तेदार ही न होऊँ। १७ सोच-विचारकर चारों सचिवों-सहित मैंने राम की शरण गही; क्योंकि इसी में कल्याण देख पड़ा। १८ अमृत को छोड़कर कड़वा जहर कौन पियेगा? साँप के मुँह को चूमने कौन जाएगा।" १९ यह सुनकर कुम्भकर्ण विभीषण का छोटा भाई समझकर उनसे मिले और कहा कि इसमें तुम्हें

महाभागवत थल भल पाय। कुल मे कमल भेलहुँ एक भाय॥ २१॥
नारद सौँ हमरा सभ ज्ञात। जाउ निकट सौँ सम्प्रति कात॥ २२॥
के थिक अपन बुझो नहि आन। सुरा हरल जतबो छल ज्ञान॥ २३॥
कहलनि कुम्भकर्ण जे भाय। कह सुग्रीव चरण लपटाय॥ २४॥
कनयित कनयित भेला विदाय। कयल निवेदन प्रभु-पद जाय॥ २५॥
कुम्भकर्ण किछु श्रम नहि लेथि। करपद सौँ कपि-दल पिसि देथि॥ २६॥
मुका एक मारल हनुमान। खसला कटला गाछ समान॥ २७॥
कुम्भकर्ण रण उठल सम्भारि। हनुमानक सङ्ग बजरल मारि॥ २८॥
हनुमानक पर मुका चलाय। मूर्छित कय देल अबनि शुताय॥ २९॥
नल-नीलादि सहित कपिराज। पटकल छल सभ किछु नहि बाज॥ ३०॥
मातल जेहन प्रबल मातङ्ग। कुम्भकर्ण से धयलनि रङ्ग॥ ३१॥

॥ सवैया छन्द ॥

कण्ठकूप मे कपिपति जाँतल, सभ प्रधान सङ्ग्राम खसाय॥ ३२॥
कुम्भकर्ण घुरि लङ्का चलला, ककरो बुत नहि बनय उपाय॥ ३३॥

कोई हानि नहीं हुई है। २० तुमने महाभागवतों (उत्कृष्ट विष्णु-भक्तों) के बीच अच्छा स्थान प्राप्त किया। कम से कम एक भाई तो कुल-कमल हुआ। २१ सारा हाल मुझे नारद के मुँह से मालूम है। अभी मेरे सामने से दूर चले जाओ। २२ मदिरा ने जो कुछ भी ज्ञान था उसे हर लिया है। कौन अपना है और कौन पराया, यह भी समझ में नहीं आता है? २३ कुम्भकर्ण ने जो कहा वह विभीषण ने सुग्रीव के पाँव से लिपटकर उन्हें सुनाया। २४ फिर रोते-रोते वहाँ से विदा हुए और राम के पास जाकर उनसे भी सुनाया। २५ कुम्भकर्ण को लड़ाई में कोई श्रम नहीं करना पड़ता था। यों ही कपियों के दल को अपने हाथों और पाँवों से कुचल देता था। २६ हनुमान ने उसे एक घूँसा लगाया। वह कटे हुए पेड़ की तरह गिर पड़ा। २७ कुम्भकर्ण लड़ने के लिए फिर सँभलकर उठा। उसकी हनुमान के साथ लड़ाई छिड़ गयी। २८ उसने भी हनुमान पर एक घूँसा जमा दिया और उन्हें बेहोश कर धरती पर लिटा दिया। २९ नल, नील आदि के समेत जितने बड़े-बड़े योद्धा कपि थे सभी पटके गये थे, अतः कुछ बोल न पाते। ३० जैसे मद से पागल हाथी हो, उसी तरह कुम्भकर्ण लड़ाई में रंग दिखाने लगा। ३१ लड़ाई में सभी सेनापतियों को पछाड़कर कुम्भकर्ण ने सुग्रीव को अपने गले में दबा लिया। ३२ और लौटकर लंका की ओर चल पड़ा। प्रतिकार करने की ताक़त किसी को न रही। ३३ तब अलक्षित रूप से धीरे-

गमहि गमहि अति साहसि कपिपति, हुनकर काटल नासा कान ॥ ३४ ॥
उड़ि नभ अपन कटक चल अयला, कुम्भकर्ण कां भेल न ज्ञान ॥ ३५ ॥

॥ बरवा छन्द ॥

सूर्पनखा काँ समुचित, भेलथिन भाय ॥ ३६ ॥
रूप भयङ्कर तिनकर, कहल न जाय ॥ ३७ ॥

॥ दोबय छन्द ॥

लय त्रिशूल कर फिरल भयङ्कर कालमूर्ति जनु आबै ॥ ३८ ॥
नाशा-श्वास-पवन सौँ कपिगण योजन बहुत उड़ाबै ॥ ३९ ॥
एक जनक शक से नहि भेले, जे क्षण रण अटकाबै ॥ ४० ॥
प्रबल वेग चल प्रबह जेहन बह, कत कपि नभ लटकाबै ॥ ४१ ॥
नहि सुबाहु खरदूषण नहि हम, नहि कबन्ध वनचारी ॥ ४२ ॥
नहि हम शम्भु-धनुष जे तोड़लह, तथा ताटका नारी ॥ ४३ ॥
सूर्पनखा मारीच नीच नहि, जड़ जलनिधि नहि जानह ॥ ४४ ॥
रे रे राम विश्वबलमर्दन, कालमूर्त्ति मन मानह ॥ ४५ ॥

॥ चौपाइ ॥

वानर विकल देखल रघुनाथ। क्रुद्ध धनुष शर लेलनि हाथ ॥ ४६ ॥
फेकलनि अस्त्र एक वायव्य। अस्त्रसहित काटल भुज सव्य ॥ ४७ ॥

धीरे कपिपति सुग्रीव साहस करके कुम्भकर्ण के गले से निकले। उसकी नाक और कान काट लिये और आकाश में उड़कर अपनी छावनी में लौट आये; कुम्भकर्ण को मालूम ही न हुआ। ३४-३५ शूर्पणखा को जैसा होना चाहिए वैसा भाई मिल गया। कुम्भकर्ण के रूप की भयंकरता वर्णनातीत थी। ३७-३६ फिर कुम्भकर्ण हाथ में त्रिशूल लेकर लौटा। वह वैसा ही भयंकर लगता था जैसा मूर्तिमान काल आ रहा हो। ३८ वह नाक की साँस की हवा से कपियों को कई योजन दूर उड़ा फेंकता था। ३९ किसी को भी ऐसी ताक़त न थी कि लड़ाई में एक क्षण भी उसे अटकाये। ४० वह प्रलयकाल के तूफ़ान की तरह प्रबल वेग से आगे बढ़ता जाता था और कितने ही कपियों को आकाश में फेंक लटका देता था। ४१ उसने राम से कहा— "ओ राम, न मैं सुबाहु हूँ, न खर-दूषण और न जंगली कबन्ध। ४२ न मैं शिवजी का वह धनुष हूँ जिसे तुमने तोड़ा और न मैं नारी ताटका हूँ। ४३ न मैं शूर्पणखा हूँ, न अधम मारीच हूँ और न जड़ समुद्र हूँ। ओ राम, मुझे तुम दुनिया भर की ताक़त को मसल देने में समर्थ प्रत्यक्ष काल समझो, काल!" ४४-४५ जब राम ने देखा कि कपि लोग घबरा गये हैं तब क्रुद्ध हो स्वयं हाथ में धनुष-बाण लिया। ४६ उन्होंने एक वायव्य-अस्त्र चलाया और उससे कुम्भकर्ण की अस्त्र-सहित बायीं

खसल हाथतर कपि जे पड़ल। रहि गेल ठामहिँ नहि संचरल॥ ४८॥
राक्षस लय कर शाल विशाल। रघुवर पर दौड़ल तत्काल॥ ४९॥
इन्द्र-अस्त्र प्रभु मारल ताहि। शालसहित कटि गेल तनि बाँहि॥ ५०॥
भुजयुग-रहित चलल खिसिआय। रावण काँ प्राणाधिक भाय॥ ५१॥
अर्द्धचन्द्र दुइ सौँ बुझि बयर। काटि देल प्रभु तनिकर पयर॥ ५२॥
छिन्नचरण महि खसला ढेर। ओँघड़ायित दौड़ल से फेर॥ ५३॥
बड़बामुह सन मुह बड़ बाय। बिधु लग राहु ग्रसय जनु जाय॥ ५४॥
शिलाखण्ड प्रभु शरपर लेथि। कुम्भकर्ण-मुह भरि भरि देथि॥ ५५॥
तदपि न मरय करय सञ्चार। ओँघड़ायितहुँ कपिदल संहार॥ ५६॥
तखन ऐन्द्रधनु अशनि समान। राम धनुष पर कर सन्धान॥ ५७॥
फेकल कयल तनिक संहार। वासव वृत्र समर व्यवहार॥ ५८॥
कुम्भकर्ण शिर लङ्का-द्वारि। तनिक पतन तन वारिधि बारि॥ ५९॥
थर तल जलचर जे पड़ि गेल। तनिकर मरण अकालहिँ भेल॥ ६०॥
देखल समर अमर-गण गगन। कयलनि सुमन-वृष्टि मन-गगन॥ ६१॥
खग पन्नग मुनिगण गन्धर्व्व। अतिशय हृदय हर्ष भर सर्व्व॥ ६२॥

बाँह कट गयी। ४७ उसकी कटकर गिरी बाँह के नीचे जो-जो कपि पड़े वे बिना हिले-डुले ही जहाँ थे वहीं निष्प्राण रह गये। ४८ कुम्भकर्ण बचे हाथ में साल का भारी पेड़ लेकर तुरन्त राम पर टूट पड़ा। ४९ राम ने इन्द्र-अस्त्र चलाया और उससे साल के पेड़-सहित उसकी दाहिनी बाँह कट गयी। ५० तब रावण का प्राण से भी अधिक प्यारा भाई दोनों बाँहों से रहित हो गुस्से से आगबबूला हो आगे बढ़ा। ५१ रामचन्द्र ने देखा कि अब भी यह वैर कर रहा है तो दो अर्धचन्द्राकार तीरों से उसके दोनों पाँव काट दिये। ५२ पाँव कटने पर वह लोथ हो धरती पर गिर पड़ा, लेकिन फिर भी लुढ़कते हुए आगे बढ़ा। ५३ बड़वा-मुख (नरक के उत्तरी द्वार) की भाँति उसका मुँह फैला हुआ था। लगता था जैसे राहु चाँद को ग्रसने के लिए जा रहा हो। ५४ राम बड़े-बड़े पत्थरों को तीर पर लेते और उनसे कुम्भकर्ण का मुँह भरते जाते थे। ५५ फिर भी वह मरा नहीं, बल्कि चलता-फिरता ही रहा और लुढ़कते हुए भी कपियों को कुचलता फिरता था। ५६ तब राम ने जैसे इन्द्र के धनुष पर वज्र छोड़ा जाता है उसी तरह अपने धनुष पर तीर चढ़ाया और ५७ चला दिया। उससे कुम्भकर्ण का संहार कर दिया, जैसे इन्द्र ने वृत्र का संहार किया था। ५८ कुम्भकर्ण का सिर लंका के सिंहद्वार पर गिरा और उसका शरीर समुद्र के पानी में गिरा। ५९ जो भी जल-जन्तु उसके धड़ के नीचे पड़े वे सभी बेमौत मारे गये। ६० आकाश से देवता लोग युद्ध देख रहे थे। वे राम की जीत से आनन्दमग्न हो फूल बरसाने लगे। ६१ पक्षी,

नारद मुनि अयला तहिठाम। स्तुति कर धन्य धन्य प्रभु राम॥ ६३॥
बिजय सबदसर बजबथि बीण। धरणीभार कयल प्रभु क्षीण॥ ६४॥
कुम्भकर्ण सन मारल शूर। सज्जन मुनिक मनोरथ पूर॥ ६५॥
के छथि जनिकाँ देल न कष्ट। सुखित आज छथि दिग्गज अष्ट॥ ६६॥
अपनेँक तकलेँ हो संसार। मुनलय आँखि सृष्टि-संहार॥ ६७॥
प्रकृति पुरुष साक्षी से काल। व्यक्ताव्यक्त त्रिगुणमय जाल॥ ६८॥
सबहिक मूलभूत अहँ राम। बार बार तँ करी प्रणाम॥ ६९॥
स्मरण नाम कीर्त्तन गुण करथि। कथा-कथन से संसृति तरथि॥ ७०॥
सभ-ज्ञाता काँ हम की कहब। सुर मिलि नभ सौँ देखयित रहब॥ ७१॥
कृपा करू जाइत छी आज। सिद्धि कयल धरणी सुरकाज॥ ७२॥
चलल मनोगति विधिक समाज। सुरमण्डलि सुख गगन विराज॥ ७३॥
जय अतिबल रघुबर भगवान। भूमि गगन धुनि पूरित कान॥ ७४॥
जय जय शब्द करय कय जेर। वानर अरिगण काँ नहि टेर॥ ७५॥
कुम्भकर्ण काँ मारल राम। पर्व्वत सन शिर अछि एहिठाम॥ ७६॥

सर्प, मुनि और गन्धर्व सबों के हृदय भारी हर्ष से लबालब भर गये। ६२ नारद मुनि वहाँ पहुँच गये। वे स्तुति करने लगे— "हे भगवान राम, आप धन्य हैं!" ६३ वे ऐन मौक़े पर वीणा पर विजय-ध्वनि बजाने लगे और बोले— "हे प्रभु, आपने धरती का भार दूर किया। ६४ आपने कुम्भकर्ण जैसे वीर राक्षस को मारा। आज भले लोगों और ऋषि-मुनियों की अभिलाषा पूरी हुई। ६५ कौन ऐसा है जिसे इस राक्षस ने कष्ट नहीं दिया? आज आठों दिग्गज सुखी हैं। ६६ आप ही देखते हैं तो दुनिया बन जाती है और जब आप आँखें बन्द कर लेते हैं तो प्रलय हो जाता है। ६७ आप ही प्रकृति, पुरुष और काल हैं। आप ही सांख्य के अनुसार व्यक्त और अव्यक्त तथा त्रिगुणात्मक जगज्जाल हैं। ६८ हे राम, आप सबों के मूल हैं, इसलिए आपको बार-बार प्रणाम करता हूँ। ६९ जो आपका स्मरण करता, जो आपके नाम और गुणों का कीर्तन करता और आपके चरित्र की कथा सुनता है, वह संसार-सागर से तर जाता है। ७० आप सर्वज्ञ हैं, अतः आपसे मैं क्या कहूँ? मैं देवताओं के साथ होकर आकाश से देखता रहूँगा। ७१ कृपा कीजिए, आज जाता हूँ। आपने धरती का और देवगण का काम पूरा किया।" ७२ यह कहकर नारद मुनि मन के समान गति से ब्रह्मा के पास पहुँचे जहाँ आकाश में देवताओं का दल जुटा था। ७३ 'भगवान महाबली रामचन्द्र की जय!' यह ध्वनि धरती और आकाश में कान-कान में भर गयी। ७४ कपि के अनेक दल जय-जयकार कर रहे थे। कपिगण शत्रु को टेरते नहीं। ७५ (किसी ने आकर संवाद दिया—)

सुनि से रावण भूमि लोटाय। कहि भ्राता-गुण शोक समाय ॥ ७७ ॥
क्षण-क्षण मूर्छा क्षण चैतन्य। बरनथि विशद सहज सौजन्य ॥ ७८ ॥
भेलहुँ आज उत्साह-विहीन। मानल गेलहुँ काल-अधीन ॥ ७९ ॥
निहत पितो विह्वल लङ्केश। शुनि मेघनाद पहुँचि तहि देश ॥ ८० ॥
परिहरु शोच पिता एहिठाम। हमरा आगाँ के थिक राम ॥ ८१ ॥
अतिबल जिबितहिँ छी घननाद। अपनेँ काँ नहि उचित विषाद ॥ ८२ ॥
स्वस्थ चित्त सौँ रहु महिपाल। हम श्रम करब हरब जञ्जाल ॥ ८३ ॥
अपनेँक शत्रु-समूह सहारि। तौँ जानब हमरा शक्कारि ॥ ८४ ॥
मेघनाद रण चलल सकोप। करब समर रघुवर-बल-लोप ॥ ८५ ॥
मोरहिँ वानर राकल द्वारि। भेल परस्पर भारी मारि ॥ ८६ ॥
मेघनाद अतिमाया धयल। रथ चढ़ि गगन महा-रव कयल ॥ ८७ ॥
रङ्ग एकर नहि लगइछ नीक। विकल सकल दल कह की थीक ॥ ८८ ॥
होइछ अस्त्र जते संसार। नभ सौँ बरिशय नानाकार ॥ ८९ ॥

"राम ने कुम्भकर्ण को मार डाला। उसका पहाड़ जैसा सिर द्वार पर यहाँ पड़ा है।" ७६ सुनते ही रावण धरती पर लोटने लगा। भाई के गुणों का बखान कर-करके वह शोक में लीन हो गया। ७७ क्षण-क्षण में बेहाश होता और फिर होश में आता था। उसकी सहज भलमनसाहत का विशद वर्णन करता था। ७८ वह विलाप करने लगा— "अब मेरा सारा जोश जाता रहा। आज मान गया कि मैं अब काल के वश हो गया हूँ।" ७९

युद्ध में मेघनाद का आना और तान्त्रिक साधना करना

चाचा कुम्भकर्ण को मृत और रावण को घबराया जान वहाँ मेघनाद आया और पिता को ढाढ़स देने लगा— ८० "हे पिता, यहाँ शोक मत कीजिए। मेरे सामने राम कौन होता है? ८१ मैं निजबल से जीतूंगा, इसलिए आपको दुःख करना उचित नहीं। ८२ हे राजा! आप चैन से रहिए। मैं ताक़त से इस संकट को दूर करूँगा। ८३ आपके सारे दुश्मनों को मैं मौत के घाट उतार दूंगा, तभी आप मुझे इन्द्रजित् समझिएगा।" ८४ इतना कहकर मेघनाद रोष के साथ निकल पड़ा और बोला— 'मैं युद्ध में राम की सारी सेना को मटियामेट कर दूंगा।" ८५ सुबह होते ही कपि-सेना ने दरवाज़े को रोक दिया। आपस में भारी लड़ाई मच गयी। ८६ मेघनाद ने एक बड़ी माया रची। वह रथ पर सवार हो आकाश में जाकर गरजने लगा। ८७ कपियों ने देखा, रंग अच्छा नहीं लगता। दल के सभी कपि एक-दूसरे से पूछने लगे— "अरे यह क्या हो रहा है? ८८ संसार में जितने प्रकार के अस्त्र होते हैं वे सभी तरह-तरह की आकृति में आकाश से गिर रहे हैं। ८९ जैसे

अविरल वारिद बरिसय नीर। तेहने बरष गगन सौं तीर॥ ९०॥
समर राम सङ्ग करय प्रताप। शर तन लाग सररि हो साप॥ ९१॥
वानर दल भय थर थर काँप। सगर समर भरि सापहिँ साप॥ ९२॥
साप लपटि सभहिक तन जाय। रह अवकाश न केओ पड़ाय॥ ९३॥
तखन प्रकट भेल पढ़यित गारि। थरिकल छह कय दिन कय मारि॥ ९४॥
एतगोट दर्प्प हमर पुर जार। अतिबल राक्षस काँ संहार॥ ९५॥
जाम्बवान कहलनि रे दुष्ट। जयबह कतय समर-सन्तुष्ट॥ ९६॥
मेघनाद शुनि कय मन क्रोध। रह रे वृद्ध वृद्ध-दुर्ब्बोध॥ ९७॥
बुढ़ भनि छोड़ल साहस छोड़। अपना बल काँ के कह थोड़॥ ९८॥
देखि प्रताप तदपि नहि ज्ञान। हम छी मेघनाद नहि आन॥ ९९॥
शूल चलाओल बचन झोँकि। जम्बवान लेल हाथेँ लोकि॥ १००॥
मारल शूल हृदय मे हाँकि। मूर्छित खसला शकथि न ताकि॥ १०१॥
समर-भूमि पद धय घिसिआय। लङ्का फेकि देल खिसिआय॥ १०२॥
हर्ष बिषाद नगर भरि भरल। रजनि जानि नहि जनसञ्चरल॥ १०३॥

बादल मूसलाधार पानी बरसाता है, उसी तरह आकाश से तीरों की वर्षा हो रही है। ९० यह तो राम के साथ लड़ने में भी अपना प्रताप दिखा रहा है। तीर देह में लगते ही साँप बनकर रेंगने लगते हैं। ९१ कपिदल डर से थर्राने लगा। सारी रणभूमि में साँप ही साँप फैल गये। ९२ ये साँप सबों के शरीर में लिपट जाते हैं। किसी को भागने का भी मौक़ा नहीं मिलता।" ९३ तब गाली बकते हुए वह मेघनाद प्रकट हुआ और बोला— "कई दिन लड़ाई करते-करते तुम्हें आदत लग गयी है। ९४ तुम्हें इतना घमंड हो गया कि मेरे नगर लंका को जला दिया और महाबली राक्षसों का संहार किया।" ९५ जाम्बवान ने जवाब दिया— "अरे बदमाश, लड़ाई से खुश होनेवाले तुम भागकर जाओगे कहाँ?" ९६ यह सुनकर मेघनाद ने क्रुद्ध हो कहा— "अरे बूढ़ा, वृद्ध होने पर ज्ञान नहीं रहता है। ९७ बूढ़ा समझकर मैंने तुम्हें छोड़ दिया। तुम ढिठाई मत करना। अपनी ताक़त को कौन कम कहता है? ९८ मेरा प्रताप देख लिया, फिर भी तुम्हारी आँखें नहीं खुली हैं। तुम नहीं जानते हो कि मैं मेघनाद हूँ?" ९९ इस बोल के झटके में ही मेघनाद ने बरछा चलाया। जाम्बवान ने उसे आकाश में ही हाथ से पकड़ लिया। १०० और उसी बरछे को मेघनाद की छाती को निशाना करके लौटा दिया। मेघनाद बेहोश हो गिर पड़ा। उसकी आँखें बन्द हो गयीं। १०१ जाम्बवान ने लड़ाई के मैदान में उसे पाँव पकड़ घसीटते हुए गुस्से के साथ लंका में फेंक दिया। १०२ सारे नगर में एक पक्ष में हर्ष और दूसरे पक्ष में बिषाद छा गया। रात समझकर कोई कहीं निकला नहीं। १०३ उधर अशोक वाटिका में राक्षसी

॥ रूपक दण्डक छन्द ॥

॥ सरमाक उक्ति ॥

नागपाश सौँ रण मे बाँधल
सीता तोहर भर्त्ता, उद्धर्त्ता ॥ १०४ ॥
प्रायः एको व्यक्ति नहि छूटल
जे सङ्कट काँ हर्त्ता, अरि मर्त्ता ॥ १०५ ॥
त्यागू मन सौँ पति-प्रत्याशा
पड़लहुँ शोकक गर्त्ता, रुचिकर्त्ता ॥ १०६ ॥
सरमा कहल सत्य कहयित छी
हमहुँ भेलहु दुःखार्त्ता, शुनि वार्त्ता ॥ १०७ ॥

॥ वसन्ततिलका छन्दः ॥

॥ सीता उक्ति ॥

हा राम लक्ष्मण कहू कत की करै छी ॥ १०८ ॥
माया-भुजङ्गमक बन्धन सौँ मरै छी ॥ १०९ ॥
हा स्पष्ट कष्ट हमरे सभ हेतु प्राप्त ॥ ११० ॥
अम्भोजबन्धु-कुल-कीर्त्ति-शशी समाप्त ॥ १११ ॥

॥ नाराचिका छन्द ॥

॥ तिरहुति ॥

पतिगति शुनिय जिवन थोर, फरकय वाम नयन मोर ॥ ११२ ॥
मुनिजन देखल कहल जत, नहि वैधव्य लिखल तत ॥ ११३ ॥

सरमा ने सीता से कहा— "हे सीता, तुम्हारा उद्धार करनेवाले तुम्हारे पति राम लड़ाई में नागपाश से बँध गया है। १०४ शायद ऐसा एक व्यक्ति भी नहीं बचा जो तुम्हारे शत्रु को मारकर तुम्हारी रक्षा करे। १०५ अब फिर अपने पति को प्राप्त करने की आशा मन से दूर करो। विधाता की इच्छा से तुम शोक के गड्ढे में गिर गयी। मैं सच कहती हूँ, यह समाचार सुनकर तुम्हारे दुःख से मैं भी दुखी हो गयी हूँ।" १०६-१०७ यह सुन सीता विलाप करने लगीं— "हा राम, हा लक्ष्मण, कहिए, आप कहाँ हैं? क्या कर रहे हैं? १०८ क्या आप माया के नागपाश में बँधकर मर रहे हैं? १०९ हाय, मुझे ही ये सारे कष्ट झेलने पड़े। ११० क्या सूर्यवंश को उजागर करनेवाला यशचन्द्र अस्त हो गया? १११ पति का हाल सुनकर तो लगता है कि उनका जीवन अब समाप्त होनेवाला है। पर मेरी बायीं आँख फड़क रही है, जो शुभसूचक है। ११२ जितने ऋषि-मुनियों ने मुझे देखा है, सबों ने कहा है कि मुझे वैधव्य नहीं लिखा है। ११३ राम युद्ध में कभी हारनेवाले नहीं हैं। वे शत्रु

समर-अजय रघुनन्दन, करता अरि-बल-खण्डन ॥ ११४ ॥
यदपि वचन सुनि दुस्सह, मन नहि अपन तेहन कह ॥ ११५ ॥

॥ जयकरी छन्द ॥

गरुड़ वाहन कयलनि राम । चलल विहगपति नभ बलधाम ॥ ११६ ॥
उड़यित उड़ि गेल बहुत पहाड़ । गलित होय पन्नग-कुल-हाड़ ॥ ११७ ॥
अयला तलय जतय रघुराज । तनि भय सौं भेल निर्भय काज ॥ ११८ ॥
खगपति खयलनि माया-व्याल । गरुड़क पूर भेल नहि गाल ॥ ११९ ॥
पक्ष-पवन-स्वन प्रलय घटाक । अति दुर्गति लङ्काक अटाक ॥ १२० ॥
सभ जन सुखित दुखित नहि एक । कयल विहगपति अमृतक सेक ॥ १२१ ॥
गिरिवर तरु कपि-दल लय जाय । मारथि राक्षस-भट खिसिआय ॥ १२२ ॥
सकल पड़ायल राक्षस बीर । समर एक नहि रहले थीर ॥ १२३ ॥
नहि मुइला ओ वरक प्रसाद । मेघनाद मन बहुत विषाद ॥ १२४ ॥
रावण-मुख देखि लज्जा आब । मन मन जाम्बवान गुन गाब ॥ १२५ ॥
त्रिकुटाचल-अन्तर-गिरि जाय । मेघनाद अभिचारि नुकाय ॥ १२६ ॥
अरुण वसन गल माला लाल । चन्दन सुमन विधान विशाल ॥ १२७ ॥
अर्द्धचन्द्र कुण्डक निर्माण । आमिष शोणित तत लय आन ॥ १२८ ॥

की सेना का संहार करेंगे ही। ११४ यद्यपि असह्य दुखदायी समाचार सुन रही हूँ, तथापि अपने मन में वैसी आशंका नहीं होती।" ११५ राम ने साँप का उपद्रव देखकर गरुड़ का आवाहन किया। बलवान गरुड़ आकाश में उड़ आये। ११६ उनके उड़ने से बही हवा के झोंके से कई पहाड़ उड़ गये। साँपों की हड्डी गलने लगी। ११७ गरुड़ वहाँ पहुँचे जहाँ राम थे। उनके डर से कपिदल निर्भय हो गये। ११८ गरुड़ उस माया रूपी साँप को खा गये, फिर भी उनके गाल भरे नहीं। ११९ उनकी पाँखों की हवा से जो आवाज़ हुई वह प्रलयकाल के बादल के गर्जन के समान थी। लंका के महलों का बुरा हाल हो गया। १२० कपिदल में हर कोई सुखी हो गया, किसी को भी काई शिकायत न रही। मानो गरुड़ ने अमृत की वर्षा कर दी। १२१ कपिगण पहाड़ और पेड़ उठा-उठाकर ले जाने और गुस्से के साथ उससे राक्षस योद्धाओं को पाटने लगे। १२२ राक्षसदल के सारे वीर सैनिक भाग गये। मैदान में एक भी अड़ा न रहा। १२३ वर के प्रभाव से वह मेघनाद मरा तो नहीं, उसका मन बहुत घबरा गया। १२४ रावण को अपना चेहरा दिखाने में उसे आज लगी। मन ही मन वह जाम्बवान की बड़ाई करने लगा। १२५ तान्त्रिकप्रवर मेघनाद त्रिकूट पर्वत की भीतरी पहाड़ियों में जा छिपा। १२६ लाल वस्त्र पहन लिया। गले में लाल माला डाल ली। सविस्तार विधान के अनुसार चन्दन और फूल जुटाया। १२७ अधचन्द्र के

काठ बहेड़क कयल से ढेर। होम करय लगलाह सबेर॥ १२९॥
होमक धूम गगन घन- प। अनुष्ठान कर चूपहि चूप॥ १३०॥
सुनल विभीषण से सभ कर्म्म। रघुनन्दन सौं कहलनि मर्म्म॥ १३१॥
प्रभु कहइत छी हम कर जोड़ि। आन लड़ाइ आइ दिय छोड़ि॥ १३२॥
होमारम्भ कयल घननाद। जकर धूम अम्बर आछाद॥ १३३॥
जौं सम्पन्न होयत मख-काज। अजय होयत सुरपति-जित आज॥ १३४॥
लक्ष्मण चलथु सैन्य सभ सङ्ग। करथु प्रथम तनिकर मख-भङ्ग॥ १३५॥
मारथु तनिका लड़ि सङ्ग्राम। आज्ञा देल जाय प्रभु राम॥ १३६॥
राम कहल भल हमहीं जयब। सुरपति-अरि रण-सन्मुख हयब॥ १३७॥
अनल-अस्त्र तनिकाँ हम मारि। बन-दव सम तनिकाँ देब जारि॥ १३८॥

॥ सोरठा ॥

कहल हाथ दुहु जोड़ि, शुनल विभीषण प्रभु-वचन॥ १३९॥
श्री लक्ष्मण काँ छोड़ि, मरत न रावण-सुत समर॥ १४०॥
बारह वर्ष विहीन, निद्राहार-विहार सौं॥ १४१॥
कयल विरञ्चि अधीन, जे तनि कर मर इन्द्रजित॥ १४२॥

आकार के कुण्डल बनवाए। रक्त और मांस वहाँ ले आया। १२८ बहेड़े की सूखी लकड़ी जमा की। सवेरे हवन शुरू कर दिया। १२९ हवन का धुआँ बादल-जैसे आसमान में छा गया। वह चुपके से तान्त्रिक अनुष्ठान करने लगा। १३० यह सारी योजना विभीषण को मालूम हो गयी। यह रहस्य की बात उन्होंने राम को बता दी। १३१ उन्होंने कहा— "हे प्रभु राम, मैं हाथ जोड़कर कहता हूँ। आज दूसरी लड़ाई छोड़ दीजिए। १३२ मेघनाद ने हवन शुरू किया है जिसका धुआँ आसमान में छाया हुआ है। १३३ यह यज्ञ यदि पूरा हो जाएगा तो इन्द्रजित मेघनाद आज अमर हो जाएगा। १३४ सारी सेना को साथ लेकर लक्ष्मण चलें और सबसे पहले उसके यज्ञ का भंग करें। १३५ वहाँ लड़ाई छेड़कर उसका वध करें। हे प्रभु राम आप इसके लिए आज्ञा दीजिए।" १३६ राम ने कहा— "अच्छी बात है। मैं खुद जाऊँगा और मेघनाद से युद्ध में सामना करूंगा। १३७ उसके ऊपर अग्न्यस्त्र चलाऊँगा और वन में लगी आग की तरह उसे जला डालूंगा।" १३८ राम की बात सुनकर विभीषण ने दोनों हाथ जोड़कर कहा— १३९ "रावण का लड़का मेघनाद लक्ष्मण के सिवा और किसी के हाथ से नहीं मर सकता है। १४० जो व्यक्ति बारह वर्षों तक निद्रा, आहार और विहार के बिना रहकर ब्रह्मा को वश में करेगा, उसके हाथ से इन्द्रजित् मेघनाद का मरण होगा। १४१-१४२ लक्ष्मण जब से अयोध्या से चले, तभी

निद्रादिक परित्याग, अवधि अयोध्यागमन सौँ ॥ १४३ ॥
लक्ष्मण-विषय विराग, रघुनन्दन-सेवा-निरत ॥ १४४ ॥
मरता लक्ष्मण-हाथ, मेघनाद लङ्केश-सुत ॥ १४५ ॥
शुनु शुनु प्रभु रघुनाथ, अपनँक आज्ञा पाबि कें ॥ १४६ ॥

॥ इति श्री चन्द्रकवि-विरचिते मिथिला-भाषा रामायणे लङ्काकाण्डे अष्टमोऽध्यायः ॥

॥ अथ नवमोऽध्यायः ॥

॥ जयकरी छन्द ॥

कहल बिभीषण समय विचार। प्रभु सर्व्वज्ञ कयल स्वीकार ॥ १ ॥
लक्ष्मण काँ कहलनि अहं जाउ। खल बधि समर अमर बनि आउ ॥ २ ॥
हनुमदादि यूथप सङ्ग रहथि। सन्मुख तनिक प्रहार जे सहथि ॥ ३ ॥
जाम्बवान सङ्ग रहता बूढ़। तनिकहि डरय डराइछ मूढ़ ॥ ४ ॥
सङ्ग बिभीषण मन्त्री लेथु। सकल देखाय बाट ओ देथु ॥ ५ ॥
पर्व्वत कतय बिवर कोन ठाम। बुझल बिभीषण कें निज गाम ॥ ६ ॥
कपिदल कति अर्व्वुद सङ्ग्राम। चलल सङ्ग कहि जय जय राम ॥ ७ ॥
शुनि लक्ष्मण रघुवरक निदेश। प्रभु-प्रसाद कहलनि से वेष ॥ ८ ॥

से रामचन्द्र की सेवा में लगे निद्रा आदि का परित्याग किये हुए हैं और विषय-भोग से विरत हैं। १४३-१४४ इसलिए रावण का बेटा मेघनाद लक्ष्मण के हाथ से मरेगा। १४५ हे प्रभु राम! सुनिए। आप उन्हें आज्ञा दीजिए। १४६

॥ मैथिल चन्द्रकवि-विरचित मिथिला-भाषा रामायण में लंकाकाण्ड का आठवाँ अध्याय समाप्त ॥

नवाँ अध्याय

मेघनाद की तान्त्रिक साधना में बाधा पड़ना और उसका वध

विभीषण ने जो समयानुकूल सुझाव दिया, उसे सर्वज्ञ राम ने स्वीकार किया। १ उन्होंने लक्ष्मण से कहा— "तुम जाओ, उस दुष्ट को लड़ाई में मारकर अमर हो लौट आओ। २ हनुमान आदि दलपति साथ रहेंगे जो उसके सामने अस्त्र-प्रहार को रोक सकें। ३ वृद्ध जाम्बवान साथ जाएँगे, क्योंकि वह मूर्ख उन्हीं से डरता है। ४ मंत्री विभीषण को साथ कर लें जो सही रास्ता बताएँगे। ५ विभीषण का वह अपना गाँव है इसलिए उन्हें मालूम है कि कहाँ पहाड़ है और कहाँ खोह? ६ लड़ने के लिए कई अरब वानरों का दल 'जय जय राम' कहते हुए प्रस्थान करेगा।" ७ राम का यह निर्देश सुनकर लक्ष्मण ने कहा— "ठीक है, प्रभु की जैसी कृपा हो।" ८ ऐसा कहकर

कयल राम काँ जाय प्रणाम। सुरपति-अरि-मारण मनकाम॥ ९॥
जौं मोर रघुवर-किङ्कर नाम। तौं घननाद जितब सङ्ग्राम॥ १०॥
आज समर शर अरि काँ मारि। स्नान करब भोगावति - वारि॥ ११॥
सहित विभीषण कर शर चाप। चलल महाबल विजय प्रताप॥ १२॥

॥ भुजङ्गप्रयात छन्द ॥

विदा भेलि आबैछ लङ्केश-सेना।
चतुर्दिक्षु देखू घटाटोप जेना॥ १३॥
करू यत्न सौमित्रि छत्री अहाँ छी।
सुरारीन्द्र-संहारकर्त्ता जहाँ छी॥ १४॥
सुरेशारि ई क्षेत्र मे वीर गुप्ते।
करंये महाहोम से होय लुप्ते॥ १५॥
दशग्रीव-भ्रातक से शूनि बानी।
कहै छी समीचीन ई लेल मानी॥ १६॥
धनुर्व्वाण सन्धानि सौमित्रि मारैं।
चटाचट्ट दैत्यन्द्र-सेना-कपारैं॥ १७॥
हनूमान ऋक्षेश यूथेश पक्का।
महाशैल ओ वृक्ष लै मार धक्का॥ १८॥
तथा शत्रु-सेना महाअस्त्र मारै।
महायुद्ध संघट्ट केओ न हारै॥ १९॥

उन्होंने इन्द्रजित् को मारने की कामना से राम को प्रणाम किया और बोले— ९ "यदि मैं वास्तव में राम का सेवक कहलाता हूँ तो लड़ाई में मेघनाद को अवश्य जीतूंगा। १० आज युद्ध में शत्रु को मारकर भोगावती नदी में स्नान करूँगा।" ११ इतना कहकर विभीषण के साथ हाथ में धनुष-बाण लिये महाबली लक्ष्मण विजय-कीर्ति करने चल पड़े। १२ विभीषण ने कहा— "रावण की सेना प्रस्थान कर चली आ रही है। लगता है जैसे चारों ओर बादल छा गया हो। १३ हे लक्ष्मण, आप सतर्क रहिए। आप क्षत्रिय हैं और इन्द्र के शत्रु मेघनाद का संहार करनेवाले हैं। १४ इसी क्षेत्र में जहाँ अभी आप हैं, इन्द्रजित वीर मेघनाद गुप्त रूप से महाहोम कर रहा है। ऐसा प्रयास कीजिए कि वह यज्ञ ध्वंस हो जाए।" १५ रावण के भाई विभीषण की यह बात सुनकर लक्ष्मण ने कहा— "आप ठीक कहते हैं। मैं इसे स्वीकार करता हूँ।" १६ तब लक्ष्मण निशाना साधकर तीर चलाने लगे, जो रावण की सेना के माथे में चटाचट लगते थे। १७ पक्के दलपति हनुमान और जाम्बवन्त पत्थर की बड़ी-बड़ी चट्टानों और पेड़ों से धक्का देने लगे। १८ उधर शत्रु की सेना भी बड़े-बड़े अस्त्र चलाती, घमासान लड़ाई होती और कोई

हनूमान छो कौशलाधीश-दासे।
महानन्द सौं भाषि विद्वेषि नाशै ॥ २० ॥
महावीर सद्वीरता मध्य पूरा।
कते शत्रु सेना मिलायोल धूरा ॥ २१ ॥
कहाँ सौं चलय महाधूम-धारे।
त्वरा जाय देखो करू से विचारे ॥ २२ ॥

॥ नाराच छन्द ॥

चलू चलू महागुहा कि होम ओ करैछ को ॥ २३ ॥
लगैछ आबि दुष्टगन्धि आगि मे धरैछ की ॥ २४ ॥
तहाङ्गदादि जोर सोर मार आँखि कान मे ॥ २५ ॥
लड़ाइ सौं पड़ाय इन्द्रजीत ठक्क ध्यान मे ॥ २६ ॥

॥ चामर छन्द ॥

छोड़ छोड़ ठक्क बक्क-ध्यान होम गाढ़ रे ॥ २७ ॥
चापबाण हाथ लै अनन्त द्वार ठाढ़ रे ॥ २८ ॥
आज वीरताक बेरि मेघनाद तोर रे ॥ २९ ॥
बाप काँ बँधाय के पड़ाय पाप चोर रे ॥ ३० ॥

॥ चौपाइ ॥

मेघनाद गञ्जन सह ढेर। इन्द्रादिक काँ जे नहि टेर ॥ ३१ ॥
सहि धिक्कार गारि ओ मारि। छोड़ल होम चलल शक्कारि ॥ ३२ ॥

भी पक्ष टस-मस नहीं होता। १९ 'मैं राम का दास हनुमान हूँ' इस तरह परम आनंद के साथ घोषणा करते हुए हनुमान शत्रु का संहार करने लगे। २० वीरता में अद्वितीय महाबली हनुमान ने बहुत सी शत्रु-सेना को धूल में मिला दिया। २१ विभीषण ने कहा— "धुएँ का यह विशाल गुब्बारा कहाँ से निकल जा रहा है? ऐसा निर्णय कीजिए कि उसे जल्द जाकर देखा जाय। २२ चलिए, चलते चलिए। लगता है वह इसी बड़ी गुहा में हवन करता है। २३ वह न जाने आग में क्या झोंक रहा है, बदबू आ रही है? २४ अब उसकी आँखों और कानों में तीर, गदा आदि ज़ोर-ज़ोर से मारते जाइए। २५ लड़ाई के मैदान से भागकर वह मेघनाद यहाँ बक-ध्यान लगाए बैठा है। २६ अरे रे वंचक, इस झूठी गहरी समाधि और इस होम को छोड़ो। २७ धनुष-बाण हाथ में लिये शेषावतार लक्ष्मण तुम्हारे दरवाज़े पर खड़े हैं। २८ अरे मेघनाद, आज तुम्हें अपनी वीरता दिखाने का वक़्त आया है। २९ बाप को बँधाकर कौन पापी चोर इस प्रकार भागता है?" ३० जो मेघनाद इन्द्र आदि को भी परवाह नहीं करता था वह आज इस प्रकार गजन सुन रहा है। ३१ धिक्कार,

घर घर धरकंट मरकंट गोल। आयल पशु बिनु कौड़िक मोल ॥ ३३ ॥
होम विघ्न कय वानर लोक। हँसि बहरायल एकहि झोंक ॥ ३४ ॥
मेघनाद देखल बहराय। जय-जय-कार ध्वजा फहराय ॥ ३५ ॥
देखल निज दल अदित रङ्ग। वानर भालुक कटक अभङ्ग ॥ ३६ ॥
रथपर चढ़ल धनुष शर हाथ। कहल कतय आबथु रघुनाथ ॥ ३७ ॥
क्षुद्र कीश थिक रह तोर भाग। वानर पर शर हमर न लाग ॥ ३८ ॥
सुरपति - वारण - कुम्भ विदार। लज्जावश न करय सञ्चार ॥ ३९ ॥
हे सौमित्रि हमर विष रोष। नहि देखल छौ को भरि पोष ॥ ४० ॥
मेघनाद थिक हमरे नाम। जयबह कतय विषम सग्राम ॥ ४१ ॥
तहाँ विभीषण कां देखि ठाढ़। निष्ठुर वचन कोप मन बाढ़ ॥ ४२ ॥
उचिती पिती कहू कत आज। कुलघातक पातक नहि लाज ॥ ४३ ॥
लङ्का जन्म ततहि सभ कर्म। छाड़ि देल निज वंशक धर्म ॥ ४४ ॥
लङ्केश्वर सन छोड़ल भाय। को छी आनक भृत्य कहाय ॥ ४५ ॥
पुत्रक विषय विषम विद्रोह। केहन हृदय भेल नहि मन मोह ॥ ४६ ॥

गाली और मार सहते-सहते अन्त में वह मेघनाद होम को छोड़ लड़ने के लिए विदा हुआ। ३२ वह बोला— "पकड़ो, इन बेशर्म बन्दरों के दल को पकड़ो! ये हमारे आहार के पशु बिना क़ीमत के आ गये हैं।" ३३ बन्दर होम में विघ्न डालकर एक ही जत्थे में निकल भागे। ३४ मेघनाद ने बाहर आकर देखा, राम का जय-जयकार हो रहा है और ध्वजाएँ फहरा रही हैं। ३५ उसने देखा कि उसकी अपनी सेना का बुरा हाल है और बन्दरों-भालुओं के दल डटे हुए हैं। ३६ वह रथ पर सवार हो, हाथ में तीर-धनुष लिये निकला और बोला— "कहाँ है, आवे अब राम मेरे सामने? ३७ अरे, बन्दर तो क्षुद्र जन्तु है। तुम लोग रहो। तुम भाग्यवान हो, क्योंकि मेरा तीर बन्दर पर नहीं चलता है। ३८ जिसने इन्द्र के हाथी ऐरावत के मस्तक को चीरा है वह मेरा तीर तुम पर चलते लजाता है। ३९ हे लक्ष्मण, तुमने मेरा ज़हर-सा क्रोध पूरा-पूरा देखा नहीं है क्या? ४० मेरा ही नाम है मेघनाद। तुम जाओगे कहाँ? अब देखो दाँत खट्टे करनेवाली लड़ाई।" ४१ फिर वहाँ विभीषण को खड़ा देखकर उसके मन में गुस्सा और भी बढ़ गया तथा वह निष्ठुर वचन कहने लगा— ४२ "चाचा, आज मैं क्या सत्कार का विनय-वचन कहूँ? आप अपने ही कुल को नाश करने का पाप कर रहे हैं। लज्जा नहीं आती। ४३ लका में जन्म लिया और वही सभी कर्म किए; फिर भी आपने अपने कुल-धर्म को त्याग दिया। ४४ लकेश्वर रावण-जैसे भाई को छोड़ दिया। दूसरे का नौकर कहाकर क्या जी रहे हैं? ४५ आपने अपने बेटे, भतीजे से बुरी तरह विद्रोह किया। कैसा है आपका कलेजा? मन में कुछ

अहाँ कयल निज वंश-विनाश। राजा बनब एहन मन आश ॥ ४७ ॥
करयित छलहुँ अजय हम याग। अहाँ देखाओल गत-अनुराग ॥ ४८ ॥
ई कहि लक्ष्मण देखल वीर। हनुमत्पृष्ठ चढ़ल रण-धीर ॥ ४९ ॥
रथ-वर चढ़ल कुपित घननाद। उद्यत-अस्त्र कहल दुर्व्वाद ॥ ५० ॥
वानर तोर रुधिर-पय-पान। करत हमर शर सर्प्पसमान ॥ ५१ ॥
लक्ष्मण धनुष-बाण कर सज्ज। वृथा तोर बल रे निर्ल्लज्ज ॥ ५२ ॥
लक्ष्मण बाण मर्म्म मे मार। भेल घननाद रहित सञ्चार ॥ ५३ ॥
जागल एक मुहूर्त्त बिताय। मन-वैकल्य कहल की जाय ॥ ५४ ॥
लक्ष्मण काँ देखल छथि ठाढ़। कहि कटु कथा कोप मन बाढ़ ॥ ५५ ॥
हमर शूरता पहिला बेरि। बुझि नहि पड़लहु तोहरा फेरि ॥ ५६ ॥
समर-विभव हम देबहु देखाय। शपथ थिकौ नहि जाह पड़ाय ॥ ५७ ॥
कहि लक्ष्मण काँ शर से सात। कयल प्रहार ससरि किछु कात ॥ ५८ ॥
उग्र बाण हनुमानक काय। सात लगौलक मर्म तकाय ॥ ५९ ॥
द्विगुण विभीषण पर कय कोप। कत शर मारल जिब आरोप ॥ ६० ॥

भी मोह-ममता न हुई ? ४६ आपने अपने ही कुल का नाश किया। इसमें राजा बनना ही आपका मंशा था। ४७ मैं अजय-यज्ञ कर रहा था (जो पूरा होने पर मुझे कोई जीत न सकता); पर आपने स्नेह को तिलांजलि देकर राम को दिखा दिया।" ४८ इतना कहने के बाद मेघनाद ने देखा कि वीर व रणधीर लक्ष्मण हनुमान की पीठ पर सवार हैं। ४९ मेघनाद क्रुद्ध हो एक अच्छे रथ पर सवार हुआ। हथियार उठाए ललकारने लगा— ५० "अरे बन्दरो, सर्प के समान मेरा तीर तुम लोगों का लहू रूपी दूध पिएगा।" ५१ लक्ष्मण ने धनुष पर तीर चढ़ाते हुए कहा— "अरे बेहया तुम बेकार अपनी ताक़त दिखाते हो। ५२ लक्ष्मण ने मेघनाद के मर्मस्थल में वह तीर मारा। लगते ही मेघनाद बेहोश हो गया। ५३ फिर एक घड़ी के बाद जागा। उसके मन की विकलता कही नहीं जा सकती है। ५४ सामने लक्ष्मण को खड़ा देखा। मन में क्रोध तेज हो गया और वह कटु वचन बोलने लगा— ५५ "अरे, पहली बार की लड़ाई में तुम्हें मेरी वीरता समझ में न आयी। ५६ इस बार मैं दिखा दूँगा कि लड़ाई में मुझमें क्या ताक़त है ? तुमको सौगन्ध है, मैदान से भागना नहीं।" ५७ ऐसा कहकर उसने कुछ बगल में खिसककर सात तीर मारे। ५८ फिर सात तेज तीर हनुमान के मर्मस्थलों में लगाये। ५९ फिर दूने गुस्से से जी-जान लगाकर विभीषण को अनगिनत तीर लगाये। ६० लक्ष्मण ने ललकारते हुए कहा— "अरे मेघनाद, अब तुम्हारी

॥ घनाक्षरी छन्द ॥

लक्ष्मण कहल ललकि मेघनाद तोर
थोड़ अछि आयु की समर मे समटबैं ॥ ६१ ॥
दशमुख-बाल बड़ गोट अछि गाल तोर
थोड़ काल मध्य महाकाल-गाल अटबैं ॥ ६२ ॥
हटबैं न युद्ध सौं विरुद्ध अस्त्र कटबैं जौं
चटबैं महासुरा कतेक गप्प छटबैं ॥ ६३ ॥
ठट्ठबैं कुठाठ तौं समर भूमि लटबैं तौं
बाण ओ कृपाण सौं काँकड़ि जकाँ फटबैं ॥ ६४ ॥

॥ चौपाइ ॥

मेघनाद शर कयल प्रहार। लक्ष्मण पर बड़ कोप हजार ॥ ६५ ॥
भेल कवच-विनु लक्ष्मण अङ्ग। लक्ष्मण कयल हुनक से रङ्ग ॥ ६६ ॥
युद्ध परस्पर केओ नहि हार। तन शोणित बह निर्झर धार ॥ ६७ ॥
लक्ष्मण तखन हनल शर पाँच। सारथि रथ न तुरग एक बाँच ॥ ६८ ॥
धनुष आन से आनल हारि। लक्ष्मण काटल तिनि शर मारि ॥ ६९ ॥
मेघनाद काँ रहल न चाप। शर सौं जर्जर थर थर काप ॥ ७० ॥

आयु थोड़ी रह गयी है। युद्ध में क्या सामना कर सकोगे ? ६१ अरे रावण के बेटे, तुम बहुत गाल बजाते हो। थोड़ी ही देर में तुम महाकाल के गाल में समा जाओगे। ६२ अगर लड़ाई के मैदान से भागोगे नहीं, हथियार का जवाब हथियार से दोगे, बहुत अधिक दारू पियोगे, डींग हाँकोगे; ६३ और बदमाशी करोगे तो लड़ाई के मैदान में लिटा दिए जाओगे तथा बाणों और तलवारों के प्रहार से ककड़ी की तरह फट जाओगे।" ६४ यह सुनकर मेघनाद गुस्से से जल उठा और लक्ष्मण पर एक हजार तीरों की बौछार कर दी। ६५ लक्ष्मण का शरीर कवचहीन हो गया। लक्ष्मण ने भी उसका वैसा ही हाल किया। ६६ दोनों के बीच घमासान लड़ाई हुई। कोई हारने का नाम नहीं लेता। दोनों के शरीर से झरने की तरह लहू की धारा बहने लगी। ६७ तब लक्ष्मण ने पाँच तीर छोड़े। तीर लगते ही न सारथि रहा, न रथ और न एक भी घोड़ा। ६८ तब मेघनाद दूसरा धनुष ले आया और लक्ष्मण ने तीन ही तीरों में उस धनुष को भी काट दिया। ६९ अब मेघनाद के पास कोई धनुष न रहा। तीरों से उसका शरीर जर्जर हो गया और वह थर-थर काँपने लगा। ७० फिर उसने काफी हिम्मत करके दूसरा धनुष लिया और खींच-